[पूर्ण संख्या २२१] विज्ञापन-पत्र[1]

'आर्य्यदर्पण' शाहजहांपुर

इस नाम का एक मासिक पत्र उर्दू भाषा में आर्यसमाज शाहजहांपुर की ओर से प्रकाशित होता है, इसमें वेदादि सत्य-
५ शास्त्रानुकूल सनातन धर्म्मोपदेश विषय के व्याख्यान और आर्य्य-समाजों के नियम उपनियम आदि प्रकाशित होते हैं, जो उसके देखने से मालूम होगा। जो इस पत्र को लेना चाहें वे अपना नाम पते सहित लिख कर मुंशी बखतावर सिंह मैनेजर आर्य्यदर्पण शाहजहांपुर के पास भेज दें, पूर्वोक्त पत्र का वार्षिक मूल्य डाक
१० महसूल सहित ३।=) है। यह पत्र मेरी[2] समझ में भी बहुत अच्छा है।

—:०:—

[पूर्ण संख्या २२२] पत्र

बाबू माधोलालजी आनन्द रहो![3]

प्रकट हो कि चिट्ठी आप की नम्बरी १६४-२० सि०[4] की
१५ लिखी हुई पहुंची। सब हाल मालूम हुआ। आप के प्रश्न का उत्तर यह है कि हम १ अक्टूबर से १५ अक्टूबर तक मेरठ और दिल्ली रहेंगे। जो आप लोग १ अक्टूबर के पीछे मेरठ आ जाओगे तो फिर साथ-साथ दिल्ली चले जावेंगे।

यहां पर आर्य्यसमाज हो गया है और व्याख्यान भी होता है।
२० सब प्रकार से कुशल है। हम बहुत आनन्द में हैं। सब सभासदों को नमस्ते।

मेरठ हस्ताक्षर
२३ सि० ७८[5] दयानन्द सरस्वती

—:०:—

---

१. यह विज्ञापन भी ऋग्वेद और यजुर्वेदभाष्य के तीसरे अङ्क में
२५ छपा है।

२. 'मेरी' से अभिप्राय स्वामी जी की अपनी ओर है।

३. मूलपत्र आर्यसमाज दानापुर के संग्रह में सुरक्षित है।

४. इस संबंध में द्वितीय भाग के द्वितीय परिशिष्ट की टिप्पणी देखें।

५. आश्विन कृष्ण १२, सोमवार, सं० १९३५।

[पूर्ण संख्या २२३] पत्र-सूचना

[मुन्शी सेवाराम, नहर जिलेदार, मेरठ]

नहर के डिप्टी मजिस्ट्रेट हो जाने पर बधाई और वेदभाष्य की सहायतार्थ की गई प्रतिज्ञा का स्मरण कराना।[1]

—:o:—

[पूर्ण संख्या २२४] पत्र-सूचना ५

[बाबू रामाधार वाजपेई जी आनन्द रहो]

मेरठ में समाज स्थापित होने और दिल्ली जाने के सम्बन्ध में।[2]

—:o:—

[पूर्ण संख्या २२५] पत्र

न० ५५७ १

पंडित सुंदरलाल[3] रामनारायण जी आनंद रहो ! १०

विदित हो कि मुंबई से आपके पास को १००० अंक १५+१६ भूमिका के रवाना हो चुके हैं सो पहुंचे होंगे वा पहुंचेंगे, जब आपके पास पहुंच जावें तो हमको भी विदित कर दीजिये, और बहुत काल से कोई पत्र आप का नहीं आया, सो अब भेजिये, और लिखिये कि काशी से आई हुई पुस्तकें आपने संभाल ली वा नहीं और १५ बृजभूषणदास से भी पुस्तकें आलीं वा नहीं जो न आई हों तो जल्दी किसी की मार्फत मंगा लीजिये और पुस्तक भी संभाल कर हम को पत्र द्वारा विदित कर दीजिये।

हम बहुत आनंद में हैं।। हस्ताक्षर

५ अक्तूबर ७८ दयानन्दसरस्वती २०

दिल्ली

—:o:—

१. देखो—पं० देवेन्द्रनाथ जी संकलित जी० च० पृष्ठ ५०३। यह पत्र कहां से तथा कब लिखा गया यह अज्ञात है। अनुमान से यहां रखा है।

२. इस पत्र का संकेत पूर्ण संख्या २३१ के पृष्ठ २८८ पर छपे पत्र में है। मेरठ आर्य्यसमाज की स्थापना जिस दिन हुई थी, यह पत्र उसी दिन या २५ अगले दिन लिखा होगा। इस सम्बन्ध में द्वितीय भाग के द्वितीय परिशिष्ट में टिप्पणी देखें।

३. यह पण्डित सुन्दरलाल को भेजे गए पत्र की प्रतिलिपि है, जो परोपकारिणी सभा के संग्रह में विद्यमान है।

[पूर्ण संख्या २२६] पत्र

५३३

पण्डित श्यामजी कृष्णवर्म्मा आनन्द रहो[1]

विदित हो कि आपका पत्र मुम्बई से आया था, हाल मालूम
५ हुआ। आपने वहां जाकर काम देखा ही होगा कि क्या प्रवन्ध है। और **अब की बार भी वेदभाष्य के लिफाफे के ऊपर देवनागरी नहीं लिखी गई। जो कहीं ग्राम में अंग्रेजी पढ़ा न होगा तो अङ्क वहां कैसे पहुंचते होंगे** और ग्रामों में देवनागरी पढ़े बहुत होते हैं इसलिये तुम बाबू हरिश्चन्द्र चिन्तामणि जी से कहो कि अभी इसी पत्र के
१० देखते ही देवनागरी जाननेवाला मुंशी रख लेवें कि जो काम ठीक ठीक हो, नहीं तो वेदभाष्य के लिफाफों पर किसी से रजिस्टर के अनुसार ग्राहकों का पता किसी देवनागरी [जानने] वाले से नागरी में लिखा कर टपास[2] लिया करें। और तुम जाकर काम की खबरदारी करो कि वहां क्या हाल हो रहा है, और उनसे पुस्तकों का
१५ हिसाब भी जो कि अङ्क ग्राहकों के पास भेजे गये हों और जो उनके यहां मौजूद हों भिजवा दो। और बाबू साहब से कह दो कि जब वेद का प्रूफ भेजा करें तो उसके सा[थ] टाइटल पेज भी भेजा करें। और वहां के समाचार से बहुत जल्दी हम को पत्र द्वारा विदित कर दीजिये। मेरठ में आर्य्यसमाज हो गया है और
२० हम ३ अक्टूबर को दिल्ली आ गये हैं।[3] यहां पर कुशल है॥

हस्ताक्षर
दयानन्द सरस्वती
दिल्ली ७ अक्टू० ७८[4]

—:o:—

१. मूलपत्र प्रो० धीरेन्द्र वर्मा जी के संग्रह में सुरक्षित है।

२५ २. अर्थात् मिला लिया करें।

३. पं० लेखराम कृत उर्दू जीवनचरित पृ० ३८६, ४१० (हिन्दी सं० पृ० ४४६) तथा पं० घासीराम (पृ० ५०३) ने लिखा है कि श्री स्वामी जी ६ अक्टूबर को दिल्ली पहुंचे। यह भूल है। श्री स्वामी जी ३ अक्टूबर को दिल्ली पहुंचे थे, यह इस पत्र से स्पष्ट है।

३० ४. आश्विन शु० ११, सोमवार, सं० १९३५।

[पूर्ण संख्या २२७] विज्ञापन[1]

पाठकों को शुभ सूचना है कि इन दिनों पंडित स्वामी दयानन्द सरस्वती जी महाराज दिल्ली नगर में आये हुए हैं और सब्जी मण्डी के स्थान पर ला० बालमुकुन्द केसरीचन्द के बाग में ठहरे हुए हैं। जिस किसी को उनसे भेंट करनी हो वह पांच बजे शाम से लेकर दस बजे रात तक उनसे मिल सकता है, और वेदशास्त्र में जो कुछ पूछना अभीष्ट हो, पूछ सकता है। उक्त स्वामी जी कार्तिक बदी तीज, रविवार तदनुसार १३ अक्तूबर, सन् १८७८ से छत्ता शाह जी में स्थित यउहन साहब के मकान में, जिसमें सरकारी स्कूल है, ६ बजे सायं से ८ बजे रात तक व्याख्यान अर्थात् उपदेश किया करेंगे, जिन सज्जनों को उपदेश सुनना अभीष्ट हो, नियत मकान में नियत समय पर पधारें; क्योंकि इसको ईश्वरीय कृपा समझना चाहिये कि स्वामी जी महाराज यहां पधारे और अहोभाग्य हमारे कि वे यहां उपदेश करेंगे। और स्वामी जी महाराज इस प्रकार उपदेश करते हैं कि हम आर्य्यावर्त्ती लोग ही क्या, अपितु अमरीका अर्थात् इस दुनिया के हजारों निवासी[2] भी पवित्र वेद के अनुयायी होकर उनके धर्म का अनुकरण करने लगे हैं। इति।

-- :o: --

[पूर्ण संख्या २२८] पत्र

५९४

पण्डित श्यामजी कृष्णवर्म्मा आनन्द रहो![3]

विदित हो कि इससे पहले एक चिट्ठी आप के पास भेजी गई थी[4] पहुंची होगी। आज फिर आवश्यकता समझ कर आप को

---

१. यह विज्ञापन पं० लेखराम जी रचित जीवनचरित (हिन्दी सं० पृ० ४५०) से लिया है। जीवनचरित के अनुसार यह विज्ञापन ऋषि दयानन्द की ओर से दिया गया था। अत: इसे हमने यहां छापा है।

२. यहां कर्नल आल्काट आदि की ओर संकेत है।

३. मूल पत्र प्रो० धीरेन्द्र वर्मा जी के संग्रह में सुरक्षित है।

४. यह संकेतित चिट्ठी इससे पूर्व पूर्ण संख्या २२६ पर मुद्रित चिट्ठी ही है, अथवा उससे भिन्न किसी चिट्ठी की ओर संकेत है, यह कहना कठिन है।

लिखते हैं। **वह पत्र जिस के लिये मेरठ बात हुई थी शीघ्र भेज देना[1] और** जब तक तुम वहां रहो हम से पत्रव्यवहर करके वेदभाष्य के काम का तुम ही प्रबन्ध करो, क्योंकि बिना आप के यह काम न चलेगा, वा किसी देवनागरीवाले को वहां रखा दो क्योंकि बाबू
५ हरिश्चन्द्र चिन्तामणि जी अंग्रेजी में भी लिखते हैं तो भी छेदी-लाल को शादीलाल लिख देते हैं और न ग्राहकों के नम्बर लिखते हैं। विवेचन पूर्वक पहले पत्र[2] में भी आपको लिखा गया है आप इस का कुछ प्रबन्ध अवश्य शीघ्र ही कीजिये। और वहां के प्रबन्ध और सब हाल से विदित कीजिये और एक कामसूत्र का पुस्तक भी
१० हमारे पास भेज दीजिये। हम बहुत आनन्द में हैं॥

	हस्ताक्षर
१४ अक्टूबर ७८[3]	दयानन्द सरस्वती
	दिल्ली

—:o:—

[पूर्ण संख्या २२६] **पत्र**

१५ No. 597.

Dehllee, Kaboolee Gate
near the Subzimandee
in the Garden of
Lallah Keishree Chand & Balmookund
२० 15. 10. 78.[4]

To,
Baboo Madho Lall
Arya Samaj, Dinapore.[5]

Dear

I have received your letter No. 181 of 31st.[6] October

---

२५ १. स्थूल अक्षरों का पाठ श्री स्वामी जी के स्वहस्त का है।

२. पूर्णसंख्या २२६ का ७ अक्टूबर १८७८ का पत्र।

३. कार्तिक कृष्ण ३ सोम, सं० १९३५।

४. कार्तिक कृष्ण ४, मङ्गलवार, सं० १९३५।

५. मूल अंग्रेजी पत्र में 'दानापुर' के स्थान में 'दीनापुर' भूल से लिखा
३० गया है।

६. यहां १३ अक्टूबर के स्थान में ३१ भूल से लिखा गया है। क्योंकि ऋ० द० का यह पत्र १५ अक्टूबर का है।

to-day. I shall be glad to see you at Dehlee on the address, Which has [been] written up. And I have appointed an Arya Samaj in the Meerutt and always here I am delivering the Lecture of Vedic reform. I am well and hope you the same.

15-10-78[1]			Signature			५

[दयानन्द सरस्वती]

Dehllee

[भाषानुवाद]

५९७

देहली, काबुली गेट,

सब्जीमण्डी के समीप			१०

ला० केशरीचन्द और बालमुकुन्द के उद्यान में

१५-१०-७८[2]

बाबू माधोलाल, आर्य्यसमाज दीनापुर[3] को।

प्रिय !

आप का पत्र सं० १८१, ३१ अक्तूबर[4] का आज प्राप्त हुआ। देहली में उपरिलिखित पते पर आप को मिल कर मैं प्रसन्न हूंगा, और मेरठ में मैंने समाज स्थापित किया है।			१५

वैदिक धर्म पर मैं प्रतिदिन यहां व्याख्यान देता हूं। मैं प्रसन्न हूं और आप की प्रसन्नता चाहता हूं।

१५-१०-७८[1]			**हस्ताक्षर**			२०

दयानन्द सरस्वती

दिल्ली

—:o:—

## [पूर्ण संख्या २३०]		पत्र-सूचना

[ठाकुर रनजीतसिंह, जयपुर][5]

—:o:—

---

१. मूलपत्र आर्यसमाज दानापुर के संग्रह में सुरक्षित है।			२५

२. कार्तिक कृष्ण ४, मङ्गलवार, सं० १९३५।

३. मूल अंग्रेजी पत्र में 'दानापुर' के स्थान में 'दीनापुर' भूल से लिखा गया है।

४. यहां १३ अक्टूबर के स्थान में ३१ अक्टूबर भूल से लिखा गया है। क्योंकि ऋ० द० का यह पत्र १५ अक्टूबर का है।			३०

५. ठाकुर रनजीतसिंह द्वारा सावन १९४५ (?, आश्विन १९३५) को

[पूर्ण संख्या २३१] पत्र

५८८

बाबू रामाधार बाजपेई जी आनन्द रहो !

विदित हो कि आप को एक चिट्ठी मेरठ में आई थी, सो आपने लिखा था कि हम पुस्तकों का रुपया भेजेंगे परन्तु अब तक नहीं भेजा। इसलिये आपको लिखते हैं कि आप बहुत जल्दी हुण्डी बनवा कर हमारे पास यहां दिल्ली में भेज दीजिये, आवश्यकता के कारण से आपको लिखा गया है। और मेरठ में समाज होने तथा वहां से दिल्ली को गमन करने का समाचार आप को पहिले पत्र में लिख चुके हैं। हम बहुत आनन्द में हैं ॥[1]

हस्ताक्षर
दयानन्द सरस्वती

—:०:—

[पूर्ण संख्या २३२] पत्र-सारांश

[मुन्शी समर्थदान, अजमेर]

[अजमेर आना स्वीकार है]आप लोग मकान आदि का प्रबन्ध कर रखें। हम दिल्ली के काम से निपट कर आवेंगे और जब तुम मकान आदि की तैयारी कर लो तो हमको कहना (लिखना)। हम चलने से तीन चार दिन पहले एक पत्र लिखेंगे और जब [रेल पर] सवार होंगे

लिखी चिट्ठी के उत्तर का संकेत पं० लेखरामकृत जी० च० हिन्दी सं० पृष्ठ ४५० में मिलता है– 'तीसरे दिन मैं (जोशी रामस्वरूप) चिट्ठी का उत्तर लाया'। यह उल्लेख १३ अक्तूबर १८७८ के प्रसंग में मिलता है। अतः १५ अक्तूबर १८७८ को पत्र लिखा गया होगा।

१. प० रा० बा० ने लाल स्याही से १५ अक्तूबर १८७८ की तारीख (कार्तिक कृ० ४ सं० १९३५) स्वामी जी से इस पत्र के चलने की लिखी है [ता० १५-१०-७८ का ५९७ नं० का बाबू माधोलाल के नाम लिखा पत्र पृष्ठ २८६-२८७ पर तथा १४-१०-७८ का ५९४ नं० का श्यामजी कृष्ण वर्मा के नाम लिखा पत्र पृ० २८५ पर पहले छप चुका है], इसलिये इस पत्र की संख्या ५९८ होगी, ५८८ नहीं। मूल पत्र आर्य समाज लखनऊ के संग्रह में सुरक्षित है।

तब तार दे देंगे।[1]　　[दयानन्द सरस्वती]

—:o:—

[पूर्ण संख्या २३३]　　पत्र-सूचना

६०८

भूपालसिंह जी ——[2]
१५ या १६ अक्तूबर[3]　　५
दिल्ली

—:o:—

[पूर्ण संख्या २३४]　　पत्र-सारांश

[ठा० रणजीतसिंह जागीरदार अचरौल राज्य जयपुर]

हम कार्तिक में जयपुर आवेंगे।[4]

—:o:—

[पूर्ण संख्या २३५]　　पत्र-सारांश　　१०

[प्रबन्धक, वेदभाष्य कार्यालय, बम्बई]

७ ऋग्वेद और ६ यजुर्वेद रामाधार वाजपेयी के पास लखनऊ भेज दो।　　दयानन्द सरस्वती

—:o:—

---

१. यह सारांश पं० लेखरामकृत जी० च० हिन्दी सं० पृष्ठ ४५२-४५३ पर तथा पं० देवेन्द्रनाथ सं० जी० च० पृष्ठ ५०५ पर मिलता है।　　१५

२. इस पत्र का संकेत ठाकुर भूपालसिंह के पत्र में है। भूपालसिंह का पत्र पं० भगवद्दत्त जी के संग्रह में लाहौर में था। देशविभाजन के समय शतशः पत्रों के साथ वह नष्ट हो गया।

३. कार्तिक कृ० ४ या ५ सं० १९३५।

४. देखो पं० देवेन्द्रनाथ जी संक० जी० च० पृ० ५०४। इसी पृष्ठ　　२० पर गायत्री पुरश्चरण की सब विधि लिख कर देने का भी उल्लेख है। यह पत्र देहली से भेजा गया था। इसी प्रसङ्ग में श्रावण (?; भाद्रपद) सं० १९३५ में मेरठ से भी ठा० रणजीतसिंह को पत्र भेजने का उल्लेख है।

[पूर्ण संख्या २३६] पत्र

नं० ६०३

पंडित रामनारायण जी[1] आनन्द रहो !

विदित हो कि पत्र आपका १३-१०-७८ का लिखा पहुंचा[2] सब
५ हाल मालूम हुआ ।। १५-१६ नम्बर अंक भूमिका के की १०००
कापी पहुंची सो जानी जब आप सब पोथी संभाल लें तो हम को
विदित कर देवें और वृजभूषणदास के पास [कितनी] पोथी बाकी
हैं उनका सूचीपत्र भेजते हैं सो मंगा लीजिये, [लाला] भीखेमल के
पास भी सूचीपत्र भेजा है और चिट्ठी भी लिख दी है और आप भी
१० ताकीद से लिख दें कि उससे पोथी मंगा लेवें और वृज० दास को
भी हमने लिख दिया है और हम सब प्रकार से आनंद में हैं ।।

हस्ताक्षर
दयानन्दसरस्वती
दिल्ली

१६ अक्तूब० ७८

सं० पुस्तक	नाम पुस्तक	सं० पुस्तक	नाम पुस्तक
८	जिल्द महाभारत की	१	कारिकावली
४	महाभारत की	१	जागदीशी
४	सूची की	५	सूचीपुस्तक
१	विषयवाद	१	उपनिषद् गुजराती अक्षरों की
१	मुक्तावली	१	पातंजलयोगशास्त्र
३	जिल्द महाभाष्य १	१	वेदोक्तधर्म्मप्रकाश
१	व्यामोहविद्रावण	१	भूगोलहस्तामलक
१	दिधीति जागदीशी ।		

—:०:—

[पूर्ण संख्या २३७] पत्र

२५ ६११

पंडित सुंदरलाल[3] रामनारायण जी आनंद रहो !

---

१. यह पण्डित रामनारायण को भेजे गये पत्र की प्रतिलिपि है, जो परोपकारिणी सभा के संग्रह में विद्यमान है ।

२. यह पत्र हमें प्राप्त नहीं हुआ ।

३० ३. यह पण्डित सुन्दरलाल को भेजे गये पत्र की प्रतिलिपि है, जो परोपकारिणी सभा के संग्रह में विद्यमान है ।

विदित हो कि बाबू मक्खनलाल और भोलानाथ आपके पास पहुंचते हैं, आप इनको भूमिका के १३ वें नम्बर की १ कापी दे दीजिये ॥ और उसका मूल्य ।=) आपको वे दे देवेंगे ॥ और दश भूमिका भी इनको दे दीजिये और सब हाल आपको पहिले पत्रों में लिख चुके हैं ॥ ५

यहां पर सब प्रकार से कुशल है ॥ और जो कोई आपसे भूमिका मांगे तो ५) रुपये लेकर दे दीजिये ।

हस्ताक्षर

१८ अक्टूबर १८७८ दयानन्द सरस्वती

दिल्ली १०

—:o:—

[पूर्ण संख्या २३८] पत्र

६२६

बाबू रामाधार वाजपेई जी आनन्द रहो ![1]

विदित हो कि पत्र आपका आया सब हाल मालूम हुआ हुंडी ४६) की अभी हमारे पास नहीं पहुंची, शायद कल वा परसों आ १५ जावेगी, तब्ही आपके पास रसीद भेजी जावेगी और ७ ऋग्वेद और छः यजुर्वेद आपके पास भेजने के लिये मुम्बई को लिख दिया है, वहां से जल्दी आपके पास पहुंचेंगे और आगे से बराबर पहुंचा करेंगे ।

और केवल भूमिका ५) को मिल सकती है और जो ग्राहक २० लोग ४॥) गतवर्ष में दे चुके और भूमिका पर्य्यंत लेकर छोड़ने हैं उन से ॥) और वसूल कर लो और जो केवल एक वेद लेते हैं उन से ४) लेने चाहियें और जो ग्राहक पिछले साल में ४॥) दे चुके और इस वर्ष में दोनों वेद लेना चाहते हैं उन से ७) और जो एक वेद लेते हैं उन से ४) वसूल करो, जो नवीन ग्राहक हों और वे दोनों २५ वेद भमिका सहित लेवें उन से ११॥) और जो भूमिका सहित एक वेद लेवें उन से ८॥) और जो केवल एक वेद लेवें उन से ४) वसूल कीजिये । यहां पर आज कल नित्य व्याख्यान होता है । हम

१. मूलपत्र आर्यसमाज लखनऊ के संग्रह में सुरक्षित है ।

आनन्द पूर्वक कुशल क्षेम से हैं ॥

२० अक्टूबर ७८[1] दयानन्द सरस्वती

—:०:—

[पूर्ण संख्या २३९] पत्र

नं० ६२८

५ बाबू समर्थदानजी चारण आनन्दित रहो ![2]

विदित होवे कि आज जुगल विहारी शर्मा की एक चिट्ठी आई,[3] जिससे जाना गया कि वहां चन्दे का कुछ प्रबन्ध नहीं हुआ है। सो तुम कुछ चिन्ता मत करो। अब मिलना न हो तो फिर कभी मिलेंगे। और कुछ अफसोस मत समझो। हम तुम्हारे प्रेम को खूब १० जानते हैं और कुछ शोक की बात नहीं है। यहां पर भी आनन्द-पूर्वक व्याख्यान हो रहा है, और सब प्रकार से कुशल है। हम बहुत आनन्द में हैं।

२१ अक्तूबर सन् १८७८[4]

दिल्ली ह० दयानन्द सरस्वती

—:०:—

१५ [पूर्ण संख्या २४०] पत्र-सारांश

[नं० ६२९][5]

हरिश्चन्द्र चिन्तामणि, बम्बई।

[वेदभाष्य का काम पं० श्यामजी कृष्णवर्मा को सौंप दो]

---

१. कार्तिक कृ० ६, रविवार, १९३५।

२० २. यह पत्र अजमेर को लिखा गया था। यह पत्र पं० लेखरामकृत उर्दू जीवनचरित पृ० ४१४(हिन्दी सं० पृ० ४५३)पर छपा है। यही पत्र भारत सुदशा प्रवर्तक दिसम्बर १८८१, पृ० २३ पर भी छपा है। पहले हमने जीवनचरित से इसे छापा था। अब भा० सु० प्र० से शुद्ध कर के छापा है।

३. जुगल बिहारी शर्मा का पत्र तीसरे भाग में देखें।

२५ ४. कार्तिक कृ० १०, सोमवार, सं० १९३५।

५. यह पत्रसंख्या तथा पत्र-सारांश अगले पत्र (पूर्ण संख्या २४१) के 'आज ही हमने बाबू हरिश्चन्द्र चिन्तामणि को भी लिखा है' वाक्य से लिया है।

२२ अक्तूबर सन् १८७८[1]

—:०:—

[पूर्ण संख्या २४१]   पत्र

६३०

पंडित श्यामजी कृष्ण वर्म्मा आनन्द रहो ![2]

विदित हो कि तुम्हारी चिट्ठी १८ अक्टूबर की लिखी पहुंची, सब हाल मालूम हुआ, हम बहुत प्रसन्नता पूर्वक लिखते हैं कि जब तक तुम मुम्बई में रहो तभी तक वेदभाष्य का काम उठालो और खूब होशियारी से करो। और ३०) जो नौकर चाकरों के लिये हैं, उन में तुम को अख्त्यार है चाहे जैसे खर्च करो, और जो ३५) तक भी कभी खर्च हो जावेगा हमको स्वीकार है। और यह संख्या भी जब तक है कि काम कुछ कम चलता है, जब दो हजार ग्राहक हो जावेंगे फिर हम कुछ गिनती न रक्खेंगे चाहे जितना खर्च हो। और जब तुम इस काम को ठीक ठीक चलाओगे तो प्रतिदिन उन्नति ही होगी। और आज ही हमने बाबू हरिश्चन्द्र चिन्तामणि जी को भी लिखा है। वे आप को बुला कर प्रसन्नता पूर्वक काम सोंप देंगे, तुम यह शंका मत करो कि शायद वे बुरा मानें, वे कभी बुरा न मानेंगे, और न वे ऐसे आदमी हैं और उनकी और तुम्हारी तो घर के सी बात है, वे तुम पर सदैव प्रसन्न हैं।

यह पहिला पत्र व्यवहार का हमारा तुम्हारे पास पहुंचता है, इसको रख लेना और आगे से सब रखते जाना[3], हम भी तुम्हारे पत्र रख लिया करेंगे, और तुम्हारे पास पत्र भेजा करेंगे, और पुस्तक आदि सब संभाल कर रखना और जैसा कागज अब की बार लगा है, ऐसा ही सदैव लगाना। इस से कुछ भी न्यून न हो। और अगले मास में ५००) भी तुम्हारे पास भेज देंगे। बाबू हरिश्चन्द्र चि० जी को यह हमारा पत्र दिखा देना और गोपालराव हरि देशमुख जी को हमारा आशीर्वाद कह देना। अगले मास में तुम्हारा नाम भी टाईटिल पर छाप दिया जावेगा, जिससे ग्राहक लोग भी

---

१. कार्तिक कृष्ण ११, मंगलवार, सं० १९३५।

२. मूलपत्र प्रो० धीरेन्द्र वर्मा के संग्रह में सुरक्षित है।

३. इसी आदेश के अनुसार ये सब पत्र सुरक्षित रहे।

चिट्ठी पत्री और रुपया पैसा तुम्हारे नाम भेजा करेंगे। हम बहुत आनन्द में हैं।

२२ अक्टू० ७८[1] हस्ताक्षर
दयानन्द सरस्वती, दिल्ली

—:o:—

५ [पूर्ण संख्या २४२] पत्र

६३२

बाबू रामाधार वाजपेई जी आनन्द रहो ![2]

विदित हो कि एक पत्र इससे पहिले आपके पास भेजा गया है[3] पहुंचा होगा। अब इस चिट्ठी के भेजने की आवश्यकता यह है
१० कि आपने पत्र में लिखा था कि ४६) की हुण्डी दूसरे लिफाफे में भेजी है, सो आज तक हमारे पास नहीं पहुंची, सो जानना। और सब प्रकार से आनन्द है।

हस्ताक्षर
२२ अक्टूबर सन् ७८[4] दयानन्द सरस्वती
दिल्ली
१५

—:o:—

[पूर्ण संख्या २४३] पत्र

६२७[5]

बाबू रामाधार वाजपेई जी आनन्द रहो ![6]

विदित हो कि आज आपका भेजा हुआ मनी आर्डर ४६) का

---

२० १. कार्तिक कृष्ण ११, मंगलवार, सं० १९३५।

२. मूलपत्र आर्यसमाज लखनऊ के संग्रह में सुरक्षित है।

३. यह संकेत २० अक्टूबर १८७८ पूर्णसंख्या २३८, पृष्ठ २९१ पर मुद्रित पत्र की ओर है।

४. कार्तिक कृष्ण ११, मंगलवार, सं० १९३५।

२५ ५. इस पत्र की संख्या ६२७ लिखी है। यह संख्या ठीक प्रतीत नहीं होती। क्योंकि इससे पूर्व के पूर्ण संख्या २४२ पत्र पर संख्या ६३२ है। अथवा ठीक भी हो सकती है। संभवत: कोई पिछली संख्या छूट गई हो, और उसी पर इसे रख दिया गया हो।

६. मूलपत्र आर्य्यसमाज लखनऊ के संग्रह में सुरक्षित है।

पहुंच गया है[1], आप खातिर जमा रक्खें, और बाकी रुपया भी जल्दी ही भेज देना, क्योंकि रुपये की आजकल बहुत आवश्यकता है।

और यह भी लिखना चाहिये कि कितना रुपया किस पुस्तक का है, या किस ग्राहक के नाम छपना चाहिये और ७ ऋग्वेद और छः यजु० आप के पास मुम्बई से पहुंचेंगे, वहां को लिख दिया गया है। यहां पर व्याख्यान नित्य होता है और हम बहुत आनन्द में हैं। ५

हस्ताक्षर
२३ अक्टूबर १८७८[2] दयानन्द सरस्वती १०
दिल्ली

—:०:—

[पूर्ण संख्या २४४] पत्र-सारांश

लीलाधर हरिदास बम्बई[3]

श्यामजी से वेदभाष्य के काम में सलाह करके उनको सहाय दो।[4] १५

—:०:—

[पूर्ण संख्या २४५] पत्र

No. 636 Dehllee.
26-10-78[5]

To

Baboo Madho Lall २०

---

१. पूर्ण संख्या २३८ तथा २४२ में ४६ रु० की हुण्डी भेजने का उल्लेख है, और यहां मनिआर्डर पहुंचने का निर्देश है। सम्भव है हुण्डी न भेजकर मनिआर्डर ही भेजा हो।

२. कार्तिक कृष्ण १२, बुधवार, सं० १९३५।

३. देखो— पूर्ण संख्या २५४ पृ० ३०३। २५

४. यह आशय २ नवम्बर १८७८ को श्याम जी कृष्णवर्मा को लिखे गये पूर्ण संख्या २५४ (पृष्ठ ३०३) के पत्र में निर्दिष्ट है।

५. कार्तिक शुक्ल १ शनिवार सं० १९३५। मूलपत्र आर्यसमाज दानापुर के संग्रह में सुरक्षित है।

Arya Samaj,

Dinapore.[1]

My dear,

I have received your letter just now and knew the all
५ subjects of it. You must send the account of books to me. When you will go to Arra. I hope you will say to Baboo Hurbansh Sahai for the Chanda of Ved Bhashya.

Here I am delivering the Vedic Lecture in these days and hoping that the Arya Samaj will be appoint at Dehlee.
१० I am well and hope you the same.

Swamee D. Nd. Saraswatti,
[दयानन्द सरस्वती]

26-10-78[2] Dehlee.

[भाषानुवाद]

१५ देहली

सं० ६३६. २६.१०-७८.[2]

बाबू माधोलाल
आर्यसमाज दीनापुर[1] को।

मेरे प्रिय !

२० अभी आपका पत्र मिला सब समाचार ज्ञात हुआ। आपको पुस्तकों का हिसाब मुझे अवश्य भेजना चाहिये। जब आप आरा जायेंगे तो मैं आशा करता हूं कि आप बाबू हरबंससहाय को वेदभाष्य के चन्दा के लिये कहेंगे। मैं यहां आजकल वैदिक विषय पर व्याख्यान दे रहा हूं, और आशा करता हूं कि दिल्ली में समाज स्थापित हो जावेगा। मैं प्रसन्न हूं और
२५ आपकी प्रसन्नता चाहता हूं।

२६।१०।७८[2] दयानन्द सरस्वती
दिल्ली

—:o:—

१. मूलपत्र में दानापुर के स्थान में भूल से दीनापुर लिखा गया है।

३० २. कार्तिक शुक्ल १, शनिवार, सं० १९३५। मूलपत्र आर्य्यसमाज दानापुर के संग्रह में सुरक्षित है।

[पूर्ण संख्या २४६]　　पत्र-सूचना

[सं० ६३७][1]
हरिश्चन्द्र चिन्तामणि बम्बई
[पण्डित श्यामजी कृष्ण वर्मा को वेदभाष्य का काम सौंप दो]
२७ अक्टूबर सन् १८७८[2], दिल्ली　　५

—:०:—

[पूर्ण संख्या २४७]　　पत्र

६३८

पंडित श्यामजी कृष्ण वर्म्मा आनन्द रहो ![3]

विदित हो कि इस से पहले तुम्हारे पास एक पत्र भेजा गया है[4] पहुंचा होगा और बाबू हरिश्चन्द्र चिन्तामणि जी को तुम्हें काम　१० सौंपने के लिये **तीन चिट्ठी लिख[5] चुके है, और एक चिट्ठी आज फिर लिखी है,** सो शायद है कि उन्होंने तुम को बुलाकर सब काम सौंप दिया होगा, पहिली नवम्बर से सब काम तुम ही करो और ग्राहकों के पास भी वेदभाष्य तुमही भेजना, और रजिस्टर, वेद-भाष्य के अंक और लिखित पत्र आदि चिट्ठी वगेरे और सब काम　१५ उन से लेकर समझ लो। जो वे प्रसन्न हों तो पुस्तकें उन्हीं के मकान में रहने दो और कुंजी अपने पास रक्खो और जो वे न रहने दें तो जहां तुम चाहो रक्खो, परन्तु प्रबन्ध से रखना कि कुछ हानि न हो, और जो कुछ रुपया वेदभाष्य के अंकों के ऊपर लगाने के टिकटों के लिये चाहिये सो बाबू साहब से ले लेना, फिर　२० आगे से प्रबन्ध कर दिया जायगा। जब तुम यह काम ले लोगे और

---

१. यह संख्या और पत्र की सूचना पूर्ण संख्या २४७ के 'एक चिट्ठी आज फिर लिखी है' पदों से संगृहीत की है। इसी पत्र के विषय में पूर्ण संख्या २५३ (पृष्ठ ३०२) भी लिखा है—'और बाबू जी को इन्हें काम देने के लिये ...'।　　२. कार्तिक शुक्ल २, रविवार, सं० १९३५।　२५

३. मूलपत्र धीरेन्द्र वर्मा जी के संग्रह में सुरक्षित है।

४. द्रष्टव्य—पूर्णसंख्या २४१ का पत्र, पृष्ठ २९३।

५. इन तीन चिट्ठयों में से १ चिट्ठी २२ अक्टूबर को लिखी गई थी। देखो पूर्ण संख्या २४१ पृष्ठ २९३। दो चिट्ठियों की तिथियां ज्ञात नहीं हो सकीं। अतः इनका पत्रसारांश के रूप में निर्देश नहीं किया।　३०

हमको लिख भेजोगे, तब सब व्यवस्था तुम्हारे पास लिख कर भेज देंगे उसी के अनुसार काम करना। अब शीघ्र लिखो कि काम तुमने लिया वा नहीं, और वहां का कुल हाल लिखो, हम बहुत आनन्द में हैं।

हस्ताक्षर
५ २७ अक्टू० ७८[1] दयानन्द सरस्वती
दिल्ली

—:o:—

[पूर्ण संख्या २४८] पत्र-सारांश[2]

[श्री कर्नैल आलकाट साहब]

१० यहां आर्यावर्त में भी बहुत से मनुष्य आर्यसमाज के नियमों को स्वीकार नहीं करते, थोड़े से करते हैं, तो वहां [अमरीका में] वैसी बात होने में क्या आश्चर्य है? इसलिये जो मनुष्य अपनी प्रसन्नता से आर्यसमाज के नियमों को मानें वे वेद मतानुयायी और जो न मानें वे केवल सोसाइटी के सभासद रहें। उनका अलग हो १५ जाना अच्छा नहीं।

—:o:—

[पूर्ण संख्या २४९] पत्र-सारांश[3]

[मुन्शी समर्थदान]

---

१. कार्तिक शुक्ल २, रविवार, सं० १९३५।

२. यह पत्रसारांश श्रावणवदी ५ सोमवार सं० १९३७ (२६ जुलाई २० सन् १८८०) को ऋषि दयानन्द ने थियोसोफिकल सोसाइटी के सम्बन्ध में जो '**विशिष्ट विज्ञापन**' प्रकाशित किया था, उस में निर्दिष्ट है। यह पत्र बाबू हरिश्चन्द्र चिन्तामणि ने कर्नल अल्काट को न्यूयार्क नहीं भेजा था। यह बात भी उसी विज्ञापन में लिखी है। यह पत्र सम्भवत: अक्टूबर १८७८ के उत्तरार्ध में लिखा था। अत: हम इसे यहां जोड़ रहे हैं।

२५ ३. उपर्युक्त अंश पं० लेखरामकृत जीवनचरित हिन्दी सं० पृष्ठ ४५३ पर, तथा भारतसुदशाप्रवर्तक दिसम्बर १८७८ के अङ्क के पृष्ठ २३ छपा है। इसी प्रकार पं० देवेन्द्रनाथ द्वारा संकलित जी० च० पृष्ठ ५०६ पर भी उद्धृत है। यह मुंशी समर्थदान के ऋ० द० के पत्र और विज्ञापन के भाग ३ में छपे पत्र के उत्तर में ऋ० दयानन्द ने लिखा था।

हम अजमेर अवश्य आवेंगे। यहां हम ने समझ लिया है कि जुगुलबिहारी शर्मा के नाम से किसी ब्राह्मण ने पोप लीला की है, परन्तु क्या होता है, ऐसे धूर्त बहुत हैं।

२८ अक्टूबर १८७८[1]　　　　　　दयानन्द सरस्वती

:o:—

[पूर्ण संख्या २५०]　　　　पत्र　　　　५

६४२

पण्डित रामनारायण जी[2] आनन्द रहो !

विदित हो कि आप का पत्र कार्ति० शु० १ का लिखा पहुंचा[3] सब हाल मालूम हुआ ॥ हमको पं० सुन्दरलाल के घर में से मर जाने का शोक है, परन्तु क्या कीजिये यहां सब लाचार हो जाते १० हैं, यह फल बाल्यावस्था में विवाह करने का है, अब भी आप सब लोगों को समझना चाहिये ॥ आप जानते हैं कि कोई हमारा ऐसा स्थान नहीं है कि जहां एक ही बार पोथियां पहुंचा दी जावें, इस समय तो आप ही का घर है आपही उनकी यत्नपूर्वक रक्षा कीजिये और जब आप आगरा को जावें तब सब पोथियां किसी मनुष्य के १५ यहां रख जावें बालमुकुंद हो वा कोई हो जो उनको युक्ति से रक्खे ॥ और उसके नाम तथा पते से हमको इत्तला देदो कि जब जो पोथी चाहिये उससे मंगा लेवें ॥ और मुंबई से कुछ पोथियां आपके पास पहुंचने के लिये रवाना हुई हैं सो लिखिये कि अभी पहुंची वा नहीं ॥ और वेदभाष्यभूमिका २०, सत्यार्थप्रकाश ३८, २० सन्ध्योपासनादि० ५०, संस्कारविधि ३०।

बाबू समर्थदान स्टूडेंट गवर्नमेंट कालेज अजमेर के पास भेज दीजिये ॥ और कार्तिक शु० ११ वा १२ को हम पुष्कर जावेंगे ॥ और सब प्रकार से आनन्द है ॥　　　　हस्ताक्षर

दयानन्द सरस्वती　　२५

२९ अक्टू० ७[८]　　　　दिल्ली

---

१. कार्तिक शुक्ल ३, सोमवार, सं० १९३५।

२. यह पण्डित रामनारायण को भेजे गए पत्र की प्रतिलिपि है, जो परोपकारिणी सभा के संग्रह में विद्यमान है।

३. यह पत्र हमें प्राप्त नहीं हुआ। ३०

Books as ordered by Swami ji sent on Monday
11/11/78 thro: rail by goods train in 2 Orders
consigned to Samarthdan charan Govt. College Ajmere

—:o:—

[पूर्ण संख्या २५१] पत्र

५ ६४३

पण्डित श्यामजी कृष्ण वर्म्मा आनन्द रहो ![1]

विदित हो कि पहले भी आप को दो तीन चिट्ठियां लिखी गई हैं पहुंची होंगी, और बाबू हरिश्चन्द्र चिन्तामणि जी को भी तुम्हें काम देने के लिये कई बार लिखा गया है, सो आशा है कि तुम
१० को उन्हों ने सब काम सोंप दिया होगा, और जो कुछ उनसे बातें हुई हों सो हम को जल्दी लिखो और बाबू जी से काम लेकर पहिली नवम्बर से तुम्हीं करो, यह भी लिखो कि **छापेखाने करने में यन्त्र और**[2] अक्षर और टाइप आदि के मंगाने में क्या खर्च होता है ? और मोहनलाल विष्णुलाल पंड्या जी आज कल कहां हैं,
१५ मुम्बई में हैं वा नहीं।

अब हम यहां से ६ नवम्बर बुधवार को पुष्कर जायेंगे, सो इस मिति के पीछे पत्र हमारे पास अजमेर में भेजना चाहिए। कल वहां पर भी आर्य्यसमाज के लिये प्रधानादि नियत हो गए हैं, और ३ नवम्बर रविवार को समाज का आरम्भ हो जायगा उत्तर
२० शीघ्र भेजो कि जिस मिती [से] तुम काम सम्भाल लो, आगे उस मिती से पत्र तुमारा हमारा बराबर आनन्द से पत्र-व्यवहार होगा।

हस्ताक्षर

३० अक्टूबर ७८[3] दयानन्द सरस्वती

दिल्ली

—:o:—

२५ [पूर्ण संख्या २५२] पत्र

६५५[4]

---

१. मूलपत्र प्रो० धीरेन्द्र वर्मा जी के संग्रह में सुरक्षित है।

२. स्थूलाक्षर का पाठ श्री स्वामी जी के स्वहस्त का है।

३. कार्तिक शुक्ल ५, बुधवार, सं० १९३५।

३० ४. इस पत्र के अन्त में ३१ अक्टूबर सन् १८७८ (कार्तिक शु० ६

गण्डासिंह जी आनन्द रहो !

वाजह कि एक चिट्ठी बखत नागरी तुम्हारी पहुंची। जवाब उस का यह है कि हमारे पास खर्च तो ज्यादा है और आमदनी कम है, इसलिये हम कुछ नहीं [कर] सकते। मगर हां जो तुम अपना खर्च करो तो हम को पढ़ाने में कुछ उजर नहीं है क्योंकि　५
जितना फायदा तुम्हारे पढ़ाने से दुनिया को होता है उतना ब्राह्मण लोगों के पढ़ाने से नहीं होता। हम तुम को बहुत खुशी से पढ़ा सकते हैं। अगर खर्च का तुम कुछ बन्दोबस्त कर लो तो पढ़ना हो सकता है, मगर फिर भी पांच या छः माह में तुम आना क्योंकि अब तो हम बतारीख ६ नवम्बर यहां से पुष्कर जी को चले　१०
जावेंगे। फिर वहां से वापिस होते वक्त मेला कुम्भ में हरिद्वार पर या देहली वगैरा में तुम आ जाना, तब पढ़ना हो सकता है और अब पढ़ना नहीं हो सकता क्योंकि इस सफर में तुम्हारा खर्च भी ज्यादा होगा और पढ़ना भी ठीक-ठीक न होगा, इसलिए तुम को लिखा गया सो वाजह रहे, यहां पर हमारा व्याख्यान रोजमर्रा:　१५
होता है। आर्य्य समाज भी यहां पर कायम हो गया है और बहुत से मोजिज लोग उस में शरीक हैं और रोज बरोज तरक्की होती जाती है, और ऐसे ही रुड़की व सहारनपुर व मेरठ व लुधियाना में बहुत आर्यसमाज कायम हो गये हैं। अब दुनिया से अन्धकार जानेवाला है और सत्य का प्रकाश होता जाता है।[1]　२०

बृहस्पतिवार सं० १९३५) लिखा गया है। २ नवम्बर १८७८ के क्रम-संख्या ६४८, ६४९ के पत्र आगे संख्या २५३, २५४ पृष्ठ ३०२, ३०३ पर छपे हैं। इस के पूर्व दिन ३० अक्टूबर १८७८ के पूर्ण संख्या २५१ पर क्रम संख्या ६४३ है अतः यहां क्रमसंख्या ६५५ के स्थान में ६४५ होनी चाहिये।　२५

१ यह पत्र सरदार गण्डासिंह मशरकी अकाउंटेण्ट मिलिट्री वर्क्स, स्थान रोपड़, जिला अम्बाला को भेजा गया था। पत्र के लिफाफे पर रोपड़ पोस्ट आफिस की मोहर २ नवम्बर १८७८ ई०, और पता "गण्डासिंह ग्रन्थी, रोपड़, जिला अम्बाला" है। यह पत्र उर्दू में लिखा गया था।

इस पत्र की फोटो तथा प्रतिलिपि स्वर्गीय सरदार गण्डासिंहजी के सुपुत्र　३०
सरदार नारायणसिंह बिम्भराओ सूबेदार हैडक्लर्क पैंशनर ग्रन्थी बाग रोपड़ जि० अम्बाला की कृपा से प्राप्त हुई। मूलपत्र उन्हीं के पास सुरक्षित है।

३१ अक्टूबर सन् १८७८[1]
दिल्ली

दयानन्द सरस्वती

—:०:—

[पूर्ण संख्या २५३] पत्र

६४८

५ पंडित गोपालहरि देशमुख जी आनन्द रहो ![2]

विदित हो कि जिस दिन से बाबू हरिश्चन्द्र चिन्तामणि जी के प्रवन्ध में वेदभाष्य का काम गया है तब से किसी ग्राहक के पास भी अंक यथार्थ ठीक-ठीक नहीं पहुचते और वे बेचारे क्या करें, उनके पास कोई आदमी इस काम के योग्य नहीं। अब हम इस
१० बात से बहुत प्रसन्न हुए कि आपने श्यामजी कृष्ण वर्मा को इस काम के स्वीकार करने को उद्दित[3] किया, यह पुरुष इस काम के बहुत योग्य है और बाबू जी को इन्हें काम देने के लिये लिखा था,[4] सो वे लिखते हैं कि इस की बाबत एक दो दिन में लिखूंगा, सो देखिये क्या लिखते हैं। प्रथम तो आशा है कि वे कुछ
१५ इसमें तकरार न करेंगे और जो शायद वे कुछ तकरार करने लगें तो जब आप मुम्बई में आवें वा पत्र द्वारा उन को समझाकर इन को काम दिला दीजिए।

आप इस काम के अधिपति रहें और बाबू जी भी नाम मात्र रहें परन्तु सब काम आप के नीचे श्यामजी करें, तब यह काम
२० ठीक ठीक होगा और श्यामजी[5] ... और जब आवश्यकता होगी आप को भी लिखा करेंगे। यहां दिल्ली में आर्य्यसमाज नियत हो गया है, अब हम यहां से ६ नवम्बर को पुष्कर जावेंगे और सब प्रकार से हम आनन्द में हैं।

---

१. कार्तिक शु० ६, बृहस्पतिवार, सं० १९३५।

२५ २. मूलपत्र प्रो० धीरेन्द्र वर्मा जी के संग्रह में सुरक्षित है।

३. उद्दित अर्थात् उद्यत।

४. सम्भवतः २७ अक्टूबर सन् १८७८ या उस से पूर्व। पूर्ण संख्या २४७(पृष्ठ २९७)में ऋ० द० ने हरिश्चन्द्र चिन्तामणि को ३ पत्र लिखने का उल्लेख किया है। उनमें से यह किस पत्र का उत्तर रहा होगा, यह अज्ञात
३० है।

५. अगला थोड़ा सा पाठ फट गया है।

	हस्ताक्षर
२ नवम्बर १८७८[1]	दयानन्द सरस्वती
	दिल्ली

--:०:—

[पूर्ण संख्या २५४] पत्र

६४६

पण्डित श्यामजी कृष्ण वर्मा आनन्द रहो ![2]

विदित हो कि कल आप का पत्र आया था, सब हाल मालूम हुआ। और कल ही बाबू हरिश्चन्द्र चिन्तामणि जी का भी पत्र आया था, वे लिखते हैं कि श्याम जी को काम देने की बाबत सोच विचार कर एक दो दिन में लिखूंगा। सो जब वे कुछ लिखेंगे तब तुमको लिखा जावेगा और वे तुम्हें काम देने में कुछ तकरार नहीं करेंगे क्योंकि उनकी हानि ही क्या है, जो वे लिखेंगे कि हमारा नाम टाइटिल पेज पर [न] छपवा कर हमको बदनाम किया, तो उनका नाम माघ तक ऐसे ही छपता रहेगा, फिर अगले वर्ष में बदल दिया जावेगा, और हम उनको भी यही लिख देंगे।

हमने एक चिट्ठी लीलाधर हरिदास को लिखी थी[3] कि श्यामजी से वेदभाष्य के काम में सलाह करके उनको सहाय दो। सो उन्होंने लिखा है कि हम उनसे मिल कर अवश्य सम्मति करेंगे, सो तुम तथा वे सुन्दरदास और पुरुषोत्तमादि मिलकर इस काम को चलाओ, और सब काम तुम करो, वे तुमको सहाय देंगे ...[4] ते रहा करो। और गोपालराव हरि देशमुख जी के नाम एक चिट्ठी[5] लिख कर तुम्हारे पास इस चिट्ठी के साथ भेजते हैं, सो जहां वे हों भेज दो वा जब वे मुम्बई में आवें तब उनको दे देना। और बाबू

१. कार्तिक शु० ८ स० १९३५।
२. मूलपत्र प्रो० धीरेन्द्र वर्मा जी के संग्रह में सुरक्षित है।
३. इस पत्र की सूचना पूर्व पूर्णसंख्या २४४ पृ० २९५ पर छापी है।
४. बिन्दुवाले स्थान के तीन या चार शब्द फट गये हैं।
५. यह पत्र पूर्ण संख्या २५३, पृष्ठ ३०२ पर छपा है।

जी के पास और भी चिट्ठियां लिखी गयी हैं,[1] जो उनसे बातें हुआ करें सो सब लिखा करो। यहां पर आर्यसमाज हो गया है। अब हम कार्तिक शु० १२, ६ नवम्बर को पुष्कर जावेंगे, और दो तीन मास इधर ही जयपुर अजमेर आदि नगरों में घूमेंगे, फिर हरिद्वार ५ में कुम्भ के मेले पर आवेंगे, जो हम दूर देश में हों और तुम को जो कुछ काम पड़े सो लीलाधर हरिदास जी से कह कर सहाय लेना और सब काम ठीक करना। और बाबू हरिश्चन्द्र से भी मिला करना, अब उन का दूसरा पत्र आनेवाला है। जब वह आ लेवे तब प्रबन्ध कुछ दूसरा किया जावे, और तब ही तुम को भी १० लिखेंगे और तुम सब हाल वहां का लिखो और यह भी लिखो कि गोपालराव हरि देशमुख जी आज कल कहां हैं, हम बहुत आनन्द में हैं।

[२][2] न० ७८

हस्ताक्षर
दयानन्द सरस्वती
दिल्ली

१५

—:o:—

[पूर्ण संख्या २५५] पत्र

६५५

पंडित सुन्दरलाल[3] रामनारायणजी

आनंद रहो

२० प्रकट हो कि इससे पहिले आपके पास एक पत्र ३८ सत्यार्थ प्र० ३० संस्कार० २० भूमिका, संध्यो० ५० बाबू समर्थदान चरण

---

१. यहां गोपालराव हरि देशमुख के नाम लिखी पूर्व मुद्रित चिट्ठियों में से किन की ओर सकेत है, यह निश्चयपूर्वक नहीं कहा जा सकता है। यह भी सम्भव है कि वे चिट्ठियां उपलब्ध न हुई हों।

२५ २. तिथि का स्थान फट गया है। यह पत्र पूर्ण संख्या २५३ के पत्र के साथ लिखा गया था। देखो—यही पत्र। अत: यहां २ नवम्बर [कार्तिक शु० ८ सं० १९३५] होना चाहिये।

३. यह पण्डित सुन्दरलाल को भेजे गए पत्र की प्रतिलिपि है, जो परोपकारिणी सभा के संग्रह में विद्यमान है।

स्टूडेंट गवर्नमेंट कालेज अजमेर के पास भेजने के लिये लिखा था,[1] सो आशा है कि आपने पूर्वोक्त पोथी पूर्वोक्त ठिकाने पर भेज दी होंगी, और जो न भेजी हों तो बहुत जल्दी भेज दीजिये क्योंकि वहां पुष्कर के मेले पर बहुत सी पोथी उठ जावेंगी ।। और मंत्र-भाष्य सहित भूमिका के १६ अंक क्रम पूर्वक तयार रक्खो जिससे ५ जब हम चिट्ठी जहां के लिये लिखें तब ही वहां भेज दें ।। और आप सब पोथी रक्षापूर्वक रक्खें जिससे दीमक आदि हानि न कर सकें यदि उनकी रक्षा में १) वा २) खर्च भी मासिक हो तो भी कुछ शंका नहीं, वा आप किसी के यहां जैसे कि बालमुकुंद हैं रख दीजिये और हम को इत्तला दे दीजिये जिससे जब हम जहां पोथी १० भेजने के लिये लिखें वे भेज दें और टिकिट आदि का खर्च हमारे हिसाब में लिख लें ।। क्योंकि सिवाय तुम्हारे हमारा और कौन सा घर है जहां पोथी रख देवें इसलिये उनकी रक्षा और बंदोबस्त आप ही के ऊपर है यहां पर आर्य्यसमाज हो गया है ।। अब यहां से हम ता० ६ नवं० को पुष्कर जावेंगे, हम बहुत आनंद में हैं ।। १५

हस्ताक्षर

४ नवं० ७८   दयानन्द सरस्वती

दिल्ली

Books sent to Ajmera full number, Swami ji Letter No 642

—:o:—

[पूर्ण संख्या २५६] तार का सारांश २०

[समर्थदान अजमेर]

हम आते हैं ।[2]

६ नवम्बर १८७८, दिल्ली ।[3]

—:o:—

१. द्र०—पूर्व पृष्ठ २९९ पर पूर्णसंख्या २५० का पत्र ।

२. देहली से रात में रेल में सवार होते समय उपर्युक्त तार अजमेर २५ दिया गया था । द्र०—पं० लेखराम जी कृत जीवनचरित, हिन्दी सं पृ० ४५४ तथा पं० देवेन्द्रनाथ संकलित जी० च० पृष्ठ ५०६ ।

३. कार्तिक शुक्ल १२, सं० १९३५ ।

[पूर्ण संख्या २५७] विज्ञापन-पत्रमिदम्[1]

सब सज्जन लोगों को विदित हो कि पं० स्वामी दयानन्द सरस्वतीजी महाराज संवत् १९३५ कार्तिक शुक्ल १३ गुरुवार[2] को पुष्कर में आकर नाथजी के दरीचे अर्थात् जोधपुर के घाट पर ५ ठहरे हैं। जिस-जिस सज्जन को सनातन वेदोक्त धर्मविषय में कहना वा सुनना होवे, सत्य पुरुष उक्त स्थान में जाकर और समागम कर के सभ्यता और प्रीतिपूर्वक वेद और प्राचीन शास्त्रों के विषय में सम्भाषण करें।

सब मनुष्यों को अत्यन्त आवश्यक है कि अति पुरुषार्थ से १० सत्यासत्य का निर्णय करके उससे सब मनुष्यों को जानकार करें। क्योंकि यह मनुष्य जन्म अति दुर्लभ, धर्म के सेवने और अधर्म के छोड़ने,परमात्मा की भक्ति और परमानन्द भोगने के लिए है। इस-लिए जो शुभ काम कल करना हो आज ही करें, जिससे सब मंगल-कारी बना रहे ।। इति।

---:o:---

१५ [पूर्ण संख्या २५८] पत्र

६७४

पंडित सुन्दरलाल[3] रामनारायणजी आनन्द रहो !

प्रकट हो कि इससे पहिले दिल्ली से एक पत्र आपके पास भेजा था[4] सो पहुंचा होगा,हम ६ नवं० को दिल्ली से चलकर कल ७नवं० २० को पुष्कर पहुंच लिये और नाथजी के दुलीचे में ठहरे हैं पूर्णिमा पीछे

---

१. मासिक पत्र भारतसुदशाप्रवर्तक, फर्रुखाबाद, नम्बर ३१, पृष्ठ १६, १७ जनवरी, सन् १८८२ से लिया गया। पं० लेखरामकृत उर्दू जी० च० के पृष्ठ ४१५ (हिन्दी सं० पृष्ठ ४५०) पर भी छपा है।

२. ७ नवम्बर बृहस्पतिवार सन् १८७८। भारतसुदशाप्रवर्तक में भूल २५ से संवत् १९३८ छप गया है। देखो पत्र, पूर्ण सं० २५३, २५४ तथा २६०।

३. यह पण्डित सुन्दरलाल को भेजे गये पत्र की प्रतिलिपि है, जो परोपकारिणी सभा के संग्रह में विद्यमान है।

४. यह संकेत पूर्व पृष्ठ ३०४, पूर्ण संख्या २५५, ४ नवम्बर १८७८ के ३० पत्र की ओर है।

फिर हम अजमेर जावेंगे, अब आप बहुत जल्दी नीचे लिखी पोथी अजमेर में हमारे पास भेज दीजिये संस्कारवि० ३० भूमिका २० सत्यार्थप्र० ३९ आर्य्याभि० ५० वेदविरुद्ध मतखंडन ५० वेदांतिध्वांतनि० ५० ।,

और यह भी लिखो कि मुंबई से आपके पास पोथी आ लीं वा ५ नहीं ।। अब पूर्वोक्त लिखित पुस्तक आप बहुत जल्दी अजमेर में हमारे पास भेज दीजिये ।। हम बहुत आनंद में हैं ।।

हस्ताक्षर

८ नवं० ७८ दयानन्दसरस्वती

पुष्कर १०

—:o:—

[पूर्ण संख्या २५९] पत्र-सारांश

[बा० हरिश्चन्द्र चिन्तामणि][1]

वर्ष के अन्त से पूर्व काम छोड़ने में आप की बदनामी किसी प्रकार से नहीं हो सकती । क्योंकि वर्ष दिन तक टाइटल[2] पेज पर आपका ही नाम बना रहेगा, और ग्राहकों के पत्रादि भी आप के १५ पास आया करेंगे और सब काम श्यामजी करेगा ।

दयानन्द सरस्वती

—:o:—

[पूर्ण संख्या २६०] पत्र

६७६

पण्डित श्यामजी कृष्णवर्म्मा आनन्द रहो[3] २०

विदित हो कि आज एक पत्र बाबू हरिश्चन्द्र चिन्तामणि जी का आया, उसमें वे लिखते हैं कि वर्ष दिन के अन्त पर्य्यन्त हम काम नहीं छोड़ सकते, इसमें हमारी बदनामी होगी । सो आज उनको उत्तर लिख दिया है कि इस में आपकी बदनामी किसी प्रकार से नहीं हो सकती, क्योंकि वर्ष दिन तक टाइटिल पेज पर २५

---

१. यह पत्रसारांश ऋ० द० के १० नवम्बर १८७८ को श्यामजी कृष्णवर्मा के नाम लिखे पूर्ण संख्या २६० के आधार पर बनाया है ।

२. अर्थात् वेदभाष्य के मासिक अंक के टाइटल पेज पर ।

३. मूलपत्र प्रो० धीरेन्द्र वर्मा जी के संग्रह में सुरक्षित है ।

आप ही का नाम बना रहेगा, और ग्राहकों के पत्रादिक भी आप ही के पास आया करेंगे, और सब काम श्यामजी करेगा। अब देखिये क्या उत्तर लिखते हैं। अब तुम चौथे अङ्क का शोधना, सब ग्राहकों [के] पास यथावत् भेजना, और सब काम ठीक-ठीक करो
५ और कागज का प्रबन्ध भी करो, कि कागज अच्छा लगा करे, जैसा दूसरे अंक में लगा है। हम क्षेम कुशल पूर्वक पुष्कर में पहुंच गये हैं, अब यहाँ से अजमेर जाकर ठहरेंगे, वहां का सब हाल जल्दी लिखकर उसी जगह हमारे पास भेजना और बाबू जी से मिलना।

१० पुष्कर जि० अजमेर — हस्ताक्षर
१० नवम्बर १८७८[1] — दयानन्द सरस्वती

—:o—

[पूर्ण संख्या २६१] पत्र

६९२

पंडित सुन्दरलाल[2] रामनारायणजी आनंद रहो!

१५ प्रकट हो कि आज पत्र आपका आया[3] सब हाल मालूम हुआ आपके ३००।।।) कुल हमारे जिम्मे हुए सो जाने आप कुल पोथियों को पृथक् पृथक् लगा रक्खें और भूमिका के अंक भी १ अंक से १६ अंक पर्य्यंत क्रम पूर्वक लगा रक्खें, कि जब हम जहां भेजने के लिये लिखें, तब ही तुम वहाँ भेज दो, और हम पुस्तकों
२० की रक्षा सुनकर बहुत प्रसन्न हुए, और मुंबई से जो पोथी आपके पास पहुंची सो जानीं, अब हम अजमेर में आनंद पूर्वक पहुंचकर नये दर्वाजे के बाहर पुष्कर की सड़क पर रामपरशाद सेठ के बाग में ठहरे हैं॥ इसलिये अब आप यहां बहुत जल्दी हमारे पास नीचे लिखी पोथी भेज दीजिये। सत्यार्थप्र० १५ संस्कार० २० भूमिका
२५ १० संध्योपा० १०० आर्य्याभिविन० ५० वेदविरुद्धमतखं० ५० वेदान्तिध्वान्तनिवारण ५० ॥

---

१. कार्तिक शु० १५, रविवार, सं० १९३५।

२. यह पण्डित सुन्दरलाल को भेजे गए पत्र की प्रतिलिपि है, जो परोपकारिणी सभा के संग्रह में विद्यमान है।

३० ३. यह पत्र हमें प्राप्त नहीं हुआ।

और दानापुर के आर्य्यसमाज में २० भूमिका और जो पोथी वे चाहते हैं सो भेज दीजिये ॥ हम बहुत आनंद में हैं ॥

हस्ताक्षर
दयानन्दसरस्वती
अजमेर १३ नव० ७८　　　　५

—:०:—

[पूर्ण संख्या २६२]　　　　पत्र

६९८

पंडित सुन्दरलाल[1] रामनारायणजी आनन्द रहो !

विदित हो कि आज पत्र आपका आया सब हाल मालूम हुआ, अब आप नीचे लिखी पोथी हमारे पास जल्दी भेज दीजिये ॥　　　　१०

आर्य्याभिविनय	२५
वेदांतिध्वांतनिवारण	११
वेदविरुद्धमतखंडन	३८
सत्यासत्यविचार	५०

और बाबू समर्थदान जी के पास जो आपने पोथियां भेजीं सो जानी ॥ अब यहां पर व्याख्यान होता है आगे जो कुछ समाचार होंगे सो लिखेंगे ॥　　　　१५

हम बहुत आनंद में हैं ॥　　　　हस्ताक्षर
१६ नव० ७८　　　　दयानन्दसरस्वती
अजमेर　　　　२०

—:०:—

[पूर्ण संख्या २६३]　　　　पारसल-सूचना

[श्यामजी कृष्ण वर्मा, बम्बई][2]

जिन ग्राहकों ने चन्दा नहीं दिया, उन का सूचीपत्र ।

दयानन्द सरस्वती

—:०:—

---

१. यह पण्डित सुन्दरलाल को भेजे गए पत्र की प्रतिलिपि है, जो परोपकारिणी सभा के संग्रह में विद्यमान है ।　　　　२५

२. यह पारसल-सूचना ऋ० दयानन्द के २० नवम्बर १८७८ के पूर्ण संख्या २६६ के पत्र से मिलती है ।

[पूर्ण संख्या २६४] पत्र-सारांश

[पं० गोपालराव हरि देशमुख][1]

बम्बई जाकर अपने सामने हरिश्चन्द्र चिन्तामणि से वेदभाष्य का सब काम पं० श्यामजी कृष्णवर्मा को सौंप दो।

५ दयानन्द सरस्वती

—:o:—

[पूर्ण संख्या २६५] पत्र

नं० ७०२

पंडित सुन्दरलाल[2] रामनारायण जी आनंद रहो !

विदित हो कि आपने जो दो संदूक पुस्तकों के भेजे सो हमारे १० पास पहुंचे, और नीचे लिखी पोथी आपसे हमने पाई जो कि उन दोनों संदूकों से निकलीं ॥

सत्यार्थप्रकाश	३८
संस्कारविधि	३०
वेदभाष्यभूमिका	२०
१५ मंत्रभाष्य सहित	
संध्योपासन	५०

आप खातिर जमा रक्खें ॥

और अब आप नीचे लिखी पोथी बहुत जल्दी यहां हमारे पास भेज दीजिये ॥

२० नाम पुस्तक			संख्यापुस्तक
आर्य्याभिविनय	—	—	२५
वेदांतिध्वांतनिवारण	—	—	११
वेदविरुद्धमतखंडन	—	—	३८
सत्यासत्यविचार	—	—	५०
२५ वेदभाष्यभूमिका मंत्रभाष्यसहित		—	१०
संध्योपासनादि पंचमहायज्ञविधि		—	५०

ये पोथियां आप जल्दी भेज दीजिये ॥

---

१. यह पत्र-सारांश ऋ० द० के २० नवम्बर १८७८ के पूर्णसंख्या २६६ के पत्र में निर्दिष्ट है।

३० २. यह पण्डित सुन्दरलाल को भेजे गए पत्र की प्रतिलिपि है, जो परोपकारिणी सभा के संग्रह में विद्यमान है।

और वेदभाष्यभूमिका के सब अंक क्रम पूर्वक लगा रखिये, जब हम किसी के पास भेजने के लिये आपको लिखें तब ही आप वहां भेज देवें ॥ यहां पर नित्य व्याख्यान होता है जो आगे समाचार होंगे सो लिखे जायंगे, हम बहुत आनंद में हैं ॥

हस्ताक्षर ५
२०-११-१८७८ दयानन्द सरस्वती
अजमेर

—:०:—

[पूर्ण संख्या २६६] पत्र

७०४

पण्डित श्यामजी कृष्णवर्म्मा आनन्द रहो[१] ! १०

विदित हो कि आज आप के पास हम एक सूची पत्र भेजते हैं कि जिस में उन ग्राहकों का नाम लिखा है जिन्होंने अब तक वेद-भाष्य का मोल नहीं दिया, सो इस कुल सूची को पांचवें अङ्क के टाइटिल पेज पर छाप देना और दिसम्बर के मास से सब काम सम्भाल कर पांचवें अङ्क का सब काम तुम ही करना। बाबू १५ हरिश्चन्द्र चिन्तामणि जी को तो हमने कई वार बहुत कुछ लिखा, परन्तु अब हम ने पण्डित गोपालराव हरि देशमुख जी को भी लिखा है, वे मुम्बई में आकर अपने सामने तुम को सब काम सोंपवा देंगे, और जो कुछ हिसाब किताब होगा सो सब तुम समझ लेना वा बाबू जी हमारे पास भेज देंगे, और वहां का कुल हाल लिखो २० कि बाबू जी का क्या विचार है, और प्रेस में आजकल क्या काम होता है। और चौथा अङ्क भी ग्राहकों के पास तुम ही भेजना और बहुत होशियारी के साथ अङ्कों को बांध कर [पता] अंग्रेजी और नागरी में लिखना और अच्छी तरह से रजिस्टर से मिला लेना, यह काम बहुत होशियारी से करना चाहिये, उत्तर शीघ्र २५ भेजो।

हस्ताक्षर
दयानन्दसरस्वती
२० नवम्बर ७८[२] अजमेर

—:०:—

१. मूलपत्र प्रो० धीरेन्द्र वर्मा जी के संग्रह में सुरक्षित है।

२. मार्गशीर्ष कृष्ण ११, बुधवार, सं० १६३५। ३०

[पूर्ण संख्या २६७] विज्ञापन-सूचना

पादरी ग्रे के साथ होने वाले शास्त्रार्थ की सूचना विषयक।[1]
[२८ नवम्बर १८७८ से पूर्व]

—:०:—

[पूर्ण संख्या २६८] पत्र-सूचना

५ [पं० सुखदेवप्रसाद, नसीराबाद]

नसीराबाद आने की स्वीकृति।[2]

—:०:—

[पूर्ण संख्या २६९] पत्र

७१३

पंडित सुन्दरलाल[3] रामनारायणजी आनंद रहो !

१० विदित हो कि आपके पास २० नवंबर को पत्र नम्बरी ७०२ भेजा गया है[4] पहुंचा होगा जिस में आपको नीचे लिखी पोथियों के भेजने के लिये लिखा गया था ॥

आर्य्याभिविनय	२५	संध्योपासनादिपंचमहायज्ञविधि	५०
वेदांतिध्वांतनिवारण	११	वेदविरुद्धमतखंडन	३८
१५ समस्तभूमिकामंत्रभाष्यसहित	१०	सत्यासत्यविचार	५०

सो ये पोथी जल्दी भेज दीजिये ॥ यहां पर नित्य व्याख्यान होता है और सब प्रकार से आनंद है ॥

हस्ताक्षर

२२ नवंबर ७८ दयानन्द सरस्वती

२० अजमेर

—:०:—

---

१. इस की सूचना पं० देवेन्द्रनाथ सं० जी० च० पृष्ठ ५०९ में है।

२. इसकी सूचना पं० देवेन्द्रनाथ सं० जी० च० पृष्ठ ५१५ में है।

३. यह पण्डित सुन्दरलाल को भेजे गए पत्र की प्रतिलिपि है, जो परोपकारिणी सभा के संग्रह में विद्यमान है।

२५ ४. द्र०—पूर्णसंख्या २६५ पूर्व पृष्ठ ३१० पर छपा पत्र।

[पूर्ण संख्या २७०]   पत्र

पंडित सुन्दरलाल[1] रामनारायण जी आनंद रहो !

प्रकट हो कि कल आपके पास एक पत्र भेजा गया है[2] जिसमें पोथियां भेजने को लिखा था, परंतु आज आपका पत्र २० नवम्बर का लिखा पहुंचा जिससे मालूम हुआ कि आप पुस्तकें यहां को रवाना कर चुके इसलिये लिखा जाता है कि अब आगे पोथी मत भेजना। और जब रेल पर से पोथी आ जावेंगी तब ही आपके पास रसीद भेज देंगे, और बाबू समर्थदान जी के पास पोथी पहुंच लीं हैं आप खातिर जमा रक्खें ॥ हम बहुत आनंद में हैं ॥

हस्ताक्षर
दयानन्द सरस्वती
अजमेर

२३ नव० ७८

—:०:—

[पूर्ण संख्या २७१]   पत्र

७५१

पंडित सुन्दरलाल[1] रामनारायणजी आनंद रहो !

विदित हो कि पत्र आपका २० नवम्बर का लिखा[3] पुस्तकों की बिल्टी सहित पहुंचा, और आज पुस्तकों का संदूक रेल पर से आ गया है, सो उसमें से नीचे लिखी पोथियां निकलीं, जो कि आप के नाम पर जमा कियी गईं ॥

संस्कारविधि — — —	३०
वेदभाष्यभूमिका मंत्रभाष्यसहित — —	२०
सत्यार्थप्रकाश — — —	१५
आर्य्याभिविनय — — —	२०
वेदांतिध्वांतनिवारण — — —	२१
वेदविरुद्धमतखंडन — — —	३८
सत्यासत्यविचार — — —	५०

---

१. यह पण्डित सुन्दरलाल को भेजे गए पत्र की प्रतिलिपि है, जो परोपकारिणी सभा के संग्रह में विद्यमान है।

२. द्र०—पूर्णसंख्या २६९ का पत्र।

३. यह पत्र और बिल्टी हमें उपलब्ध नहीं हुई।

संध्योपासन — — — १००

आप खातिर जमा रक्खें, औ सब प्रकार से कुशल है ।।

हस्ताक्षर

२७ नवम्बर १८७८ दयानन्दसरस्वती

५ अजमेर

और आपने जो १५ सत्यार्थप्रकाश भेजे हैं, ये आप के पास कहां से आये हैं सो लिखिये ।। और आपने ये क्यों भेज दिये ।। इनकी विकरी तो हो ही नहीं सकती क्योंकि ये पूरे नहीं हैं ।। उत्तर भेजिये ।।

—:o:—

१० [पूर्ण संख्या २७२] पत्र

७८०

पण्डित श्यामजी कृष्ण वर्म्मा आनन्दयुक्त रहो ![1]

प्रकट हो कि अब हमारी सम्मति है कि वेद भाष्य की ३१०० कापी जो हम छपवाते हैं, उन की जगह १५०० कापी छपवावें, १५ क्योंकि ३१०० कापी छपने में खर्च अधिक होता है । इसलिये तुम से पूछते हैं कि १५०० कापी के छपने में क्या खर्च रह जावेगा, और छापेवालों का तथा कागजादि का कितना खर्च कम हो जावेगा, इसकी सब व्यवस्था लिखो । और यह भी लिखो कि राव साहब गोपालराव हरि देशमुख जी कहां हैं और तुम से २० मिले वा नहीं और अमरीका वालों का समाचार क्या है, और केशवलाल निर्भयराम कहां हैं । इस पत्र का उत्तर जयपुर में भेजना, क्योंकि हम यहां से १४ दिसम्बर को चलकर अजमेर होते हुए १५ दि०[2] को जयपुर पहुंच जावेंगे, हम बहुत प्रसन्न हैं ।

हस्ताक्षर

२५ ११ दि० ७८[3] दयानन्द सरस्वती

नसीराबाद जि० अजमेर

—:o:—

---

१. मूल पत्र प्रो० धीरेन्द्र वर्मा जी के संग्रह में सुरक्षित है ।

२. १४ और १५ दिसम्बर को क्रमशः पौष कृष्ण ५ शनिवार और ६ रविवार सं० १९३५ था ।

३. पौष कृष्ण २, सं० १९३५ ।

[पूर्ण संख्या २७३]　　पत्र-सूचना

[उमरावसिंह, मन्त्री आ० स० रुड़की][1]

[१८ दिसम्बर १८७८ से पूर्व]

—:०:—

[पूर्ण संख्या २७४]　　तार-सारांश

[राव युधिष्ठिर सिंह रिवाड़ी]　　५

हम रिवाड़ी आते हैं। सवारी और निवास स्थान का प्रबन्ध कर दें।[2]

दयानन्द सरस्वती

—:०:—

[पूर्ण संख्या २७५]　　पत्र

७९९　　१०

पंडित सुन्दरलाल[3] रामनारायणजी आनंद युक्त रहो !

प्रकट हो कि आपका पत्र नसीराबाद में हमको मिला[4] बहुत आनंद हुआ, अब हम कल १५ दिसम्बर को वहां से अजमेर होते हुए जयपुर आकर सांगानेर दरवाजे के बाहर सदासुख ढड्डा के बाग में ठहरे हैं ॥　　१५

और आज हम इस पत्र के साथ आपके पास २००) हुंडी भेजते हैं सो रसीद बहुत जल्दी भेज देना और आपके जो ३००।।।) हमारी ओर चाहियें सो ये २००) उसमें जमा कर लेना ॥ हम बहुत आनंद में हैं उत्तर शीघ्र भेजें ॥

---

१. इस की सूचना पं० लेखराम कृत जी० च० हिन्दी सं० पृष्ठ ५८१ में है।　　२०

२. यह तार सारांश पं० लेखराम कृत जीवन चरित हिन्दी सं० पृष्ठ ४६३ पर छपा है। यह तार जयपुर से २०-२४ दिसम्बर १८७८ के मध्य कभी दिया गया होगा।

३. यह पण्डित सुन्दरलाल को भेजे गए पत्र की प्रतिलिपि है, जो परोपकारिणी सभा के संग्रह में विद्यमान है।　　२५

४. यह पत्र हमें प्राप्त नहीं हुआ।

हस्ताक्षर
दयानन्दसरस्वती
१६ दि० ७८ जयपुर

—:०:—

[पूर्ण संख्या २७६] तार का सारांश

५ हम सकुशल हैं।[1]

[१६ या २० दिसम्बर १८७८ (कार्तिक कृष्ण ८ या ६ सं० १६३५) जयपुर]

—:०:—

[पूर्ण संख्या २७७] पत्राशय

[रिवाड़ी के पण्डितों को]

१० हमारे निवास स्थान पर ही आकर बातचीत करलो।[2]

—:०:—

[पूर्ण संख्या २७८] पत्र

बाबू प्यारेलाल सभासद आर्यसमाज लाहौर।[3]

आज आपका खत हमको रिवाड़ी में मिला, बहुत खुशी हासिल हुई। हम अजमेर से जयपुर आये थे और ८ रोज[4] वहां कयाम किया। इस अरसे में वहां पर ठाकुर फतेसिंह साहब व बाबू श्री १५ प्रसाद मोहतमिम बन्दोबस्त व जी अखत्यार वो मुअजिज शख्स कपतान वगैरा हम से मिले। और निहायत आनन्द रहा। मगर राजा साहब से मुलाकात नहीं की गई। और वहां से हम २४

---

१. देखिए पण्डित लेखरामकृत जीवनचरित (हिन्दी सं०) पृष्ठ ५५१ २० तथा पण्डित देवेन्द्रनाथ सङ्कलित जी० च० पृष्ठ ५१७। यह तार जयपुर से रुड़की दिया गया था।

२. इस की सूचना पं० देवेन्द्रनाथ सं० जी० च० पृष्ठ ५१८ पर है।

३. पं० लेखराम जी कृत उर्दू जीवनचरित पृष्ठ ५४१ (हिन्दी सं० पृष्ठ ५८०, ५८१) पर उद्धृत।

२५ ४. १५ दिसम्बर (पौष कृष्ण ६) से २४ दिसम्बर (पौष शु० १) तक जयपुर रहे थे।

दिसम्बर को रवाना होकर २५[1] को **रिवाड़ी जिला गुड़गांवां में पहुंचे** और व्याख्यान दिया। अब यहां व्याख्यान पूरा हो चुका है। लिहाजा हम परसों बतारीख ९ जनवरी १८७९ देहली में जाकर सब्जी मण्डी के पास बाबू केशरीलाल के बाग में ठहरेंगे और जो कैफियत वहां की होगी सो तहरीर की जावेगी, और सब ५ तरह से खैरियत है हम बहुत आनन्द हैं। सब सभासदों को नमस्ते ॥

७ जनवरी १८७९[2]

दयानन्द सरस्वती
रिवाड़ी जिला गुड़गांवां

—:o:—

[पूर्ण संख्या २७९] पत्र १०

[3][अज्ञातनामा व्यक्ति को]

—:o:—

[पूर्ण संख्या २८०] पत्र-सारांश

[पण्डित श्यामजी कृष्ण वर्मा][4]

वेदभाष्य का चौथा अङ्क अभी तक क्यों नहीं निकाला ?

[दिल्ली] दयानन्द सरस्वती १५

—:o:—

[पूर्ण संख्या २८१] पत्र

९३७

पण्डित श्याम जी कृष्ण वर्म्मा आनन्द रहो ![5]

---

१. २४ और २५ दिसम्बर को क्रमशः पौष शु० १ मङ्गलवार और २ बुधवार सं० १९३५ था। २०

२. पौष शुक्ल १४, मङ्गलवार, सं० १९३५।

३. उसको सन्तोषजनक पत्र लिख दिया। द्र०—पं० लेखरामजी कृत, हिन्दी अनुवाद, पृ० ४६५।

४. यह पत्र का सारांश ऋ० द० के १७ जनवरी १८७९ के पत्र में मिलता है। पूर्णसंख्या २८० का यह पत्र ११ दिसम्बर १८७८ से १७ २५ जनवरी १८७९ के मध्य कब लिखा गया, यह ज्ञात नहीं है।

५. मूल पत्र प्रो० धीरेन्द्र वर्मा जी के संग्रह में सुरक्षित है।

विदित हो कि आप के पास एक पत्र पहिले भेजा गया है पहुंचा होगा, आज फिर लिखा जाता है कि तुम लिखो कि चौथा अङ्क वेदभाष्य का अब तक क्यों नहीं निकाला और छापेखाने में आज कल क्या काम हो रहा है और बाबू साहब क्या करते हैं। दो दो
५ महीने हो जाते हैं कि अङ्क नहीं निकलता, ग्राहक लोग बहुत तकाजा करते हैं। इस लिये तुम को लिखा है कि जल्दी लिख कर भेजो कि चौथे अङ्क के निकलने में क्या देरी है, हम कल दिल्ली से मेरठ आ गए हैं, यहां पर आठ नव दिन ठहरेंगे, फिर मुजफ्फर-नगर, सहारनपुर, रुड़की होते हुए चैत्र मास में हरिद्वार पहुचेंगे
१० सो जानना ॥

उत्तर शीघ्र भेजो, हम बहुत आनन्द में हैं ॥

हस्ताक्षर
दयानन्द सरस्वती

मेरठ १७ जन० ७९[1]

—:o:—

[पूर्ण संख्या २८२] पत्र

१५ ९४२

पण्डित श्यामजी कृष्ण वर्म्मा आनन्द रहो।[2]

विदित हो कि १७ जन० को तुम्हारे पास एक पत्र[3] भेजा गया है पहुंचा होगा, आज फिर लिखा जाता है कि तुम जल्दी वहां का हाल तलाश करके लिखो कि अङ्क हरिश्चन्द्र ने छपवाया है वा
२० नहीं वा छपवा कर रख छोड़ा है और हानि करना चाहते हैं इसका ब्योरा जल्दी लिख भेजो। और बाबू जी की आज्ञानुसार माघ महीना पूरा होने वाला है इसलिए तुम उन से अब वेदभाष्य का काम ले लो और पांचवां अङ्क तुमही निकालो, और छापे वालों से इकरार लिखा लो कि हमारा काम मितिवार निकाला करे और
२५ हम रुपया दूसरे महीने और तीसरे महीने तक चुकाते रहेंगे, और तुम रुपये पैसे का कुछ संदेह न करो, हम इसका प्रबन्ध ठीक ठीक कर देंगे और तुम विस्तारपूर्वक लिखो कि १५०० वा

---

१. माघ कृष्ण १०, शुक्रवार, स० १९३५।

२. मूल पत्र प्रो० धीरेन्द्र वर्मा जी के संग्रह में सुरक्षित है।

३० ३. यह पत्र ऊपर पूर्णसंख्या २८१ पर छपा है।

२००० कापी के छापने में कितना खर्च कम होगा, बाबू जी लिखते हैं कि १५०० के छपाई में कुल १००) कम होगा जिस में से ७७॥) तो कागज ही के कम हुए फिर छपाई और बंधाई वगैरे का कुछ भी कम नहीं होता, इससे यह हिसाब तुम तलाश करके विस्तारपूर्वक लिखो। जो तुम को हजार काम भी हों तो उनको छोड़ कर इस पत्र के प्रत्येक अक्षर का उत्तर लिखकर बहुत जल्दी भेजो, और यहां मेरठ में कई एक धनाढ्य छापाखा[ना] किया चाहते हैं, इस लिये इसका निश्चय करके लिखो कि टाइप आदि के लेने में कितने रुपये लगेंगे।

हस्ताक्षर
दयानन्द सरस्वती
मेरठ, १९ जनवरी ७९[1]

जिसे तुम ने मेरठ में फोटोग्राफ खैंचने को कहा था, उस ने तैयार कर लिया है ५) भेज कर मंगा लो॥

—:o:—

[पूर्ण संख्या २८३] पत्र-सूचना

[बखतावरसिंह शाहजहांपुर]

[जयपुर से रिवाड़ी तथा देहली होते हुए मेरठ पहुंचने की सूचना][2]

—:o:—

१. माघ कृष्ण १२, रविवार, सं० १९३५।

२. मासिक पत्र आर्यदर्पण, जनवरी सन् १८७९, पृ० २४ पर निम्नलिखित सूचना छपी है। उन दिनों यह पत्र उर्दू में निकलता था—

"सब आर्य भाइयों को वाजेह हो कि बतारीख २४ माहे अक्तूबर (दिसम्बर चाहिये। भूल से अक्तूबर छपा है। भ० द०) सन् ७८ पण्डित स्वामी दयानन्द सरस्वती मुकाम जयपुर से रवाना होकर मुकाम रिवाड़ी, जिला गुड़गांवां में पहुंचे। और ९ तारीख जनवरी को रिवाड़ी से देहली तशरीफ लाए। तारीख १६ जनवरी को देहली से रवाना होकर बमुकाम मेरठ पहुंचे। और वहां पर आठ रोज रह कर मुकाम मुजफ्फरनगर, देवबन्द, सहारनपुर रुड़की होते और हर जगह हफता अशरा ठहरते हुए माहे चेत में कुम्भ के मेले पर बमुकाम हरद्वार पहुँच जावेंगे। इत्तलाअन अर्ज

[पूर्ण संख्या २८४] उर्दू-पत्र

लाला रामशरनदास जीव साहिब आनन्दित रहो।[1]

जो कि तजवीज हुई है कि आर्य्यसमाज की तरफ से एक छापहखाना जारी किया जावे। और हर एक हिस्सा मुब्लिग सौ
५ रुपया का मुकरिर हुआ है। लिहाजा हमारे भी उस में दो सौ रुपया के दो हिस्सा शामिल कर लेवें। और जब आप चाहें रुपया मजकूर हम से ले लेवें।

स्वामी दयानन्द सरस्वती

मेरठ, २० जनवरी सन् १८७९[2] दयानन्द सरस्वती

--:o:--

१० [पूर्ण संख्या २८५] विज्ञापन

ओं नमः सर्वशक्तिमते परमेश्वराय

विज्ञापनपत्रमिदम् ॥[3]

सब सज्जन लोगों को विदित हो कि पण्डित स्वामी दयानन्द सरस्वती जी महाराज विक्रमादित्य के सं० १९३५ फा० शु० ६

---

१५ किया, फक्त।" [पूर्णसंख्या २७८ में २५ दिसम्बर को रिवाड़ी पहुंचना लिखा है।]

श्री स्वामी जी ने मेरठ से कोई पत्र मु० बखतावरसिंह को शाहजहांपुर भेजा होगा। उस पत्र में यह सब वृत्तान्त लिखा होगा। उसी पत्र के आधार पर मुंशी जी ने यह सूचना अपने पत्र में छापी होगी।

२० १. मूल पत्र हमारे संग्रह में सुरक्षित है। यह पत्र सेठ धनपतिराय जी सुपुत्र ला० रामशरनदास जी मेरठ से प्राप्त हुआ था। ला० मामराज जी इसे लाए थे।

२. माघ कृष्ण १३, सोमवार, सं० १९३५।

३. यह अद्भुत विज्ञापन संवत् १९३५ के कुम्भ के मेले पर सहस्रों की
२५ संख्या में हरद्वार के समस्त मार्गों, घाटों, पुलों और मन्दिरों की दीवारों पर लगवाया गया था।

पं० लेखरामकृत उर्दू जीवनचरित पृ० ६२६-६१८ पर देवनागरी अक्षरों में उद्धृत है (द्र०—हिन्दी सं० पृष्ठ ६४४-६४७)।

गुरुवार को हरिद्वार में आकर श्रवणनाथ के बाग के पास निर्मलों की छावनी के सामने बूचा नाला के पार मूला मिस्त्री के खेतों में ठहरे हैं। जो महाशय मनुष्य उन स्वामी जी से संभाषण करके लाभ उठाना चाहें, वे पूर्वोक्त स्थान पर उपस्थित होकर सभ्यता और प्रीतिपूर्वक वार्त्तालाप करें॥ ५

सब सज्जनों के लिये वेदोक्त उपदेश

ऐसा कौन मनुष्य होगा जो अपना, अपने बन्धुवर्गों का हित और परमेश्वर की आज्ञा का पालन करना न चाहे। क्या कोई ऐसा भी मनुष्य है जो परस्पर मित्रता, सदुपदेश, प्रीति, धर्मानुष्ठान, विद्या की वृद्धि, दुष्टकाम और आलस्य के त्याग, श्रेष्ठ कामों का सेवन, १० परोपकार और पुरुषार्थ के विना सर्वहित कर सके। और ईश्वर प्रतिपादित वेदोक्त अनुसार आचरण किये विना सुख को प्राप्त हो सके। इसलिये आर्यों के इस महा-समुदाय में वेदमन्त्रों के द्वारा सब सज्जन मनुष्यों के हित के लिये ईश्वर की आज्ञा का प्रकाश संक्षेप से किया जाता है। जिसको सब मनुष्य देख सुन और १५ विचार कर ग्रहण करें और इस मेले में तन मन और धन से आने के सत्य सुखरूप फलों को प्राप्त हों और अपने मनुष्य देहरूप वृक्ष के धर्म्म, अर्थ, काम और मोक्षरूपी चार फलों को पाकर जन्म सुफल करें। और अपने सहचारी लोगों को भी उक्त फलों की प्राप्ति करावें। इस विषय में नीचे लिखे वेदमन्त्रों का प्रमाण देख २० लीजिये।

ओ३म्। विश्वानि देव सवितर्दुरितानि परासुव।
यद्भद्रं तन्न आसुव।१। ऋ० मं० ५ सू० ८२ मं० ५।
उत त्वं सख्ये स्थिरपीतमाहुर्नैनं हिन्वन्त्यपि वाजिनेषु।
अधेन्वा चरति माययैष वाचं शुश्रुवाँ अफलामपुष्पाम्।२। २५
यस्तित्याज सचिविदं सखायं न तस्य वाच्यपि भागो अस्ति।
यदीं शृणोत्यलकं शृणोति नहि प्रवेद सुकृतस्य पन्थाम्।३।
सर्वे नन्दन्ति यशसागतेन सभासाहेन सख्या सखायः।
किल्बिषस्पृत्पितुषणिर्ह्येषामरं हितो भवति वाजिनाय।४।
सक्तुमिव तितउना पुनन्तो यत्र धीरा मनसा वाचमक्रत। ३०

अत्रा सखायः सख्यानि जानते भद्रैषां लक्ष्मीर्निहिताधि वाचि।५।

ऋ० मं० १० सूक्त ७१ मन्त्र ५।६।१०।२॥

सह नाववतु सह नौ भुनक्तु सह वीर्यं करवावहै ।
तेजस्विनावधीतमस्तु मा विद्विषावहै ॥
ओ३म् शान्तिः शान्तिः शान्तिः ।६।

तैत्तिरीयारण्यके प्र० ८। अनु० १।

॥ इन मन्त्रों के अर्थ ॥

[१]सब मनुष्य इस प्रकार ईश्वर की प्रार्थना करें कि हे(देव)सब सुखों के देने और (सवितः) सब जगत् की उत्पत्ति और धारण करने वाले परमेश्वर ! आप कृपा कर के (नः) हमारे जितने (विश्वानि) सब (दुरितानि) दुष्ट कर्म और दुःख हैं, उन सब को (परासुव) दूर कीजिये और (यत्) जो (भद्रम्) शुभ कर्म और नित्य सुख हैं उनको हमारे लिये सदा प्राप्त कीजिये ॥१॥

[२] परमात्मा ऐसे धार्मिक मनुष्यों को वेद और अन्तर्यामीपन से उपदेश करता है कि जो अविद्वान् मनुष्य (अपुष्पाम्) साधन रूप पुष्पों और (अफलाम्) [धर्म] अर्थ काम और मोक्षरूपी फलों से रहित (वाचम्) अर्थज्ञान के बिना वाणी को (शुश्रुवान्) सुन कर (एषः) यह पुरुष (अधेन्वा) सुशिक्षा शब्द अर्थ और सम्बन्ध के बोध रहित वाणी और छल कपटादि बुरे कामों से युक्त होकर (चरति) चलता है, जिसको अज्ञानी (आहुः) विद्वान् लोग कहते हैं (उत) जिसको कुछ भी दुःख (न) नहीं प्राप्त होता और जो आप विद्वान् होकर (एनम्) इस विद्या रहित मनुष्य को (स्थिर-पीतम्) दृढ़विद्यायुक्त करके (हिन्वन्ति) बढ़ाते (त्वम) उसको (सख्ये)वैर विरोध छुड़ाकर मित्र होने के लिये प्राप्त करते(अपि) और उसको (वाजिनेषु) अतिश्रेष्ठ गुण कर्म युक्त करके सुखी कर देते हैं, वे मनुष्य धन्य हैं ॥२॥

[३] इन से विरुद्ध (यः) जो मनुष्य(सचिविदम्)सब से प्रीति प्रेम भाव से सब को सुख प्राप्त कराने वाले (सखायम्) सर्वहित-कारी मित्रों को (तित्याज)छोड़ देता है अर्थात् औरों से मित्रभाव नहीं रखता (तस्य) उसका (वाचि) सुशिक्षित विद्या की वाणी में (अपि) कुछ भी (भागः) अंश (नास्ति) नहीं है, अर्थात् वह भाग्यहीन पुरुष और (यत्) जो कुछ वह विद्वानों वा अविद्वानों के

मुख से (ईम्) शब्द को (शृणोति) सुनता है सो सब (अलकम्) अर्थ प्रयोजन रहित (शृणोति) सुनता है अर्थात् वह विद्या और ज्ञान के बिना अर्थ का अनर्थ और अनर्थ का अर्थ समझ कर (सुकृतस्य) धर्म्म के (पन्थाम्) मार्ग को (न हि प्रवेद) कभी नहीं जान सकता। और जो आप सब का मित्र और सब को अपने मित्र ५ समझ के सत्य से सब का उपकार करता है, वही धर्म्म के मार्ग को जान कर आप उसमें चल और सब को चला के धन्यवाद के योग्य होता है ॥३॥

[४] इन को ऐसे न होने और होने चाहिये —जो मनुष्य (वाजिनाय) विद्यादि शुभ गुण प्राप्ति करने और कराने के लिये (किल्विषस्पृत्) पाप का सेवन कराने द्वारा (पितुषणिः) स्वार्थी (भवति) १० होता है, वह सुख को कभी प्राप्त नहीं होता। और जो (हि) निश्चय करके (एषाम्) इन मनुष्यादि वर्त्तमान जीवों का (अरं हितः) अत्यन्त हितकारी है, उस (यशसा) कीर्तिमान् (सभासाहेन) सभा का भार उठाने और सभा को उन्नति करने (आगतेन) सब १५ प्रकार से प्राप्त होने वाले (सख्या) मित्र के साथ (सखायः) मित्र भाव रखते हैं वे (सर्वे) सब लोग (नन्दन्ति) परस्पर सदा आनन्दयुक्त रहते हैं ॥४॥

[५] जहां ऐसे मनुष्य होते हैं, वहां दुःख का क्या काम है-(सक्तुमिव) जैसे सत्तू को (तितउना) छालनी से छान कर सार असार २० को अलग अलग करके शुद्ध कर देते हैं, वैसे (यत्र) जिस देश, जिस समुदाय, जिस सभा में (धीराः) धार्मिक विद्वान् लोग (मनसा) विज्ञान और प्रीति से (वाचम्) वाणी को सुशिक्षित और विद्यायुक्त करके सत्य का सेवन और असत्य का त्याग करने के लिये (सखायः) परस्पर सुहृद् होकर (सख्या) मित्रों के कर्म्म और २५ भावों को (जानते) जानते और जनाते हैं। (अत्र) इस में वर्त्तमान होने वाले (एषाम्) मनुष्यों ही की (वाचि) सत्य वाणी में (भद्रा) कल्याण और सुख करने वाली (लक्ष्मी) विद्या शोभा और चक्रवर्ती राज्य की श्री (निहिता) सदा स्थित रहती है, और जो एक दूसरे के साथ सुख करने में निश्चित नहीं होते, ३० उनको दरिद्रता घेर कर सदा दुःख देती रहती है ॥५॥

इसलिए हे मनुष्य लोगो ! तुम ऐसा समझ के इस आगे लिखी

बात को सदा करते रहियो।

[६] (सह नाववतु) हम लोग परस्पर एक दूसरे की रक्षा सदा करते (सह नौ भुनक्तु) एक दूसरे के साथ विरोध छोड़कर आनन्द भोगते (सह वीर्यं करवावहै) और एक दूसरे का बल परा-
५ क्रम, विद्या और सुख को बढ़ाते रहें और (तेजस्विनावधीतमस्तु) हमारे बिच में विद्या का पठन पाठन (तेजस्वी) अत्यन्त प्रकाश युक्त हो। (मा विद्विषावहै) और हम लोग आपस में वैर विरोध कभी न करें। इस प्रकार चाल चलन शुद्ध करने से (ओ३म् शान्तिः शान्तिः शान्तिः) जो हमारे (आध्यात्मिक) शरीर की पीड़ा
१० (आधिभौतिक) शत्रु आदि से पराजय आदि क्लेश का होना, (आधिदैविक) अर्थात् अतिवर्षा होने, न होने आदि और मन आदि इन्द्रियों की चञ्चलता से तीन प्रकार का दुःख होता है वह कभी उत्पन्न न हो, किन्तु सदा सब सुख बढ़ते रहते हैं।

विचारना चाहिये - हे मनुष्य लोगो ! ऊपर लिखी व्यवस्था
१५ पर आत्मा में ध्यान देकर देखो कि परमेश्वर ने वेद द्वारा हम सब मनुष्यों को सुखी होने के लिये कैसा सत्योपदेश किया है कि जिस में चलने से अपने लोगों में सब दुःखों का नाश और सत्य सुखों की वृद्धि बनी रहे। क्या तुम ने नहीं सुना कि अपने पुरुष ब्रह्मा से लेकर जैमिनि पर्य्यन्त महर्षि और स्वायम्भुव [मनु] से लेके महा-
२० राजे युधिष्ठिर पर्य्यन्त राजर्षि लोग वेदोक्त धर्म्म के अनुकूल चलके कैसे-कैसे बड़े विद्या और चक्रवर्ती राज्य के असंख्यात सुखों को भोगते, विमान आदि सवारियों में बैठते, सर्वत्र विद्या और धर्म को फैला कर सदा आनन्द में रहते थे। यह बड़े आश्चर्य की बात है कि पृथ्वी, जल, अग्नि, वायु, आकाश, सूर्य, चन्द्रमा, वर्ष, अयन,
२५ ऋतु, मास, पक्ष, दिन, रात, प्रहर, मुहूत, घड़ी, पल, क्षण, आंख, नाक, कान आदि, शरीर, ओषधि वनस्पति, खाना, पीना आदि व्यवहार ज्यों के त्यों बने हैं और हम आर्यों का हाल क्यों बदल गया ? हे मनुष्यों ! आप लोग अत्यन्त विचार करके देखो कि जिसका फल दुःख वह धर्म्म और जिसका फल सुख वह अधर्म्म
३० कभी हो सकता है ? अपना हाल अन्यथा होने का यही कारण है कि जिसको ऊपर लिख चुके वेदविरुद्ध चलना। और उस प्राचीन अवस्था की प्राप्ति कराने वाला कारण वेदोक्तानुकूल चलना है।

और वह चाल-चलन यह है कि जैसा आर्य्यावर्त्तवासी आर्य्य लोग आर्य्यसमाजों के सभासद करते और कराना चाहते हैं कि संस्कृत विद्या के जानने वाले स्वदेशियों की बढ़ती के अभिलाषी, परोपकारक निष्कपट हो के सब को सत्य विद्या देने की इच्छायुक्त, धार्मिक विद्वानों की उपदेशक मण्डली और वेदादि सत्य शास्त्रों के पढ़ाने के लिये पाठशाला किया चाहते हैं। इस में जिस किसी आर्य्य की योग्यता हो वह अपने अभिप्राय को प्रसिद्ध करके इस परोपकारक महोत्तम कार्य्य में प्रवृत्त हो। इसी से मनुष्यों की शीघ्र उन्नति हो सकती है। मैं[1] निश्चित जानता हूं कि इस बात को सुन के सब भद्र लोग [इसे] स्वीकार करके आर्योन्नति करने में तन, मन, धन से प्रवृत्त होंगे निस्सन्देह ॥

भूतरामाङ्कचन्द्रेऽब्दे माघमासि सिते[2] दले।
अमायां बुधवारे वै पत्रमेतदलेखिषम् ॥[3]

—:०:—

[पूर्ण संख्या २८६]　　पत्र

नं० १००७

श्रीयुत कृपाराम स्वामी आनन्द रहो !

ता० १ फरवरी सन् १८७९ का लिखा रजिस्टर पत्र पहुंचा। देखकर आनन्दित होके समाचार जानके प्रत्युत्तर लिखता हूं। वहां रहने वालों से मेरा आशीर्वाद कहना। वहां आने में मुझ को बहुत प्रसन्नता है। परन्तु मैं अनुमान करता हूं कि जो बन सकेगा तो सं० १९३६ वैशाख लगते ही आने का सम्भव है। **यहां सहारनपुर से ता० ६ फरवरी को रुड़की को जाके वहां ८ वा १५ दिन रह के हरद्वार में जाके** कनखल और ज्वालापुर के बीच नहर के पुल

---

१. विज्ञापन के अन्त में श्री स्वामी जी का नाम अवश्य रहा होगा। यहां 'मैं' शब्द से वे अपना संकेत करते हैं। इस विज्ञापन का निर्देश अगले पूर्णसंख्या २८८ के पत्र पृष्ठ ३२७ में भी है।

२. पं० लेखराम जी कृत जीवन चरित में **"माघमासासिते दले"** शुद्ध पाठ है। ऊपर के पाठ में किसी कारण अशुद्धि हो गई प्रतीत होती है।

३. सं० १९३५, माघ कृष्ण ३०, बुधवार = २२ जनवरी १८७९। यह विज्ञापन चशमाए फैज प्रेस मेरठ में छपा था।

पर बड़ी सड़क पर **मूला मिस्तरी के बाग** में डेढ़ महीना ठहरने का विचार है। पीछे आप लोगों के यहां आने का विचार है। सो जानिये। क्या आप लोगों से मैं नहीं मिला चाहता ऐसा सम्भव है?

५ सम्वत् १९३५ मिति माघ शु० १० आदित्यवार।[1]

दयानन्द सरस्वती

—:०:—

[पूर्ण संख्या २८७] पत्र

सं० १९३५ मि० फाल्गुण शु० ८ शनि ता० १ मार्च १८७९।[2]
पण्डित श्यामजी कृष्ण वर्मा आनन्दित रहो!

१० ता० २४ फरवरी का लिखा पत्र आप का आया, सब हाल विदित हुआ। मेरी ओर से पाताल देश वासी लोगों को बहुत प्रेम प्रीति के साथ आशीर्वाद यथोचित कहके कुशल क्षेम पूछना और वे वहां कितने दिन रहके किधर-किधर जाना होगा। जब लाहौर आदि समाजों में जाना हो तब पहिले ही हम को विदित कर देना
१५ उचित है, उन का सत्कार यथायोग्य सर्वत्र हो और वे मुम्बई में नवीन समाज और थियोसोफिकल सुसायटी का स्थापन करेंगे सो क्या बात है, समाज तो है ही है, पुनर्नवीन समाज और थियोसोफिकल की स्थापना करना कुछ समझ में नहीं आया, इस का खुलासा लिखो, जिस से समझना सुगम हो। आगे जो रुपैयों के
२० विषय में लिखा सो विदित हुआ, उन सब की इच्छा हो तो वेद-भाष्यादि के छपाने में खरच हो तो अच्छा है, आगे इस से अधिक परोपकारक विषय हम को नहीं विदित होता, आगे जैसी सब की

---

१. २ फरवरी १८७९। मूल पत्र अतिजीर्ण पं० बुद्धदेव जी विद्यालङ्कार की भगिनी के पास हरद्वार गुरुकुल काङ्गड़ी में है। इसे हमने पहले मेरठ से आई प्रतिलिपि से छापा था, फिर सन् १९३३ में ला० मामराज
२५ जी ने मूल पत्र से मिला लिया था। यह पत्र सहारनपुर से देहरादून भेजा गया था॥

२. यह पत्र आद्योपान्त श्री स्वामी जी के स्वहस्त से लिखा हुआ है। मूल पत्र प्रो० धीरेन्द्र वर्मा जी के संग्रह में सुरक्षित है। यह हरद्वार से
३० लिखा गया।

प्रसन्नता हो सो करें। आगे एक मुन्शी समर्थदान वेदभाष्य का काम वहां करेगा। यह बड़ा भद्र पुरुष है, नागरी फारसी तो अच्छी तरह से जानता है थोड़ी सी इंगरेजी भी जाने है, अपने घर का प्रतिष्ठित मातवर[1] पुरुष है। यह यहां हरद्वार से दो चार दिनों में मुम्बई को आने के लिये रवाना होके वहां पहुंचेंगे। इस को सब ५
काम छापे वालों से और कागज वालों से नियम व्यवहार करा देना और इन को किसी प्रकार का दुःख न हो, स्थान आदि का प्रबन्ध कर देना, सब से मिलाप भी करा देना और एक चपरासी भी, मातवर आगे का हो तो वही, नहीं तो कोई दूसरा रखवा देना, ठीक-ठीक व्यवस्था करवा देना चाहिये॥ १०

(दयानन्द सरस्वती)

—:०:—

[पूर्ण संख्या २८८] पत्र

सं० १९३५ मि० फाल्गुण शु० ११ मंगल ता० ४ मार्च १८७९।[2]
पण्डित श्यामजी कृष्ण वर्म्मा आनन्दित रहो!

तुम्हारा ता० २६ फरवरी का लिखा पत्र आया, सब हाल १५
विदित हुआ। मैं बहुत शोक इस बात में करता हूं कि हमारे प्रिय बन्धुवर्ग पाताल देश निवासी लोगों को मुम्बई में आके मिल नहीं सकता, क्योंकि हरद्वार में चैत्र की समाप्ति पर्य्यन्त ठहरने का नोटिस फाल्गुण शुदि ६ गुरुवार से दे चुका हूं[3] और यहां इस बात की प्रसिद्धि भी कर चुका हूं, अब इस को अन्यथा नहीं कर सकता। २०
जब वे इस देश में लाहौर आदि के समाजों को देखने को आवेंगे तब यहां वा कहीं अत्यन्त प्रेम के साथ उन से मिलूंगा और बात चीतें भी यथोचित होंगी। उन से मेरा आशीर्वाद कहके कुशल क्षेम प्रेम से पूछना और जो तुमने समाज के विषय में लिखा कि न आओगे तो यहां का आर्य्यसमाज टूट जायगा क्या तुम ने समाज २५
हरिश्चन्द्र चिन्तामणि के ही भरोसे किया था और जो मेरे आने

---

१. अर्थात् भरोसेदार=विश्वस्त।

२. यह पत्र आद्योपान्त श्री स्वामी जी के स्वहस्त से लिखा हुआ है। मूल पत्र प्रो० धीरेन्द्र वर्माजी के संग्रह में सुरक्षित है।

३. यह नोटिस पूर्णसंख्या २८५ पृष्ठ ३२० से ३२५ तक छपा है। ३०

जाने पर ही समाज की स्थिति है तो मैं अकेला कहां-कहां जा सकता हूं जो समाज में अयोग्य प्रधान हो उसको छुड़ा कर दूसरा नियत करके समाज का काम ठीक-ठीक चलाना चाहिये। कल यहां से चल के मुन्शी समर्थदान वेदभाष्य के काम पर नियत ५ होके मुम्बई को आते हैं, तुम से मिलेंगे। छापेवालों और कागज वालों से ठीक-ठीक नियम करा देना और बाबू हरिश्चन्द्र चिन्तामणि से भी सब पुस्तक पत्रे दिला देना, सब हिसाब किताब करा के शीघ्र खुलासा करा देना और इन को मकान आदि का क्लेश कुछ भी न होने पावे॥

१० (दयानन्द सरस्वती)

—:o:—

[पूर्ण संख्या २८९] पत्र

सं० १९३५ फाल्गुण शुदि १२ बुधवार, ता० ५ मार्च १८७९[1]

स्वस्ति श्रीमच्छ्रेष्ठोपमायुक्तेभ्यः श्रीयुतश्यामजिकृष्णवर्मभ्यो दयानन्दसरस्वतीस्वामिन आशिषो भूयासुस्तमां, शमिहास्ति १५ तत्रत्यं भवदादीनां च नित्यमाशासे॥ अग्र इदं बोध्यमेकं मनस्विनं समर्थदाननामानं पुरुषं वेदभाष्यप्रबन्धार्थं भवत्सनीडं मुम्बापुर्यां वर्त्तमानेऽहनि प्रेषयामि, यथासमयमयं तत्र प्राप्स्यत्यस्मै कथंचित्क्लेशो न स्यात्तथानुष्ठेयं, वेदभाष्यसम्बन्धिकार्याणि संसेधनीयानि[2], नैवात्र विलंबः कार्य इति॥ ये तत्र सभासदः सज्जनाः २० सन्ति तैः सह संमेलनम्। ये तत्र पातालदेशनिवासिनो वर्त्तन्ते

---

१. यह पत्र आद्योपान्त श्री स्वामी जी के स्वहस्त से लिखा हुआ है। इसे मुन्शी समर्थदान के साथ भेजा था। मूल पत्र प्रो० धीरेन्द्र वर्मा जी के संग्रह में सुरक्षित है।

२. **संसेधनीयानि**—कई लोग इस प्रयोग को अशुद्ध समझते हैं। उन के २५ मत में संसाधनीयानि पाठ होना चाहिये। परन्तु यह बात अयुक्त है। ऋषि दयानन्द ने यजुर्वेदभाष्य २।१७ तथा ३।१६ के भावार्थ में भी **'संसेधनीयः'** पद का प्रयोग किया है। यजुर्वेद भाष्य के तीनों हस्तलेखों में दोनों स्थानों पर यह पाठ है। इससे यह सुनिश्चित है कि यह प्रमाद पाठ नहीं है। श्री स्वामी जी महाराज ने यह प्रयोग **'षिधु संराद्धौ'** दैवादिक धातु से बनाया ३० है।

तेभ्योऽत्यन्तादरेणाशिषः संश्राव्य कुशलक्षेमता प्रष्टव्या ।। यथा मयि प्रीति[1] वर्त्तते तथैवैतस्मि[न्] प्रेमभावो विधेयो विद्याऽध्ययन-सहायः स्थानभृत्यप्रबन्धञ्च[2] यथावत्समर्थदानस्य कार्य इति च ।।[3]

(दयानन्द सरस्वती)

[भाषानुवाद] ५

संवत् १९३५ फाल्गुण शुदि १२, बुधवार, ता० ५ मार्च १८७९

स्वस्ति श्रेष्ठ उपमायुक्त श्रीयुत श्यामजी कृष्ण वर्मा को स्वामी दयानन्द सरस्वती स्वामी के अनेकधा आशीर्वाद। यहां कुशल है और वहां के आप सब का कुशल नित्य चाहता हूं। आगे यह जाने कि मैं आज आप के पास एक मनस्वी समर्थदान नामक १० **पुरुष को वेदभाष्य के प्रबन्ध के लिये बम्बई भेज रहा हूं। वह यथा समय वहां पहुंचेगा। उसे किसी प्रकार का क्लेश न होवे ऐसा**

---

१. प्रीति — लेखक ने नपुंसक लिङ्ग में प्रयोग माना है।

२. **स्थानभृत्यप्रबन्धं च** —प्रबन्ध शब्द घञ्प्रत्ययान्त पुंल्लिङ्ग माना जाता है, परन्तु महाभाष्यकार के अनेकत्र प्रयुक्त **'सम्बन्धमनुवर्तिष्यते'** १५ प्रयोग के अनुसार इसे भी नपुंसक लिङ्ग में साधु समझना चाहिये। आगे 'कार्यः' क्रिया का निर्देश है। ऐसा विलिंग निर्देश इसलिये किया है कि ऋषि दयानन्द प्रबन्ध शब्द को पुंल्लिङ्ग और नपुंसक लिङ्ग दोनों प्रकार का मानते हैं। यद्यपि आधुनिक वैयाकरणों के मतानुसार एक वाक्य में विलिङ्ग प्रयोग नहीं होना चाहिये, तथापि प्राचीन ग्रन्थों में ऐसे प्रयोग २० बहुत से उपलब्ध होते हैं। **'वेदाः प्रमाणम्'** यह इस विषय का प्रधान वाक्य है। इस में लिङ्ग और विभक्ति दोनों की भिन्नता है। **'प्रमाणम् परमं श्रुतिः'** (मनु० २।१३) में भी यही विलिङ्गता है। प्रमाण शब्द नित्य नपुंसक लिङ्ग है, ऐसा मत भी युक्त नहीं, क्योंकि मीमांसा भाष्य (१।३।३) में **'प्रमाणायां स्मृतौ'** प्रत्यक्ष स्त्रीलिङ्ग का पाठ उपलब्ध होता है। इसलिए २५ लिङ्ग के विषय में **'लिंगमशिष्यं लोकाश्रयत्वाल्लिंगस्य'** महाभाष्यकार का यह वचन ही शरण है।

३. इसी पत्र के साथ आर्यसमाज लाहौर के पुस्तकाध्यक्ष श्री वल्लभ-दास का एक पत्र लगा है। उस पर श्री स्वामी जी की लिखी एक टिप्पणी है। उसे हम तिथि-क्रमानुसार पूर्ण संख्या २१८ पृष्ठ २८० पर छाप चुके ३० हैं।

प्रबन्ध करें। वेदभाष्य सम्बन्धी कार्य में सिद्ध करें। इस कार्य में विलम्ब न करें। वहां जो सभासद सज्जन हैं उनसे मिलवावें। और जो अमेरीका देशवासी आये हुए हैं उनको अत्यन्त आदर-पूर्वक आशीर्वाद कहकर कुशल क्षेम पूछें॥ जैसे आप की मेरे में ५ प्रीति है वैसी ही इस (समर्थदान) के प्रति भी प्रेम भाव रखें। समर्थदान के लिये विद्या के अध्ययन में सहायता, स्थान और भृत्य का प्रबन्ध करें।

(दयानन्द सरस्वती)

—:०:—

[पूर्ण संख्या २९०] पत्र-सूचना

१० [महाराज काश्मीर][1]

—:०:—

[पूर्ण संख्या २९१] पत्रांश

[मुन्शी समर्थदान——...][2]

मुम्बई जा कर अमरीका वालों से मिलना और हाल लिखना॥

१५ चैत्र वदी २, सोमवार संवत् १९३५॥[3]

(हरद्वार)

—:०:—

---

१. पं० लेखरामकृत जीवनचरित (हि० सं० पृ० ६५४) में लिखा है--महाराजा काश्मीर ने एक पत्र भेजा था जिसमें लिखा था - ईसाई मुसलमान या अन्य जातीय पुरुष आर्य धर्म में आ सकते हैं वा नहीं? 'इस विषय पर एक २० पुस्तक बना दें।' पत्र लाने वाले से कहा 'आप यहां ठहरें, जब जायें तो सूचना देकर जायें। मैं पत्र महाराज के नाम पर दूंगा।' स्वामी जी महाराज २७ फर्वरी से १४ अप्रेल (१८७९) तक हरिद्वार में रहे थे। यहां यह स्मर्तव्य है कि महाराजा काश्मीर के आदेश से निर्मित 'रणवीरप्रकाश' पुस्तक में विधर्मियों की शुद्धि का सप्रमाण प्रतिपादन किया गया है। महा-२५ राजा काश्मीर के पत्र का सारांश तीसरे भाग में देखें।

२. पं० लेखरामकृत उर्दू जीवनचरित पृ० ८३४ (हिन्दी सं० पृष्ठ ८६७) पर इतना अंश उद्धृत है। ३. १० मार्च, १८७९।

[पूर्ण संख्या २९२]　　पत्र-सारांश

[कर्नल आल्काट, बम्बई]

आप लोग हरद्वार न आवें। मेले में कष्ट होगा।[1]

—:o:—

[पूर्ण संख्या २९३]　　पत्र

Hardwar　　५
16 March 1879.[2]

Lalla Madho Lall
Secretary, Arya Samaj
Dinapore,[3]

Dear sir,　　१०

I have the pleasure to acknowledge receipt of your letter of 13th instant, containing 3 currency notes aggrigating Rs. 20/- and postage stamps for annas five, being cash of the books mentioned therein:—

I am very glad to hear that efforts are being made for establishing Arya Sanskrit Patsala still more that Rs. 102/5 are collected in its aid. I shall be happy to hear further of your progress.　　१५

There are 10 copies of Satyarth Prakash available. The other contents of your letter the 5th Number of Veda Bhash.　　२०

Always your well wisher.

[दयानन्द सरस्वती]

[भाषानुवाद]

हरद्वार
१६ मार्च १८७९[2]　　२५

---

१. यह पत्र-सारांश पं० लेखरामकृत जी० च० हिन्दी सं० पृष्ठ ८१७ तथा पं० देवेन्द्रनाथ सं० जी० च० पृष्ठ ५४३ के अनुसार बनाया है।

२. चैत्र कृष्ण ९, रविवार सं० १९३६। मूल पत्र आर्यसमाज दानापुर के संग्रह में सुरक्षित है।

३. यहां लेखक प्रमाद से दानापुर का दीनापुर बन गया है।　　३०

लाला माधोराम
मन्त्री आर्य्यसमाज
दीनापुर[1]

प्रिय महाशय !

५ आप का १३ तारीख का पत्र मिला[2], प्रसन्नता हुई। उस में ३ करेन्सी नोट २० रु० के और पांच आना के टिकट थे। यह रुपया वहां लिखी पुस्तकों का मूल्य है।

मुझे यह सुन कर बहुत प्रसन्नता हुई है कि आप आर्य्य संस्कृत पाठशाला का यत्न कर रहे हैं, और भी अधिक प्रसन्नता इस बात की है कि १०२।—)
१० रु० इस की सहायता में एकत्र हो गये हैं।

मैं आगे आप की उन्नति सुन कर प्रसन्न हूंगा।

सत्यार्थप्रकाश की १० प्रतियां मिल सकती हैं। आप की दूसरी बात का उत्तर है, वेदभाष्य का पांचवां अंक।

आप का सदा हितैषी
१५ (दयानन्द सरस्वती)

—:o:—

[पूर्ण संख्या ३९४] पत्र-सूचना

कर्नल अलकाट·········।[3]
ता० २४ मार्च १८७९ (चैत्र शु० २ सोम, सं० १९३६)

—:o:—

[पूर्ण संख्या ३९५] पत्रांश[4]

२० अमरीका वालों से अति प्रेम से हमारा नमस्कार कहना और उन से कुशलता पूछना कि लाहौर आदि के समाज में आप लोगों के लिये तय्यारी कर चुके हैं, वहां कब तक जावेंगे **और उन्होंने संस्कत पढ़ने का आरम्भ किया है वा नहीं** और जो कुछ वे हमारे

---

१. द्र० — पूर्व पृष्ठ ३३१ की टिप्पणी ३।
२५ २. इस पत्र का सारांश तृतीय भाग में देखें।
३. इस पत्र की सूचना अगली पूर्णसंख्या ३९५ के पत्र के अन्त में है।
४. सम्भवत: यह पत्र प्रबन्धकर्ता वेदभाष्य (मु० समर्थदान) को लिखा गया था।

विषय में कहा करें सो लिख दिया करना और हम नहीं लिखें तो भी उन की कुशलता आदि सदैव लिखते रहें। यहां मेला अब तक साधुओं का ही है। गृहस्थ लोग तो कम आए हैं। हमने एक पत्र कर्नल अलकाट साहब को २४ ता० को और दिया है। तुम उन से उत्तर लिखवाना[1]। शामलाल खन्ना को नमस्ते। चैत्र सुदी ४ संवत् १९३६। हरद्वार। ५

२६ मार्च १८७९[2]　　　　दयानन्द सरस्वती

—:o:—

[पूर्ण संख्या २९६]　　पत्रांश[3]

... ...

दो लाख के लगभग वैरागी तथा संन्यासी आदि आए हैं। मेला के समाप्त होने का समाचार है। हैजा से ५ व्यक्ति तीन दिन में मर गये हैं। १०

चैत्र सु० [४][4] [सं० १९३६]　　　　दयानन्द सरस्वती
२७ मार्च १८७९　　　　हरद्वार

—:o:—

[पूर्ण संख्या २९७]　　पत्रांश[5] १५

... .

हम को पन्द्रह दिन से दस्त आते हैं।[6] दिन भर में १०, १२। अब दो एक दिन से आराम है परन्तु निर्बलता बहुत है। सो यहां से १२ ता० को देहरादून के पर्वत को जावेंगे। वहां से मुंबई आने

१. द्र० - पूर्व पृष्ठ ३३२ की टिप्पणी ४। २०

२. पं० लेखरामकृत उर्दू जीवनचरित पृ० ६२४ (हिन्दी सं० पृष्ठ ६५१-६५२) पर उदधृत। [२६ मार्च को चतुर्थी का भी संयोग था।]

३. प्रबन्धकर्ता वेदभाष्य (मुं० समर्थदान) को लिखा गया।

४. पं० लेखरामकृत उर्दू जीवनचरित पृ० ६२४ (हिन्दी सं० पृष्ठ ६५१) पर उद्धृत। वहां ४ के स्थान में पांच पाठ है। यह अशुद्ध है। २५

५. पं० लेखरामकृत उर्दू जीवनचरित पृ० ६२४ (हिन्दी सं० पृष्ठ ६५१) पर उद्धृत। यह पत्र सम्भवतः मुं० समर्थदान को मुम्बई लिखा गया है।

६. अर्थात् १८ या १९ मार्च अर्थात् चैत्र वदी ११ या १२ से।

का प्रबन्ध करेंगे जब शरीर अच्छा होगा, सो तुमने अमरीका वालों से कह देना। उनको समझा दो कि हमारा शरीर महीने डेढ़ तथा दो से कम में अच्छा भी नहीं होगा और जो इस गर्मी के दिनों में रेल में भी बड़ी गर्मी होगी। सो आठ दिन के जाने और आठ
५ दिन के आने में बड़ा कष्ट होगा और देह को बड़ा दुःख होगा। तुम उनको अच्छे प्रकार सन्तुष्ट कर देना कि हम अवश्य आवेंगे जिस दिन हमारी देह को आराम होगा। और हम को बड़ा दुःख है कि अमरीका वाले ऐसे समय में आए हैं जिससे हमारा उनसे शीघ्र मिलाप नहीं हो सकता।

१० चैत्र शुक्ल ११ [सं० १९३६]। २ अप्रैल १८७९ दयानन्द सरस्वती
हरद्वार

—:o:—

[पूर्ण संख्या २९८] पत्र-सारांश[1]

स्वामी विशुद्धानन्द जी

मैं जो बात कर रहा हूं उस को आप सब लोग जानते हैं कि
१५ वह सर्वथा ठीक है, परन्तु आप लोग विद्वान् होने पर भी प्रसिद्ध होकर क्यों नहीं प्रकट करते।[2]

—:o:—

[पूर्ण संख्या २९९] पत्र-सारांश[1]

स्वामी जीवनगिरि जी

[पूर्व पत्रसारांश ...... -]।[3]

—:o:—

२० [पूर्ण संख्या ३००] पत्र-सारांश[1]

स्वामी सुखदेवगिरि जी

---

१. यह पत्रसारांश पं० लेखरामकृत जीवनचरित हिन्दी सं० पृष्ठ ६५३ पर तथा पं० देवेन्द्रनाथ जी संकलित जीवनचरित पृ० ५३१ पर उद्धृत है।

२५ २. इस पत्र की तिथि अज्ञात है। यह सं० १९३६ (सन् १८७९) के हरिद्वार के कुम्भ के मेले में लिखा गया था।

३. इन को भी पूर्ण संख्या २९८ वाला अभिप्राय ही लिख कर भेजा गया था। देखो पं० लेखरामकृत जीवनचरित हिन्दी सं० पृ० ६५३।

[पूर्व पत्रसारांश][1]

—:०:—

[पूर्ण संख्या ३०१]　　　　तार

[कर्नल आल्काट, बम्बई]

हम तो नहीं आ सकते। यदि तुम हमसे मिलना चाहते हो तो स्वयं आ जाओ।[2]　　५

—:०:—

[पूर्ण संख्या ३०२]　　　　पत्र-सारांश[3]

शास्त्रार्थ करने से मुझ को किसी समय में इन्कार नहीं है। मैं प्रत्येक समय उद्यत हूं, परन्तु शास्त्रार्थ इस रीति से होना चाहिये कि इस शास्त्रार्थ का प्रबन्धकर्त्ता राजपुरुष (कोई मैजिस्ट्रेट) हो और उस शास्त्रार्थ में पण्डितों के अतिरिक्त अनपढ़ा कोई न हो और शास्त्रार्थ　१० का स्थान ऐसा हो जो न मेरा और न आप का समझा जावे। अब जहां यह सभा हुई है (अर्थात् जूना अखाड़ा में) वहां पर आने से मैं अपने जीवन की हानि समझता हूं। यद्यपि मुझे इसका कुछ शोक नहीं कि मेरा शरीरपात हो जावे परन्तु इस बात का शोक है कि जिस परोपकार के लिये इस शरीर की रक्षा करता हूं वह　१५ उपकार रह जायेगा। इस कारण मैं वहां आना उचित नहीं समझता।

[वैशाख बदी १ सं० १९३६][4]　　　　दयानन्द सरस्वती

—:०:—

---

१. द्र० — पूर्व पृष्ठ ३३४ पर टि० ३।

२. यह तार कर्नल आल्काट के तार के उत्तर में दिया गया था। देखो　२० पं० लेखरामकृत जी० च० हिन्दी सं० पृष्ठ ६६२। कर्नल आल्काट का तार तीसरे भाग में देखें। जी० च० के वर्णन के अनुसार यह तार सम्भवतः ५-६ अप्रेल १८७९ को दिया होगा।

३. यह पत्र-सारांश पं० लेखरामकृत जीवनचरित हिन्दी सं० पृ० ६६३ पर उद्धृत है।　२५

४. यह पत्र हरिद्वार के कुम्भ के मेले में वैशाख बदी १ सं० १९३६ (७ अप्रैल १८७९) को शास्त्रार्थी पण्डितों की ओर से लिखे गये पत्र के उत्तर में उसी दिन लिखा गया था। शास्त्रार्थी पण्डितों का पत्र तीसरे भाग में देखें।

[पूर्ण संख्या ३०३] पत्र-सारांश

[········ आर्यसमाज, अमृतसर]

इस का अपराध हमने क्षमा कर दिया। इसे पुन: आर्यसमाज में प्रविष्ट करलो।[1]

—:o:—

५ ## [पूर्ण संख्या ३०४] पत्र-सारांश[2]

यदि स्वामी विशुद्धानन्द जी कह दें कि आप लोग मेरे समान वेदों को समझ सकते हैं, और शास्त्रार्थ कर सकते हैं तो मैं शास्त्रार्थ करने को उद्यत हूं और मैं विशुद्धानन्द जी को अपना मध्यस्थ नियत करता हूं।[3]

—:o:—

१० ## [पूर्ण संख्या ३०५] पत्रांश[4]

तुम्हारे जाने के पीछे हमारा शरीर अच्छा नहीं रहा। अर्थात् ४०० से अधिक अधिक दस्त हुए। इस से शरीर अति दुर्बल हो गया। विचार था कि शरीर अच्छा रहा तो हम हरद्वार से ही मुम्बई को अवश्य आते, परन्तु अब यहां[से] देहरादून जाने का
१५ विचार है। सो वहां जा कर थोड़े दिनों में शरीर अच्छा हो

---

१. इसका निर्देश पं० देवेन्द्रनाथ सं० जी० च० पृ० ५४३ पर है।

२. पत्र का यह सारांश पं० लेखरामकृत जी० च० हिन्दी सं० पृष्ठ ६५५ पर उद्धृत है। इस पत्र के उत्तर में स्वा० विशुद्धानन्द जी का जो पत्र स्वामी जी के पास आया था, उसे तीसरे भाग में देखें।

२० ३. यह पत्र पूर्णसंख्या २९८ के पत्र के कुछ दिनों के अनन्तर (परन्तु बैशाख वदी ८ सं० १९३६=१४ अप्रैल १८७९ से पूर्व) लिखा गया था, क्योंकि इसी तिथि को श्री स्वामी जी देहरादून चले गये थे।

४. पं० लेखरामकृत उर्दू जीवनचरित पृ० ६२४ (हिन्दी सं० पृष्ठ ६५१) पर उद्धृत। यह पत्र सम्भवत: मुंशी समर्थदान को मुम्बई में लिखा
२५ गया है। मुन्शी समर्थदान को ही वेदभाष्य के प्रबन्धकर्ता के रूप में ता० ५ मार्च को श्री स्वामी जी ने हरिद्वार से मुम्बई भेजा था। देखो प० श्यामजी कृष्ण वर्मा के नाम ५ मार्च १८७९ का पत्र, पूर्णसंख्या २८९, पृ० ३२८।

जायेगा। तब आने के विषय में लिखेंगे। सो तुम ने अमरीका वालों के पास हमारा नमस्ते कहना और किसी प्रकार का सोच विचार वे लोग न करें। क्योंकि मुम्बई में आकर उन लोगों से हम अवश्य मिलेंगे। मुन्शी इन्द्रमणि जी भी यहां हमारे पास आकर ठहरे हैं और मेला भी कुछ विशेष नहीं जुड़ा है। ५

वैशाख सु० २ संवत् १९३६[1]　　　दयानन्द सरस्वती
हरद्वार

—:०:—

[पूर्ण संख्या ३०६]　　　पत्र

Hardwar.
10-4-78.[2] १०

Baboo Madho Lall[3]

Arya Samaj,
Dinapore.[4]

Dear Sir.

Informs that American Mission (col. H. S. Olcott and countess H. Blavatsky) is coming to see me at Dehra Dun about the 14th current and I hope will stay with me for some months. १५

Sd. Dianand Sarasswatti
द: दयानन्द सरस्वती　२०

[भाषानुवाद]

हरद्वार
१०-४-७८[1]

---

१. ८ अप्रेल १८७९ मङ्गलवार। वैशाख वदी चाहिये। सुदी छापने में जीवनचरित की भूल है, क्योंकि वैशाख वदी ८ (१४ अप्रेल) को श्री स्वामी जी देहरादून को रवाना हो गये थे। २५

२. यहां ७८ भूल से लिया गया है। ७९ चाहिये। वैशाख कृष्ण ४ बृहस्पति सं० १९३६।

३ मूल पत्र आर्यसमाज दानापुर के संग्रह में सुरक्षित है।

४. इस पत्र में भी दानापुर को दीनापुर लेखक प्रमाद से लिखा गया है। ३०

बाबू माधोलाल[1]

आर्य्यसमाज दीनापुर[2]।

प्रिय महाशय !

आप को सूचित किया जाता है कि अमेरिकन मिशन (कर्नल एच० एस० अल्काट और काऊण्टेस एच० ब्लवत्सकी) इस मास की १४ तक मुझे देहरादून मिलने आ रहा है और मैं आशा करता हूं कि मेरे साथ कुछ मास तक ठहरेंगे ॥

दयानन्द सरस्वती

—:o:—

[पूर्ण संख्या ३०७] विज्ञापन

नोटिस[3]

(१) सब को विदित हो कि वेदभाष्य तीसरे वर्ष का आरम्भ सम्वत् १९६६ के वैशाख मास के छठे अङ्क से गिना जायगा। और पीछे के दो वर्षों का हिसाब ग्राहकों के पास प्रतिमास अङ्क न पहुंचने के कारण से ठीक न रहा। इसलिये हम वर्षों के हिसाब को छोड़कर अङ्कों का हिसाब लगाते हैं॥ एक नमूने का, १६ भूमिका के और इस अङ्क सहित १० अङ्क दोनों वेदों के निकले, सब मिलाने से २७ अङ्क हुए॥ इन मैं से १२ अङ्कों के ४॥) रुपये और शेष १५ के (२४ अङ्कों के ८) रु० के हिसाब से ५) रु० हुये॥ सम्वत् १९३६ के वर्ष के दो वेदों के २४ अङ्कों के ८) रु० रक्खे हैं। जिन लोगों ने वेदभाष्य के आरम्भ से आज तक रुपये नहीं दिये हैं, वे इस अङ्क तक के ९॥) रु०, सं० ३६ के अन्त तक के १७।')रु० और जो लोग ४॥)रु० दे चुके हैं वे इस अङ्क तक के ५) रु० और उक्त सं० के अन्त [त]क के १३) रु० और जो लोग ११) रु० दे चुके हैं वे अगले वर्ष के लिये ६) रु० भेजें। यह दो वेदों का हिसाब हुआ॥ एक वेद के ग्राहकों के पास १ अङ्क नमूने का १६ भूमिका के और इस अङ्क सहित ५ अङ्क वेद के पहुंचे सब मिलाने से २२ अङ्क हुये। इनमें से १२ अङ्कों के ४॥)

१-२. दोनों टिप्पणी पूर्व पृष्ठ ३३७ पर नं० ३, ४ पर देखें।

३. यह नोटिस ऋग्वेद और यजुर्वेद भाष्य के अङ्क पांच के टाइटल पेज ३, ४ पर छपा है। यह अङ्क देर से निकाला था। नोटिस सम्भवत: वैशाख कृ० सप्तमी से अमावास्या के बीच में लिखा गया था।

रु० और बाकी के १० अङ्कों के (१२ अङ्कों के ४) रु० के हिसाब से) ३।)॥ हुये। अगले वर्ष के १२ अङ्कों के ४) रु० हैं। जिनके रु० भाष्य के आरम्भ से उधार हैं वे अब तक के ७॥।—)॥ और सं० १६ के अन्त तक के ११॥।—)॥ और जिन्होंने ४॥) रु० दे दिये हैं वे अब तक के ३।—)। और अगले वर्ष के अन्त तक के ५ ७। -)॥ और जो लोग ८॥)रु० दे चुके हैं वे अगले वर्ष ३।—)॥ देवें॥ अब जो नया ग्राहक होना चाहे वह सं ३६ के अन्त तक के दो वेदों के १७) और एक वेद के ११॥) रु० भेजे। आगे नये ग्राहकों को नमूने का अङ्क नहीं मिलेगा। **जो कोई भूमिका के बिना केवल वेद ही लिया चाहे सो नहीं मिल सकते[1] किन्तु** १० **भूमिका ५) रु० देने से पृथक् मिल सकती है॥**

(२) ग्राहकों को विदित किया जाता है कि इस पांचवें अङ्क से मुम्बई में वेदभाष्य का प्रबन्ध अर्थात् भाष्य का चन्दा वसूल करना, मासिक अङ्क छपकर ग्राहकों के पास भेजना, नवीन ग्राहक करना आदि वेदभाष्य सम्बन्धी जो काम बाबू हरिश्चन्द्र चिन्ता- १५ मणी जी करते थे, सो हमारी ओर से मुनशी समर्थदान करेंगे और पण्डित उमरावसिंह भी चन्दा वसूल करना, नये ग्राहक करना, मुम्बई के सिवाय सब स्थानों के उधार वाले ग्राहकों से तकाजा करके रुपये वसूल करना, ये सब काम करैंगे। अब नीचे लिखे ठिकानों से रोक[2] रुपये देने पर वेदभाष्य का पुस्तक मिला करेगा। २०

मुनशी समर्थदान प्रवन्धकर्ता "वेदभाष्य कार्यालय, मारवाड़ी बाजार, मुम्बादेवी की चाली, मुम्बई॥" Munshi Samartha Dana Manager of the Veda Bhashya office Mara-wari Bazar Mumda Devi's chalee Bombay)

पण्डित उमरावसिंह, मंत्री आर्य्यसमाज, रुड़की, जिला २५ सहारनपुर[को] और जहां मैं स्थित होऊं वहां के लोग [मुझे] रुपया

१. अर्थात् कोई भी ऋग्वेदादिभाष्यभूमिका पढ़े विना स्वामी जी के वेदभाष्य का ठीक-ठीक अभिप्राय नहीं समझ सकता। इसलिये वे भूमिका के विना वेदभाष्य देना ही नहीं चाहते थे। परन्तु इस नोटिस के निकलने पर भी परोपकारिणी सभा आरम्भ से आज तक ऋग्वेदभाष्य और यजुर्वेद- ३० भाष्य का आर्डर आने पर उन्हें ऋग्वेदादिभाष्यभूमिका के विना ही वेद-भाष्य दे रही है।

२. अर्थात् रोकड़।

दे सकते हैं और पुस्तक ले सकते हैं, परन्तु पत्र द्वारा मेरे पास रुपये भेजने और मेरे पास से पुस्तक मंगाने का कुछ काम नहीं। पर पत्र द्वारा तो ऊपर लिखे दोनों स्थानों में जिसको जहां सुगम हो रुपये भेजकर पुस्तक मंगावें। अब पीछे कोई ग्राहक भाष्य सम्बन्धी रुपया ५ और पत्र बा० हरिश्चन्द्र चिन्तामणी जी के पास न भेजे।

(३) यह बड़े उत्साह की बात है कि वेदभाष्य के ग्राहक बहुत से हो गये हैं। कि जिनकी सहायता से इस महान् कार्य वेदभाष्य के बनने और छपने का काम अच्छी तरह से चल सके, परन्तु शोक की बात यह है कि ऐसे भद्र पुरुषों ने धर्मोपकारार्थ वेदभाष्य का १० लेना स्वीकार किया और अभी तक बराबर लेते हैं परन्तु उनमें से बहुत से ऐसे लोगों ने कि जिनको इतना चन्दा देना कुछ भी कठिन नहीं है वेदभाष्य के आरम्भ से अभी तक रुपये नहीं भेजे हैं। अब सब महाशयों को उचित है कि इस विज्ञापन को देखते ही उक्त हिसाब के अनुसार उत्साह पूर्वक चन्दा भेज देवें। अब यह अङ्क तो १५ सबके पास भेजते हैं और सूचना करते हैं कि उन लोगों के पास कि जिन्होंने पीछे कुछ भी चन्दा नहीं दिया है अब तक के चुकते रुपये न भेजेंगे तो उनके पास छठा अङ्क नहीं भेजा जायगा और अगले अङ्क में रुपयों सहित सब उधार वालों के नाम छपाकर प्रकट करेंगे और दाम लेवेंगे। तकाजा करने उधार का चन्दा वसूल २० करने का काम मुम्बई का मुं० समर्थदान और सब स्थानों का पं० उमरावसिंह को सौंपा है। ग्राहक लोग तकाजा करने पहिले ही रुपये भेज दें तो अच्छी बात है।

(४) जिन भद्र पुरुषों ने मासिक धर्म्मार्थ चन्दा देना स्वीकार किया है उन में से बहुत से लोगों का चन्दा कई महीनों से नहीं २५ आया है। उन को उचित है कि आज तक का चन्दा अगले अङ्क के पहिले ही भेज देवें।

हस्ताक्षर दयानन्द सरस्वती

—:o:—

[पूर्ण संख्या ३०८] **पत्रांश**

[पं० कृपाराम][1]

हम पर्वी से दूसरे दिन डेरादून को कूच करेंगे। [हरद्वार]

३०

—:o:—

१. यह मूल पत्र का अंश अथवा उसका अभिप्राय है। इस का उल्लेख

[पूर्ण संख्या ३०९]　　**पत्रांश**[1]

हरद्वार में ओंकारमल और सुनन्दराज हम को नहीं मिले। रामगढ़ से भी बहुत से प्रेमी लोग पहुंच गए।[2] हरद्वार में बहुत लोगों से बातचीत हुई। साधु लोगों ने उपदेश सुना लाभ भी बहुत सा हुआ। हैजा बहुत सा नहीं है थोड़ा सा हुआ। जब अमरीका वाले सुनेंगे और उन से बातचीत होगी, तब सब भ्रम निकल जावेंगे। हम को हरद्वार में लगभग ४०० दस्त हुए और अब तक भी कुछ-कुछ आते हैं परन्तु यहां की वायु ठण्डा होने से कुछ-कुछ आराम होता आता है परन्तु शरीर बहुत निर्बल हो गया है। आज दस्त बन्द हुआ दीखता है। जो बन्द हो जावेंगे तो शरीर भी १५, २० दिन में अच्छा हो जावेगा॥

वैशाख वदी १२, शुक्रवार संवत् १९३६[3]।

दयानन्द सरस्वती

—:o:—

[पूर्ण संख्या ३१०]　　**पत्र**

Dehra Dun
24th April 1879[4]

Sir,[5]

पं० लेखरामकृत उर्दू जीवनचरित पृ० ४२७ (हिन्दी सं० पृष्ठ ४६५) पर है।

१. पं० लेखरामकृत उर्दू जीवनचरित पृष्ठ ६२४ (हिन्दी सं० ६५२) पर उद्धृत।

२. मङ्गलदान चारण के पुत्र मुन्शी समर्थदान रामगढ़ सीकर (जयपुर राज्य) के समीप, नठेवा ग्राम के रहने वाले थे। उन्हें ही पूर्णसंख्या २९५, २९६, २९७, ३०५, और ३०९, के पत्र लिखे गए, ऐसा प्रतीत होता है। मङ्गलदान चारण का चैत्र वदी ७ सं० १९३९ का पत्र तीसरे भाग में देखें।

३. १८ अप्रेल १८७९।

४. वैशाख शुक्ल ३, बृहस्पतिवार, सं० १९३६। मूल पत्र दानापुर आर्यसमाज में सुरक्षित है।

५. बाबू माधोलाल, दानापुर को लिखा गया।

I am very glad to receive your letter of 20th instant by this day's post.

You were quite right in remitting the value of Ved Bhashya Bhoomika to Pandit Sunder Lall at Allahabad who ५ can supply you as many more copies as you will want. I have also received the price of the books you had taken from Delhi.

I have great pleasure to hear of your intention for opening a Sanskrit School, but before you take this most advan- १० tageous work in hand, I should be informed as to what arrangement you have made about the standard of various sciences to be studied at the school, have you got all the necessary books ready yet, I think not I mean to say that before you go into the work, you should have all the books printed first १५ of all. The "koran" in Nagri is entirely ready but has not been printed yet.

The Astadhyaee has not met sufficient number of subscribers yet; the 4 adhya[ya]s of this are just ready but the work is going on quite well though not (a) copy (has) passed २० in the press up to date.

The great dishonesty and misconduct on the part of Babu Harish Chandra Chintamani has been the cause of delay in getting the Ved Bhashya out of the press in the proper time. Now the man has been turned out and another २५ man has been appointed in his stead and it is hoped that he will carry out the work very satisfactorily—

I Intend setting up a press at Moradabad under the auspices of Munshi Indra Mani for which purpose a subscription to the amount of Rs 5,000/- is necessary to be raised ३० by shares of 100/- each, Of this sum Rs. 2,500/- has already been raised. I hope it will be a great help to the work should you be inclined to take as many shares as you can. In that case you should apply to Lallah Ram Saran Das of Meerut who is authorized to receive money when the time

comes.

Yours truly
Sd. Daya N.nd Saraswati
[दयानन्द सरस्वती]

[भाषानुवाद]

देहरादून
१४ अप्रैल, १८७९[1]

महाशय !

आज की डाक में आप का २० तारीख का पत्र प्राप्त करके मुझे बड़ा हर्ष हुआ। वेदभाष्यभूमिका का मूल्य प्रयाग में पण्डित सुन्दरलाल को भेजने में आपने सब ठीक किया। वे आप को जितनी प्रतियां आप और चाहें, भेज सकेंगे। जो पुस्तकें आप ने दिल्ली से ली थीं, मुझे भी उनका मूल्य मिल गया है। १०

आपके संस्कृत पाठशाला खोलने का विचार सुन कर मुझे बहुत हर्ष है। पर इस से पूर्व कि आप इस सर्वोपयोगी काम को हाथ में लें, मुझे सूचना दें कि पाठशाला में पढ़ाये जाने वाले भिन्न-भिन्न शास्त्रों के प्रमाण ग्रन्थों के सम्बन्ध में आपने क्या क्रम रखा है ? क्या अभी आप के पास सब आवश्यक ग्रन्थ तय्यार हैं। मेरा विचार है, नहीं। मेरा कहने का अभिप्राय यह है कि काम को आरम्भ करने से पूर्व आप को सब से पहले सब ग्रन्थ छपवा लेने चाहियें। "कुरान" नागरी में पूरा तय्यार है[2] परन्तु अभी तक छापा नहीं गया। १५ २०

अष्टाध्यायी के अभी तक पर्याप्त संख्या में ग्राहक नहीं हुए हैं। इस के ४ अध्याय अभी तय्यार हुए हैं। काम सर्वथा भले प्रकार चल रहा है, यद्यपि कोई कापी आज तक यन्त्रालय में से नहीं निकली।

बाबू हरिश्चन्द्र चिन्तामणि की बड़ी कुटिलता और बुरे आचार के कारण वेदभाष्य के प्रेस में से उचित समय पर निकलवाने में देर हो गई है। २५

---

१. वैशाख शुक्ल ३, बृहस्पतिवार, सं० १९३६।

२. इस हस्तलिखित कुरान के अन्तिम पृष्ठ पर यह लेख है—"सं० १९३५ कार्तिक शु० ९ रविवासरे कुराणाख्योऽयं ग्रन्थः संपूर्णः। इन्द्रप्रस्थनगरे ॥+॥+॥" इस पर जिल्द संख्या ११९ है, पृष्ठ संख्या ७२५, सिपारे ३०, यं० ७, सूरत ११४। श्री महाशय मामराज जी ने इस ग्रन्थ को १२-२-३३ को देखकर इन पंक्तियों की प्रतिलिपि की थी। ३०

अब वह बाहर निकाल दिया गया है और उसके स्थान में अन्य पुरुष नियुक्त हुआ है और यह आशा की जाती है कि वह कार्य्य को सन्तोषजनक रीति से करेगा।

मुन्शी इन्द्रमणि की अध्यक्षता में मुरादाबाद में मेरा एक यन्त्रालय ५ खोलने का विचार है। एतदर्थ ५,०००) रु० का चन्दा करना आवश्यक है जो १००) रु० के प्रति भाग द्वारा होगा। इतने में से २,५००) रु० पहले एकत्र हो चुका है। मैं आशा करता हूं कि इस से हमारे काम में बड़ी सहायता होगी, यदि आप की अभिरुचि अधिक से अधिक भाग, जितने आप ले सकते हैं, लेने की हो तब आप को ला० रामशरणदास मेरठ वालों को १० लिखना होगा। उन्हें समय आने पर धन लेने का अधिकार है।

आपका शुभचिन्तक
[दयानन्द सरस्वती]

—:o:—

[पूर्ण संख्या ३११] तार

[कर्नल आल्काट, सहारनपुर]

१५ आप लोग पर्वत पर आने का कष्ट न उठावें, हम स्वयं आते हैं।[1]

—:o:—

[पूर्ण संख्या ३१२] अधिकार-पत्र

Saharanpur N. W. P.
May 2nd 1879[2]

२० I hereby authorize Henry S. Olcott, to caste my vote upon all questions relating to tbe Theosophical Society which may be brought before the General Council for action in my absence; and, generally, to use my authority as Supreme Chief of the Eastern and Western Theosodhists of २५ the Arya Samaj according to the general viewe which I have

---

१. यह तार का आशय पं० लेखरामकृत जी० च० हिन्दी सं० पृष्ठ ८१७ पर छपा है। यह तार २९ या ३० अप्रेल १८७९ को दिया होगा। १ मई को ऋ० द० सहारनपुर पहुंच गये थे।

२. वैशाख शुक्ल ११, शुक्रवार, सं० १९३६।

personally expressed to him.[1]

(दयानन्द सरस्वती)

---

१. जब यह पत्र लिखा गया था, तब कर्नल और मैडम श्री स्वामी जी के साथ सहारनपुर में ही थे। इस पत्र की प्रतिकृति थियोसोफिस्ट जुलाई १८८२ के परिशिष्ट में छपी है। उसके नीचे एक नोट है कि म० मूलजी ठाकुरशी ने कहा है कि उन्होंने स्वामी जी को इस पत्र का अनुवाद सुनाया था। तब उन के सम्मुख ही स्वामी ने अपने हस्ताक्षर कर दिये थे॥ 5

हमें उपर्युक्त पूर्ण संख्या ३१२ का अधिकार पत्र नकली प्रतीत होता है। उसके तीन कारण हैं। **प्रथम** स्वामी जी ने सं० १९३७ मार्गशीर्ष वदी ६ मंगलवार (२३ नवम्बर १८८०) को मैडम ब्लेवैस्तकी को लिखे पत्र में लिखा है—"**मेरठ में मूलजी ठाकरसी के सामने जहां आप भी सामने बैठी थीं, एच० एस० करनैल ओल्काट साहब को मैंने कहा कि आप ने बम्बई को कौंसिल में मेरा** नाम सभासदों में क्यों लिखा"। इसी बात की ओर संकेत ऋषि दयानन्द ने लगभग ३१ मार्च सन् १८८२ को बम्बई के ओरियन्टल प्रेस में छपवाये (आगे मुद्रित) विज्ञापन '**थियोसोफिस्टों की गोलमाल पोलपाल**' में किया है। इनसे स्पष्ट है कि स्वामी जी ने थियोसोफिकल सोसाइटी का साधारण सभासद होना भी स्वीकार नहीं किया था, फिर भला वे प्रधानाध्यक्ष कैसे बन सकते थे? **दूसरा**—इस अधिकार पत्र पर २ मई सन् १८७९ तारीख दी है, परन्तु सं० १९३७ मार्गशीर्ष वदी ६ मंगलवार (२३ नवम्बर १८८०) को मैडम ब्लेवैस्तकी को लिखे पत्र तथा 'थियोसोफिस्टों का गोलमाल पोलपाल' विज्ञापन में जिस घटना का उल्लेख है, वह मेरठ की है। मेरठ स्वामी जी महाराज ३ मई **१८७९** को पहुंचे थे। आलकाट और मैडम ब्लेवेस्तकी दोनों ४ दिन स्वामी जी के साथ रहे थे। इसलिये यदि स्वामी जी ने मेरठ में ही थियोसोफिकल सोसाइटी का सभासद बनने का प्रतिवाद किया था, तो भला एक दिन पूर्व उनका थियोसोफिकल सोसाइटी का प्रधान बनना कैसे सम्भव हो सकता है? स्वामी जी महाराज ने पूर्व निर्दिष्ट पत्र वा 'थियोसोफिस्टों की गोलमाल पोलपाल' विज्ञापन में मेरठ की जिस घटना का उल्लेख किया है, उसका संकेत उक्त अधिकार पत्र के तीन दिन पश्चात् अर्थात् ५ मई १८७९ (पूर्ण संख्या ३१५) को लिखे पत्र में भी है—"**थियोसोफिकल सोसाइटी में जो हमारा नाम लिखा गया है, यदि तुम उस पत्र की (जिसमें नाम लिखने का उल्लेख**

10 15 20 25 30

[भाषानुवाद]

सहारनपुर पश्चिमोत्तर प्रदेश
२ मई १८७९.[1]

मैं इस लेख द्वारा हैनरी ऐस आलकाट को थियोसोफिकल सोसायटी सम्बन्धी सब प्रश्नों पर जो मेरी अनुपस्थिति में साधारण सभा के सम्मुख कार्यार्थ लाये जायें, अपनी ओर से सम्मति देने का अधिकार देता हूं और वे उन सामान्य विचारानुसार जो मैंने इन्हें स्वयं जताए हैं, आर्यसमाज के पूर्वीय और पश्चिमीय थियोसोफिस्टों के प्रधानाध्यक्ष के रूप में साधारणतया मेरा अधिकार वर्त्त सकते हैं ॥

[दयानन्द सरस्वती]

— :०: —

[पूर्ण संख्या ३१३] पत्रांश[2]

मुम्बई जाकर अमरीकावालों से मिलना और हाल लिखना। हम डेरादून से चल कर सहारनपुर आए और वहां पर अलकाट साहब

है) भेज देते तो हम साहब को दिखा देते। परन्तु जुबानी जो साहब से कहा गया तो उन्होंने उत्तर दिया "आगे ऐसा न होगा इस वृत्तान्त को जब मूलजी भाई आवेंगे, तब तुमको समझा देंगे।" तीसरा - यदि यह अधिकार पत्र वास्तविक होता तो उसी समय प्रकाशित किया जाता। २८ मार्च १८८२ में, जब कि स्वामी जी ने कर्नल ओलकाट आदि की धूर्तता के कारण उनसे सम्बन्ध विच्छेद की घोषणा कर दी, तो इसके बाद इसे क्यों छपवाया गया? इस अधिकार पत्र के ऊपर जो नोट दिया है, उसमें लिखा है—'मूलजी ठाकरसी ने कहा है कि उन्होंने स्वामी जी को इस पत्र का अनुवाद सुनाया था, तब उनके सम्मुख ही स्वामी जी ने अपने हस्ताक्षर कर दिये थे।' यह लेख भी नितान्त मिथ्या है, क्योंकि जब स्वामी जी महाराज ने अपने लिखने की पुष्टि में (पू० सं० ३१५ के पत्र में) मूलजी ठाकरसी के नाम का उल्लेख किया, तब करनैल ओलकाट ने भी मूलजी ठाकरसी की झूठी गवाही झूठे पत्र में छाप दी।

१. द्र०—पूर्व पृष्ठ ३४४ की टिप्पणी २।

२. पं० लेखरामकृत उर्दू जीवन चरित पृ० ८३६,८३७ (हिन्दी सं० पृष्ठ ८७१) पर उद्धृत। यह पत्र सम्भवतः मुं० समर्थदान प्रबन्धकर्त्ता वेदभाष्य मुम्बई को मेरठ से लिखा गया था।

ग्रौर ब्लेवेस्तकी लेडी वा मूलजि ठाकरसी से जो कि ग्रमरीका से ग्राए हैं, समागम हुआ। दो दिन वहां ठहर कर हम मेरठ ग्रा गये हैं। यहां पर [पांच छः] ५, ६ दिन ठहरेंगे। पश्चात् साहब मुम्बई को ग्रावेंगे ग्रौर हम कुछ दिन यहां ही वास करेंगे परन्तु ग्राज कल कुछ ग्रवकाश नहीं है। साहब की ग्रौर हमारी सम्मति मिल　५
गई है। किसी प्रकार का भेद नहीं है ग्रौर जो कुछ हरिश्चन्द्र ने उन के चित्त में शङ्का डाली थी, वह सब निवृत्त हो गई है। साहब ग्रत्यन्त शुद्ध ग्रन्तःकरण सज्जन पुरुष हैं। इन में किसी प्रकार का छल छिद्र नहीं है। परन्तु हरिश्चन्द्र ने ऐसा कपट किया कि जिस को हम कथन नहीं कर सकते हैं। परन्तु ग्रब होश्यार रहना　१०
चाहिये ॥

वैशाख सु० १४ सं० १९३६।[1]

दयानन्द सरस्वती

—:o:—

[पूर्ण संख्या ३१४]　पारसल-सूचना

[पं० हरिशङ्कर कन्नौज को काशी शास्त्रार्थ भेजा][2]　१५

—:o:—

---

१. ५ मई सोमवार १८७९। अगली पूर्ण संख्या ३१५ का पत्र भी ५ मई का है। स्वामी जी महाराज वै० शु० १२(३ मई) को मेरठ पहुंचे थे। पूर्ण संख्या ३०४, ३१५, ३१७ के पत्रों को मिलाकर पढ़ने से ज्ञात होता है कि यह पत्र वै० शु० १२(३ मई) को ही लिखा गया होगा। दो दिन पीछे भेजते समय उक्त तिथि डाल दी होगी।　२०

२. १९३६ के कुम्भ पर स्वामी जी हमको हरिद्वार मिले थे।······ वह [काशी शास्त्रार्थ] भी स्वामी जी ने हमारे पास भेजा था। द्र०— पं० लेखरामजी कृत जीवन चरित, हिन्दी ग्रनुवाद, पृष्ठ १३४। यह काशी शास्त्रार्थ 'ग्रथ शास्त्रार्थ और सद्धर्मविचार' के नाम से दिसम्बर १८६९ में 'लाइट प्रैस' बनारस में छपा था। इस का उल्लेख कई स्थानों में 'सद्धर्म　२५
विचार' के नाम से भी मिलता है। वैदिक यन्त्रालय में प्रथमवार सं० १९३७ में छपा था।

[पूर्ण संख्या ३१५] पत्रांश[1]

....

कल अल्काट साहब और ब्लेवेस्तकी लेडी समाज में गये थे और आज उक्त साहब सदर मेरठ में उपदेश करेंगे और कल
५ परसों यहां से मुम्बई जाने वाले हैं। उक्त साहबों की अपनी समाज से कोई बात विरुद्ध नहीं है अर्थात् अनुकूल आचरण स्वभाव है। क्योंकि चार पांच दिन से जो हम उन के साथ बात करते हैं तो बिलकुल ये लोग शुद्ध अन्तःकरण प्रतीत होते हैं और थियोसोफिकल सोसायटी में जो हमारा नाम लिखा गया है यदि तुम उस
१० पत्र को भेज देते तो हम साहब को दिखला देते। परन्तु जुबानी जो साहब से कहा गया तो उन्होंने उत्तर दिया कि हमारी थियोसोफिकल सोसायटी का अभी तक यह प्रयोजन था कि सब मतों के लोग इस में दाखल हों और अपनी-अपनी सम्मति देवें। अब आर्यसमाज के नियमों को समझ कर जिस प्रकार आपकी आज्ञा होगी,
१५ उसी प्रकार किया जावेगा। आगे ऐसा न होगा और जो आर्यसमाज के नियमों को पसन्द नहीं करता है, वह थियोसोफिकल सोसायटी में नहीं रहेगा। इस वृत्तान्त को जब मूलजि भाई आवेंगे[2] तब तुम को समझा देंगे॥

५ मई ७९[3] दयानन्द सरस्वती

२० मेरठ

—:o:—

[पूर्ण संख्या ३१६] पत्र[4]

ओ३म् तत्सत्

मंत्री आर्यसमाज शाहजहांपुर आनन्दित रहो !

---

१. पं० लेखरामकृत उर्दू जीवन चरित पृ० ८३७ (हिन्दी सं० पृष्ठ
२५ ८७१) पर उद्धृत। यह पत्र भी मुं० समर्थदान के नाम हो सकता है।

२. मूलजिभाई मुम्बईवासी थे। वे भी सहारनपुर आए थे।

३. वै० शु० १४, सं० १९३६।

४. यह पत्र पं० लेखरामकृत उर्दू दयानन्दचरित पृ० ८३५, ८३६ (हि० सं० पृ० ८६९,८७०)पर उद्धृत है।(हम हिन्दी संस्करण से इसे छाप
३० रहे हैं) शाहजहांपुर से प्रकाशित होने वाले आर्यदर्पण (उर्दू) जून १८७९

विदित हो कि सब सज्जनों के लिये एक आनन्द का समाचार प्रकट किया जाता है— वह यह है कि कर्नल एच० एस० अलकाट साहब और मैडम एच० पी० ब्लैवेत्स्की जिनके पत्र पहले अमरीका से अपनी समाजों में आये हुए थे। उन से हमारा पहली मई सन् १८७९ को सहारनपुर में समागम हुआ और विदित हुआ कि जैसी उनके पत्रों से उनकी बुद्धि प्रकट होती है उनके मिलने से सौ-गुनी अधिक योग्यता प्रकट हुई और अत्यन्त सज्जनता उनको हमको प्रकट हुई। उनसे दो दिन सहारनपुर में समागम रहा और समाज के सब मनुष्यों ने यथावत् सत्कार किया और उनके उपदेश सुनने से लोगों के चित्त अत्यन्त प्रसन्न हुए। पश्चात् वे हमारे साथ मेरठ को आ गये। सब समाज के लोगों ने उन का सुन्दर रीति से सत्कार किया और उपदेश का ऐसा सुन्दर समाचार रहा कि जिससे सब को आनन्द हुआ और उपदेश में सब धनी मानी सज्जन अहलकार और अंग्रेज लोग ५ दिन तक निरन्तर आते रहे और जिस किसी ने सत्य शास्त्रों में जो कुछ शंका की, उस का उत्तर यथार्थ मिलता रहा अर्थात् अमरीका के सज्जनों ने सबके चित्त पर निश्चय करा दिया कि जितनी भलाई और विद्या हैं वे सब वेदों से ही निकली हैं और जितने वेदविरुद्ध मत हैं वे सब पाखण्डी हैं। पश्चात् उक्त सज्जन ७ मई सन् १८७९ को बम्बई चले गये और हम कुछ दिन तक यहाँ पर ठहरेंगे। फिर जो उक्त सज्जनों से हमारा समागम हुआ यह इस आर्य्यावर्त आदि देशों के मनुष्यों की उन्नति का कारण है जैसे कि एक परमौषधि के साथ किसी सुपथ्य का मेल होने से शीघ्र ही रोग का नाश हो जाता है इसी प्रकार के समागम से आर्य्यावर्त आदि देशों में वेद-मत का प्रकाश होने से असत्यरूपी रोग का नाश शीघ्र ही हो जावेगा और उक्त सज्जनों का आचरण और स्वभाव हमको अत्यन्त शुद्ध प्रतीत होता है क्योंकि यह लोग तन, [मन] धन से सब प्रकार वेदमत की सहायता करने में अद्वितीय हैं। जो बाबू हरिश्चन्द्र चिन्तामणि ने उक्त सज्जन लोगों के विषय में यह बात

के अन्तिम पृष्ठ पर इस पत्र का कुछ अंश छपा है। यह ८ मई [ज्येष्ठ कृष्ण २ बृहस्पतिवार सं० १९३६] मेरठ का है।

उड़ा दी थी कि यह लोग जादू जानते हैं और जालसाजों के समान छल-कपट की बातें करते हैं यह सब बात उनकी मिथ्या ही है क्योंकि जिसको जादू कहते हैं वह यथार्थ में पदार्थविद्या है। उस विद्या को उन्होंने मूर्ख लोगों के भ्रम दूर करने और सत्यमार्ग में चलाने ५ के लिये धारण किया है। सो कुछ दोष नहीं है परन्तु हरिश्चन्द्र जैसे लोगों को भूषण भी दूषण दीख पड़ता है। इस हरिश्चन्द्र ने इन सज्जनों के चित्त में ऐसा भ्रम डाला था कि जिसका हम वर्णन नहीं कर सकते परन्तु वह सब हमारे मिलने से दूर हो गये। देखो हरिश्चन्द्र की बेईमानी, कि बहुत सा विघ्न वेदभाष्य के काम में १० कर चुका है और अब तक भी करता ही चला जाता है। इसलिये सब आर्य्य भाइयों को उचित है कि इसको आर्यसमाजों से बहिष्कृत ही समझें और आगे को किसी प्रकार का विश्वास न करें। देखो पूर्व काल में हमारे ऋषि-मुनि लोगों को कैसी पदार्थ-विद्या आती थीं कि जिससे आत्मा के बल से सबके अन्तःकरण के १५ भेद को शीघ्र ही जान लिया करते थे। जैसे बाहर के पदार्थ विद्या से रेल, तार आदि सिद्ध किये जाते हैं, अब तार आदि विद्या को मूर्ख लोग जादू समझते हैं वैसे ही भीतर के पदार्थों के योग से योगी लोग अदभुत कर्म कर सकते हैं इसमें कुछ आश्चर्य्य नहीं है क्योंकि मनुष्य लोग जिस विद्या को बाहर के पदार्थों से सिद्ध कर २० सकते हैं उससे कई गुना अधिक भीतर के पदार्थों से सिद्ध कर सकते हैं। जैसे बाहर के पदार्थों का बाहर से उपयोग होता है, वैसे ही भीतर के पदार्थों का भीतर से उपयोग होता है। जैसे स्थूल पदार्थों की क्रिया आंखों से बाहर दीखती है ऐसे सूक्ष्म पदार्थों की क्रिया आंखों से नहीं दीख पड़ती। इस लिये लोग आश्चर्य मानते २५ हैं। हां, यह कह सकते हैं कि बहुत से धूर्त लोग इस विद्या को नहीं जानते हैं, झूठे जाल रचकर सत्यविद्या को बदनाम कर देते हैं। इस कारण से झूठों का तिरस्कार और सच्चों का सत्कार सर्वदा उचित है। परन्तु जिस समय किसी का असत्य प्रकट हो जावे उस समय उस का परित्याग करना चाहिये।

३० बहुत दिनों पीछे हरिश्चन्द्र का कपट प्रकट हुआ इसलिये अपनी आर्य्यसमाजों से बाहर किया गया। इसी प्रकार जिस किसी मनुष्य का झूठ प्रकट हो जावे तो उसको तत्काल अपनी समाजों

से अलग कर दो, चाहे कोई क्यों न हो । असत्यवादी की सर्वदा परीक्षा करते रहो; इसी का नाम सुधार है और यही सत्पुरुषों का लक्षण है। तब उसको ज्ञान हुआ जानो जब अपने निश्चय किये हुए मन से भी असत्य जाने और उसको उसी समय त्याग दे तो उसके सामने दूसरे का झूठ छोड़ देना क्या आश्चर्य्य है। ऐसे काम के बिना न अपना सुधार हो सकता है न दूसरे का सुधार कर सकता है। अब इस पत्र को इस वृत्तान्त पर पूर्ण करता हूं कि इन सज्जनों के पूर्व पत्रों में और सात दिन की बातचीत करने से निश्चय हो गया है कि उनका तन, मन और धन सत्य के प्रकाश और असत्य के नाश करने और सब मनुष्यों के हित करने में है जैसा कि अपने लोगों का सर्वथा निश्चय से उद्योग है।

८ मई सन् १८७९। स्थान मेरठ।　　　　(दयानन्द सरस्वती)

—:०:—

[पूर्ण संख्या ३१७]　　　　पत्र

बाबू माधोप्रसादादि आनन्दित रहो।[1]

वृत्तान्त यह है कि सब सज्जनों के प्रति एक आनन्द का समाचार प्रकट किया जाता है। वोह यह है कि एस० एच० अलकाट साहिब तथा एच० पी० [ब्ले]वेस्की जिनकी पत्री पहले अ[म]रिका से अपने समाजों में आई थी **उन से हमारा पहिली मई सन् हाल[2] को सहारनपुर में समागम होने से** मालूम हुआ कि जैसी उनकी पत्रियों से बुद्धि प्रकट होती थी उनके मिलने से अधिक योग्यता और सज्जनता प्रकट हुई। उनके साथ दो दिन सहारनपुर में समागम रहा और समाज के सब पुरुषों ने यथावत् सत्कार किया। उन का उपदेश सुनने से लोगों के चित्त बड़े प्रसन्न हुऐ। पश्चात् वे हमारे साथ मेरठ को आये। वहां पर भी सब समाज के लोगों ने सुन्दर रीति से सत्कार किया और उपदेश का ऐसा सुन्दर चरचा रहा कि जिससे सबको आनन्द हुआ और उपदेश में सब

१. इस पत्र का पाठ श्री पं० विभुमित्र शास्त्री द्वारा लिखित "दानापुर में ऋषि दयानन्द का पदार्पण और प्रभाव" में प्रकाशित मूल पत्र के अनुसार है।　　२. वर्तमान १८७९।

अमीर वा उमराव तथा अहलकार और अंग्रेज लोग भी पांच दिन तव बराबर आते रहे और जिस किसी ने मतमतांतर में कुछ शङ्का की उनका यथार्थता से उत्तर मिलता रहा। अर्थात् **अमरीकन साहिबों ने सब लोगों के चित्त पर यह निश्चय कर**
५ **दिया कि जितनी भलाई और विद्या है वे सब वेद से निकलीं और जितने वेदविरुद्ध मत हैं वे सब पाखण्ड रूप हैं** पश्चात् उक्त साहिब तो ७ मई को बम्बई चले गये और हम कुछ दिन यहां ठहरेंगे। यह जो उन साहिबों से हमारा समागम है यह इन आर्यावर्तादि देशों के मनुष्यों की उन्नति का कारण है। जैसे एक
१० परम औषध के साथ किसी सुपथ्य का मेल होने से शीघ्र ही रोग का नाश हो जाता है इसी प्रकार इस समागम से आर्यावर्तादि देशों [में] वेदों का प्रकाश और असत् पा[प] रूपी रोग का विनाश शीघ्र हो जायेगा और उक्त साहिबों का आचरण तथा स्वभाव हम को अत्यन्त शुद्ध प्रतीत होता है, क्योंकि वे लोग तन-मन-धन से
१५ सब प्रकार वेदमत की स्थापना करने में उद्यत हैं। जो बाबू हरिश्चन्द्र चिन्तामणि ने उक्त साहिबों के विषय में यह बात उठाई थी कि ये लोग जादू जानते हैं और जासूसों की तरह छल कपट की बातें करते हैं उस [की] यह बात सब मिथ्या है। क्योंकि जिस को जादू कहते हैं वोह यथार्थ में पदार्थ विद्या है उस विद्या को उन्होंने
२० मूर्खों का भ्रम दूर करने और सत्य मार्ग में चलने के लिये धारण किया है सो कुछ दोष नहीं, परन्तु हरिश्चन्द्र जैसे मूर्खों को भूषण भी दूषण ही दीख पड़ता है। इस हरिश्चन्द्र ने इन साहिबों के चित्त में ऐसा भ्रम किया था कि जिस का हम वर्णन नहीं कर सकते परन्तु वे सब भ्रम हमारे मिलने से दूर हो गये। देखो इस
२५ हरिश्चन्द्र की बेइमानी कि बहुत सा विघ्न वेदभाष्य के काम में कर चुका है और अब तक भी करता जाता है, इसलिये सब आर्य्य भाईयों को उचित है कि इस को अपने आर्य्यसमाजों से बहिष्कृत समझें और इस का किसी प्रकार का विश्वास न करें। देखो पूर्व काल में हमारे ऋषि मुनियों को कैसी पदार्थ विद्या आती थी कि
३० जिसमें आत्मा के बल से सब के अन्तःकरण के भेद को शीघ्र ही जान लिया करते थे। जैसे बाहर की पदार्थ विद्या से सिद्ध किये हुवे रेल तारादि विद्या को मूर्ख लोग जादू समझते हैं वैसे ही भीतर

के पदार्थों के योग से योगी लोग अनेक अद्भुत कर्म कर सकते हैं इस में कोई आश्चर्य नहीं। क्योंकि मनुष्य लोग जितनी विद्या बाहर के पदार्थों से सिद्ध करते हैं उस से कई गुणी अधिक भीतर के पदार्थों से सिद्ध कर सकते हैं। जैसे बाहर के पदार्थों का उपयोग बाहर से होता है वैसे ही भीतर के पदार्थों का उपयोग भीतर से होता है। जैसे स्थूल पदार्थों की क्रिया आंखों से देख पड़ती है वैसे सूक्ष्म पदार्थों की क्रिया आंखों से नहीं देख पड़ती, इसी कारण लोग आश्चर्य मानते हैं। हां, यह कह सकते हैं कि बहुत से धूर्त लोग उस विद्या को तो जानते नहीं, उल्टे जाल रच कर सत्य विद्या को बदनाम करते हैं, इसी कार[ण] झूठों का तिरस्कार और सच्चों का सत्कार सर्वदा करना चाहिये, परन्तु जिस समय किसी का असत्य प्रघट हो जावे, उसी समय उस का परित्याग करना चाहिये। जैसे बहुत दिनों के पश्चात् हरिश्चन्द्र का कपट प्रकट होने से अपने आर्य्यसमाजों से बाहर किया गया। इसी प्रकार जिस किसी पुरुष का असत्य प्रघट हो जावे उसको तत्काल ही अपने समाजों से अलग कर दो चाहे कोई क्यों न हो। अस[त्य] वादी की सर्वदा परीक्षा करते रहो। इसीका नाम सुधार है क्योंकि **बुद्धेः फलमनाग्रहः** जब यही सत्पुरुष का लक्षण है, तब उसको सच्चा ज्ञान हुवा जानो जब अपने निश्चय किये हुवे में भी, जितना असत्य जाने उस को उसी समय त्याग दे [तो] उस के दूसरे का असत्य छोड़ने में क्या आश्चर्य है। ऐसे काम के बिना न आप सुधर सकता है और न दूसरे को सुधार सकता है। अब इस पत्री को इस वृत्तान्त पर पूर्ण करता हूं कि इन साहिबों के पूर्व पत्रों और सात दिन बातचीत करने से निश्चय किया है कि इन का तन मन [और] धन सत्य के प्रकाश और असत्य के विनाश और सब मनुष्यों के हित करने में है। जैसा कि आप लोगों का निश्चय से उद्योग है। वेदभाष्य अब शीघ्र आने वाला है कुछ चिन्ता मत करना॥

९।५।१८७८[1] मेरठ।　　(दयानन्द सरस्वती)

—:०:—

१. यहां श्रीनारायण स्वामीजी से प्राप्त तथा दानापुरसम्बन्धी पुस्तक

[पूर्ण संख्या ३१८] **पत्र**[1]

मन्त्री आर्यसमाज अमृतसर
११।५।१८७९ मेरठ

—:०:—

[पूर्ण संख्या ३१९] **पत्रांश**[2]

५ ...

पाताल देशस्थों का पत्र तुम्हारे द्वारा वाला अब तक नहीं पहुंचा है। उन को हमारा नमस्ते कह के कुशल पूछना और अब वह क्या काम करते हैं सो लिखते रहना। जिन बाबू छेदीलाल वा शिवनारायण गुमास्ता कमसरेट मेरठ की कोठी पर वे उतरे थे,
१० उन से लैकचर छपवा कर[3] भेजने को कह गये थे, सो अब तक नहीं भेजा, कदाचित् भूल गया, याद दिला देना। हम यहां से परसों अलीगढ़ जावेंगे॥

ज्येष्ठ वदी १४ मंगलवार
२० मई ७९ मेरठ — दयानन्द सरस्वती

—:०:—

---

१५ में छपे पत्र में ९।५।१८७८ पाठ है। इस में निश्चय ही लेखक की भूल है। पिछले पूर्णसंख्या ३१६ पर छपे पत्र की तुलना से तथा ऋ० द० के जीवन चरित से स्पष्ट है कि यहां सन् १८७९ ही चाहिये

१. पूर्ण सं० ३१६ वाला ही पत्र मन्त्री आर्यसमाज अमृतसर को ११ मई १८७९ [ज्येष्ठ कृष्ण ३ रविवार सं० १९३६] को लिखा गया था।
२० देखो उर्दू मासिक पत्र विद्या प्रकाशक, अगस्त १८७९।

२. पं० लेखरामकृत जीवनचरित पृ० ८३७ (हिन्दी सं० पृष्ठ ८७१, ८७२) पर उद्धृत। सम्भवत: मुं० समर्थदान के नाम मुम्बई को यह पत्र भेजा गया है।

३. कर्नल आल्काट ने मेरठ में अंग्रेजी में एक व्याख्यान दिया था। उसे
२५ बम्बई जाकर छपवाकर भेजने के लिये बा० छेदीलाल को कह गये थे। उसी की ओर यह संकेत है। यजुर्वेद भाष्य अङ्क १५ (आषाढ १९३६) के अन्त में छपे पुस्तकों के विज्ञापन में संख्या २१ पर '**अमरीका वालों का लेक्चर**' निर्दिष्ट है। यह मेरठ में दिया गया लेक्चर ही प्रतीत होता है। यह हमें प्राप्त नहीं हुआ।

[पूर्ण संख्या ३२०]　　पत्रांश[1]

[मुंशी समर्थदान]

... .हमें हरिश्चन्द्र ने एक बार लिखा था अमरीका वाले कुछ धन भेजना चाहते हैं। उस के पश्चात् जब वह हमसे मिला तो हमने उससे कह दिया कि इस बात को सर्वसाधारण में और विशेषतः आर्यसमाजियों में प्रचरित कर दो कि अमेरिका वाले आर्यसमाज की सहायता के लिये धन भेजना चाहते हैं और जो धन आवे उसे दाताओं के नाम सहित पत्रों में मुद्रित करा दो। उसने यह उत्तर दिया कि मैं अमेरिका वालों की इच्छा के अनुसार कार्य करूंगा। हमने उस से कह दिया कि जो धन प्राप्त हो उसे तीन कार्यों में व्यय करना।

(१) वेदों के सम्बन्ध में ज्ञान और पुस्तक प्रचार में, (२) सदाचार की शिक्षा देने वाली सभाओं की सहायता में और (३) दीन दरिद्रों की सहायता में। परन्तु अब ज्ञात होता है कि उसने इन कार्यों में से एक भी नहीं किया।

[२५ मई १८७९ अलीगढ़][2]

—:०:—

[पूर्ण संख्या ३२१]　　पत्रांश[3]

....

सीलोन की चिट्ठी हमने उनके पास वापस की है। उनको हमारा नमस्ते।

२८ मई सन् १८७९[4]　　　　दयानन्द सरस्वती

—:०:—

---

१. यह पत्रांश पं० देवेन्द्रनाथ सङ्कलित जी० च० पृष्ठ ७६७ पर उद्धृत है।

२. ज्येष्ठ शु० ४ रविवार, सं० १९३६। उपर्युक्त तारीख उक्त जीवन-चरित में दी है।

३. यह पत्रांश पं० लेखराम कृत जीवनचरित (हिन्दी सं० पृष्ठ ८७२ में उद्धृत है। तारीख भी नहीं निर्दिष्ट है।

४. ज्येष्ठ शु० ७, सं० १९३६।

[पूर्ण संख्या ३२२] मुख्तियार नामा[1]

मैं कि स्वामी दयानन्द सरस्वती जी महाराज शिष्य स्वामी डण्डी प्रज्ञाचक्षु जी महाराज मथुरावासी मुकीम हाल कोल[2] का हूं। जो कि तरजुमा वेदभाष्य व दीगर पुस्तकों का किया है उनके
५ खदीदारान हर जिला व शहर व कसबा व मौजा मुमालिक मगरबी व शुमाली व मुल्क अवध व पञ्जाब व बम्बई व मद्रास व कलकत्ता व ...... व बङ्गाला व इङ्गलैण्ड व योरप में मौजूद हैं और जरे कीमत व जुम्मे खरीदारान के वाजिबुल अदा है और आयन्दा भी कीमत व जुम्मे खरीदारान के वाजिबुल अदा होगी इस
१० वास्ते जानिब अपने से ठाकुर मुकन्दसिंह व मुन्नासिंह खलफ ठाकुर नरायन सिंह साकिन व रईस छलेसर व ठाकुर भूपालसिंह खलफ ठाकुर कञ्चनसिंह साकिन व रईस मौजा अहक तहसील कोल को मुखत्यार आम मुकररिर करके ये इकरार है के मुखत्यार आन मौसूफ मुत्फर्दन खुआ मुस्तरकन जरे कीमत वेदभाष्य व दीगर
१५ पुस्तकान जो अब तक बाकी हमारी है या आयन्दा ब जुम्मे खरीदारान वेदभाष्य वगैरा भी रसूल करें और रसीद लिखदें खुआ व जरिये नालिश अदालत दीवानी के रुपया वसूल करें या नालिश अदालत दीवानी या कलक्टरी में दायर करें और इबारत तस्दीक हमारी जानिब से अरजी दावा या ब्यान तहरीरी पर लिखें या
२० मुख्यतार खास या वकील या कारिन्दा मुकररर करें और नालिश बनाम कारिन्दा या मुख्तियार या वकील बाबत खयानत जरे कीमत वेदभाष्य वगैरा या खरीदारान पर दायर करें और निस्बत कारिन्दा मुकरर किये हुये हमारे मातहत मुखत्यारान मजकूर के होंगे या किसी अमर में जवाब देही करें या किसी नालिश में बाज-
२५ दावा या तसफिया नामा या दस्तबरदारी गुजराने या महकमा सबरजिस्टरार खुआ रजिस्ट्रार में हाजिर होकर दस्तावेज नविस्ता

---

१. इस मुखत्यारनामे की प्रतिलिपि श्री महाशय मामराज जी ने श्री बाबू पीतमलाल जी बी० ए० एल० एल० बी० वकील, प्रधान आ० स० अलीगढ़ तथा श्री बा० सुलतानसिंह जी वकील अलीगढ़ के विशेष प्रयत्न से
३० ता० २६-२-५३ को प्राप्त की। इस की प्रतिलिपि वर्तमान सब रजिस्ट्रार श्री मोहम्मद उमरखां अलीगढ़ के हस्ताक्षर से युक्त ता० २६-२-५३ को प्राप्त हुई।

२. कोल = कोयल, जिला अलीगढ़।

हमारी पर बाबत वेदभाष्य या दीगर पुस्तकान की रजिस्ट्री करावें खुआ खजाना कलक्टरी से रुपया हायअदा बजरिये वाउचर अदालत मुन्सफी या जज मातहत या जनाब जज बहादुर वसूल करके रसीद लिख दें या अदालत से रुपया वसूल करें इस जिले या दीगर इजला में कोई कार्रवाई किसी किस्म की मामलात अदालत ५
में करें और बहुत सी जिल्दें अक्सर पुस्तकों की जो ममलूका हमारी हैं वह दीगर असखास के पास अमानत मौजूद हैं और आयन्दा भी होंगी हमको इसकदर फुर्सत नहीं है कि हम बजात खास पैरवी करें और जो कोई नीलाम या डिगरी हमारी खरीद करके रसीद जरे समन लिखदें वह सब साख्ता परदाख्ता मुखतारान कबूल व १०
मंजूर है। लिहाजा यह मुखतार नामा आम लिख दिया है के सनद हो। तहरीर तारीख ४ जून सन् १८७९ मुकाम कोल तहरीर हुआ बकलम शौपरशाद वल्द छीतर मल कायस्थ साकिन कोल। अलब्द स्वामी दयानन्दसरस्वती जी महाराज बखत हिन्दी,

गवाह—पण्डित गोविन्दराम वल्द पं० नारायणदास ब्राह्मण १५
साकिन अतरौली, बखत हिन्दी,

गवाह—हरप्रशाद वल्द दुर्गा परशाद कौम कायस्थ साकिन हाल अलीगढ़,

गवाह—पण्डित भीमसेन वल्द नेकराम बरहमन साकिन मौजा लालपुर, जिला एटा मुजाजिम स्वामी जी महाराज बखत हिन्दी २०
मुड़िया।

इबारत[1] तस्दीक—

यह दस्तावेज दफ्तर सब रजिस्ट्रार मुकाम तहसील कोल अलीगढ़ में बतारीख ४ जून सन् १८७९ रोज चहार शंबा माबैन ११ व १२ बजे दिन के पेश हुई बजरिये दरख्वास्त कमीशन २५
मुकन्दसिंह बकलमखुद। दस्तखत गुलाम हैदर खां साहिब सब रजिस्ट्रार—

तकमील तहरीर दस्तावेज हाजा में मुसम्मी स्वामी दयानन्द

---

१. यह आगे छपा **'इबारत तस्दीक'** का ब्योरा **मुखत्यारनामे** से सम्बन्ध रखता है और श्री स्वामी जी की अत्यधिक शारीरिक अस्वस्थता को ३०
प्रकट करता है, अत: हम इसे यहां छाप रहे हैं।

सरस्वती जी महाराज शिष्य स्वामी दण्डी प्रज्ञाचक्षु जी महाराज मथुरावासी मुकीम हाल कोल उम्र ५४ वर्ष पेशा पण्डिताई ने रोबरू मुबारिक अली मुहर्रर दोयम जो हमारी तरफ से वास्ते तस्दीक व तहरीर इजहार मुसम्मी मजकूर के अहले कमीशन ५ मुकर्रर हुआ था इकबाल किया और मिकर निवासिन्दा दस्तावेज हाजा से मुबारिक अली मुहर्रर एडीशनल बजात खुद वाकिफ है। हम को इतमीनान है कि यह दस्तावेज ब रजाय मुसम्मी मजकूर लिखी गयी और मिकर **मजकूर बवजह कसरत जारी दस्तों और पेचिस के असालतन हाजरी से मुवाफ किया गया।**

१० ५ जून सन् १८७६ अलब्द मुबारिक अली मुहर्रर दोयम अहले कमीशन, दस्तखत मोहम्मद गुलाम हैदरखाँ साहब सब रजिस्ट्रार, बतारीख ४ जून सन् १८७६ रोबरू अहले कमीशन दस्तखत मिकर के माबैन ४ व ५ बजे रोज चहार शंबा सब्त हुए, दस्तखत मोहम्मद गुलाम हैदर खाँ साहब, सब रजिस्ट्रार—रजिस्ट्री नम्बर १५ १५७ सफहा १८५ जिल्द २५ रजिस्टर नम्बर ४ में बतारीख ५ जून सन् १८७६ की गई दस्तखत मोहम्मद गुलाम हैदर खाँ साहब सब रजिस्ट्रार।

—:०:—

[पूर्ण संख्या ३२३] विज्ञापन[1]

सब सज्जन लोगों को विदित हो कि ठिकाना जिले अलीगढ़ २० परगना मौरथल ग्राम छलेश्वर ठाकुर मुकुन्दसिंह ठाकुर मुन्नासिंह रईस तथा ठाकुर भूपालसिंह ऐख रईस को हमने वेदभाष्य और सत्यार्थप्रकाशादि पुस्तकों के मूल्य वसूल करने का अधिकार दिया है अर्थात् इनके नाम **मुखित्यारनामा**[2] रजिस्टरी कराके दिया है। इनमें से ठाकुर मुन्नासिंह के नाम पूर्वोक्त ठिकाने वेदभाष्यादि २५ पुस्तकों का मूल्य भेजें। वे ग्राहकों के पास रसीद भेज देवेंगे। जो

१. यह विज्ञापन ऋग्वेदभाष्य तथा यजुर्वेदभाष्य अंक ६ (वैशाख १९३६) पर छपा है। यह अंक देर से निकला था। इस में जिस मुख्तियारनामे का उल्लेख है वह ५ जून १८७९ (आषाढ कृष्ण १ सं० १९३६) को रजिस्ट्री कराया गया था। देखो पूर्ण संख्या ३२२ का अन्त।

३० २. यह पूर्णसंख्या ३२२ पृष्ठ ३५६-३५८ पर छपा है।

कोई पुस्तक लिया चाहे वह भी मुन्नासिंहजी के नाम पत्र भेजे वा इस विषय में जो कुछ लिखना आवश्यक हो सो भी लिखे और जो अङ्क ५ वें में पण्डित उमरावसिंह जी के नाम से नोटिस दिया था[1] सो अब नहीं रहा। अब मैं सब ग्राहकों से प्रीतिपूर्वक सूचना करता हूं कि जैसी प्रीति से इस काम में पुस्तक लेके सहायक हुए हैं वैसे मूल्य भेजने में भी विलम्ब न करें। क्योंकि अब जो मुखतियार किये हैं वे जिस उपाय से मूल्य वसूल होगा वह-वह उपाय करके शीघ्र वसूल करेंगे। और जो अंक ५ वें में नोटिस दिया था कि उधार वाले ग्राहकों के पास ६ अंक नहीं भेजा जायगा[2] सो भी नहीं रहा, क्योंकि जब तक ग्राहक अपनी खुशी से बंध न करावेगा तब तक बराबर पहुंचता रहेगा। जो ग्राहक वर्ष की आदि में पहिले ही मूल्य भेज देंगे। उन से प्रत्येक वेद का वार्षिक मूल्य ४) रु० लिये जायेंगे और जो प्रथम न भेजेंगे उनसे एक-एक वर्ष के ४॥) रु० के हिसाब से लिये जायेंगे और जो ग्राहक अपनी प्रसन्नता से नहीं भेजेगा उससे डाक महसूल भी लिया जायगा। और हमारे इस काम में कोई मनुष्य किसी प्रकार की बुराई की है वा करेगा, उसका भी प्रबंध पूर्वोक्त मुखतियार लोग यथोचित करेंगे। जैसा कि बाबू हरिश्चन्द्र चिन्तामणि ने बहुत से रु० पुस्तकों की बाबत आये वे हमारे पास न भेजे, न हिसाब ठीक-ठीक दिया और सुना है कि विलायत को चले गये। जो नोटिस पहुंचने पर रुपये न भेज देंगे तो उन पर अब नालिश पड़ेगी॥

हस्ताक्षर दयानन्द सरस्वती

—:०:—

[पूर्ण संख्या ३२४]　　　　पत्रांश

[प्राणजी दास, बम्बई]

श्याम जी को पत्र लिखकर खबर मंगवा लीजिये कि बाबू हरिश्चन्द्र इंगलैण्ड में कौन सी जगह पर है।[3]

—:०:—

---

१. यह पूर्ण संख्या ३०७ पृष्ठ ३३८-३४०।

२. देखो—पृष्ठ ३४०, पं० १५-१७।

३. इस पत्र का संकेत प्राणजीदास काहनदास के ता० २९ जून सन् १८७९

[पूर्ण संख्या ३२५] पत्र-सारांश

[केशवलाल निर्भयराम, बम्बई]
संस्कारविधि का रुपया जल्द वापस करेंगे।

—:०:—

[पूर्ण संख्या ३२६] पत्रांश[1]

५ ....

हम बमुकाम छलेसर परगना थल जिला अलीगढ़ में क्याम पजीर हैं। जुलाब जो लिया था, उससे फारिग हो गये मगर कमज़ोरी किसी कदर है। बाद ७, ८ दिन के मुकाम मुरादाबाद को जायेंगे। मुशी इन्द्रमन भी यहां आये हैं॥

१० २३ जून १८७६[2] दयानन्द सरस्वती
छलेसर

—:०:—

[पूर्ण संख्या ३२७] पत्रांश[3]

....

पाताल निवासियों के पत्र का मतलब यहां लिखना कठिन है, १५ जब समझेंगे, तब जवाब लिखा जावेगा।

हमारा शरीर अब कुछ अच्छा होता आता है।

के श्यामजी कृष्णवर्मा के नाम लिखे पत्र में है। प्राणजीदास का(प्रतिलिपि किया) पत्र स्वर्गीय श्री० महेशप्रसादजी मौलवी आलिम फाजिल के संग्रह से श्री मामराज जी ने २० फरवरी १९५५ को काशी में प्राप्त २० किया। अब यह उनके संग्रह में सुरक्षित है। प्राणजी का यह पत्र मुन्शी समर्थदान ने पूर्ण संख्या ३२८ (पृष्ठ ३६१) पर छपे अपने पत्र के साथ श्यामजी को इङ्गलैण्ड भेजा था।

१. पं० लेखराम कृत उर्दू जीवनचरित पृष्ठ ७६८ (हिन्दी सं० पृष्ठ ७९५) पर उद्धृत [संभवत: यह पत्र मुं० समर्थदान को लिखा गया था।]

२५ २. मिति आषाढ़ सुदी ४, संवत् १९३६, सोमवार।

३. पं० लेखरामकृत उर्दू जीवनचरित पृ० ७६८(हिन्दी सं० पृ० ७९५) पर उद्धृत। [सम्भवत: यह पत्र मुंशी समर्थदान को लिखा गया था।]

आषाढ़ सुदी ५ मंगलवार १९३६ ।[1]

दयानन्द सरस्वती
छलेसर

चन्दा वेदभाष्य का मुन्नासिंह वसूल करेंगे ।[2]

—:o:—

[पूर्ण संख्या ३२८] पत्र ५

॥ ओ३म् ॥

वेदभाष्य कार्यालय मारवाड़ी बाजार मुवाक्षे
बीका चाली मुम्बई ता० ३० जून सं० १८७९ ई०[1]

पण्डितवर श्यामजी कृष्णवर्म्मा आक्सफोर्ड

प्रियतम महाशय, नमस्ते ! १०

निवेदन यह है कि पत्र आप के मास्तर प्राणजीवनदास के पास आये। आपके आनन्द के समाचार सुन कर बड़ा हर्ष प्राप्त हुआ। आप बरिस्टर की परीक्षा देने के लिये कालेज में भरती हुए सो बड़ी आनन्दकारक बात हुई। **मैं यह पत्र स्वामी जी की आज्ञानुसार लिखता हूं।**[2] बाबू हरिश्चन्द्र, अमेरिका वालों और केशवलाल निर्भयराम का हाल आप को मास्तर की पत्री इस पत्र में मैं डालता हूं उससे मालूम होगा। उक्त बाबू बहुत रुपये खा गया। इसलिये अमेरिकन के द्वारा उस पर नालिश करने का विचार है। आप तलाश करके लिखें कि बाबू किस शहर में और किस ठिकाने पर है इसकी अति आवश्यकता है। लंदन में है तो उसका एड्रेस भी लिख भेजें। मेरे नाम पर पत्र भेजना। मेरा ठिकाना छपे करा परचे में भेजता हूं सो विदित होगा। आप वहां के समाचार पत्रों १५ २०

१. २४ जून १८७९।

२. यह पङ्क्ति 'पत्र और विज्ञापन' के प्रथम और द्वितीय संस्करण में २३ जून १८७९ के पत्र पूर्णसंख्या २१९ के अन्त में छपी है। पं० लेखराम जी कृत जीवनचरित में यह पङ्क्ति यहां छपी है। इस कारण हमने इसे यहां छापा है। २५

३. आषाढ़ शुक्ल ११, सोमवार, संवत् १९३६।

४. यह पत्र ऋ० द० की आज्ञानुसार लिखा गया, अतएव इस संग्रह में छापा है। ३०

में छपा के ऐसा प्रगट कर दें कि बाबू मुम्बई के आर्यसमाज का प्रधान था सो बिलकुल समाज से निकाल दिया गया है और उस समाज के प्रधान रावबहादुर गोपालराव हरिदेशमुख नियत हुए हैं स्वामी जी के नाम के पत्र आदि इङ्गलैण्ड से आते हैं वे अभी तक ५ बाबू के नाम से आते हैं अब आप इतना काम कृपा करके करना कि वहां के नियूज पेपरों में नोटिस दे दें कि अब पीछे जिस किसी को स्वामी दयान्द सरस्वती जी के पास पत्र वा समाचारपत्र भेजना हो सो स्वामी जी के एजेन्ट मुनशी समर्थदान के द्वारा भेजें और मेरा नाम और पता और मुम्बई सब यथार्थ छाप देना। यह १० काम बड़ी आवश्यकता का है नोटिस आदि छपाने के बाबत कुछ दाम खर्च होंगे सो आप के लिखने से यहां धनजी को दे दिये जायेंगे। आज बुकपोस्ट के द्वारा वेदभाष्य का अंक ५१६ और पंच-महायज्ञविधि १ और पंचांग १ भेजता हूं सो रसीद भेजना। **अंक प्रोफेसर मोनियर विलियमस** के हैं और पुस्तक और पंचाग आप के १५ लिये भेजे हैं सो उक्त प्रोफेसर से लेना। आप ने लिखा कि प्रोफेसर के पास अक नहीं पहुंचे सो आप के लिखने से विदित होगा कि कौन से अंक नहीं पहुंचे तब मैं अंक भेज दूंगा। वेदभाष्य का मूल्य ५।६ में नोटिस में दिये हैं उनके अनुसार भेजवा देना। विलायत का महसूल जो अंकों पर लगता है उसका मूल्य भी २० भेजवाना। **प्रोफेसर मेक्समूलर और मोनियर विलियमस दोनों से मूल्य भेजवा देना और लिखना कि उन लोगों का स्वामी जी और वेदभाष्य के विषय में क्या कहना है। स्वामी जी उनके भाष्य का खण्डन करते हैं उसके बाबत वे क्या कहते हैं।** अमेरिका वालों के विषय में वे क्या कहते हैं सो भी लिखना। वहाँ संस्कृत का कालेज २५ है उसमें कैसे पुस्तक पढ़ाये जाते हैं सो लिखना। और कोई भाष्य का ग्राहक हो तो करना । वहां के लोगों से कहना कि तुम पढ़ नहीं सकते तो पुस्तकालयों में रखने के लिये ही ऐसा पुस्तक मंगाना चाहिये। संस्कृत विद्या का वहाँ कैसा प्रचार है और आर्य समाजों के बाबत वे लोग क्या कहते हैं ? मैं जानता हूं कि आप ३० का समय बहुमूल्य है, परन्तु क्या करें उधर का हाल सुनने को चित्त बहुत चाहता है। आप जैसे भद्रपुरुष हमको हाल नहीं लिखेंगे तो और कौन लिखेगा। स्वामी जी बहुत प्रसन्न हैं। आपके भाई

धनजी बहुत प्रसन्न हैं। धन जी का पत्र इसमें भेजता हूं सो लेना। बाबू के रहने का पता तलाश करके शीघ्र लिखना और मेरे योग्य काम हो सो सदैव लिखा करें। हम विचारते हैं कि बाबू वहां आर्य्यसमाज और स्वामी जी के विरुद्ध कहता होगा सो आप लिखना। जो वह पेपर में कुछ बुराई छापें तो आप उसका उत्तर यथार्थ देना जिस बात की खबर आप को न हो सो लिखना हम बराबर भेजेंगे। बाबू आप से कुछ सहायता चाहे तो देने के योग्य नहीं है।

आपका शुभचिन्तक
समर्थदान प्रवन्धकर्त्ता वेदभाष्य
कार्यालय मुम्बई

—:०:—

[पूर्ण संख्या ३२९] पत्र-सारांश

[साहू श्याम सुन्दरदास, मुरादाबाद]

[लड़के का] यज्ञोपवीत संस्कार करा कर उस को घर में पढ़ाओ। आज कल गुरुकुल का प्रबन्ध ठीक नहीं है और इसका विवाह मत करना।[1]

[दयानन्द सरस्वती]

०:—:—

[पूर्ण संख्या ३३०] पत्र

Moradabad[2]

---

१. इस पत्र सारांश का निर्देश पं० लेखराम कृत जी० च० हिन्दी सं० पृष्ठ ४७२ पर मिलता है। यह चिट्ठी स्वामी जी ने कहां से कब लिखी, इसका जीवन चरित से पता नहीं चलता। हमने मुरादाबाद के प्रसंग में जोड़ा है।

२. कटघर मुहल्ला, मुरादाबाद निवासी ठाकुर शंकरसिंह उपनाम भूप जी श्री स्वामी जी के बड़े भक्त थे। श्री स्वामी जी के अनेक पत्रों का वे ही अंग्रेजी अनुवाद करते थे। यह पत्र भी उन्होंने ही अंग्रेजी में अनूदित करके दिया होगा। सौभाग्यवश अंग्रेजी प्रतिलिपि उनके घर में सुरक्षित रही। १३ नवम्बर सन् १९२६ तदनुसार कार्तिक शुक्ल ८, शनिवार संवत् १९८३ को श्री भूपजी के पुत्र ठाकुर चैतन्यदेवजी से ला० मामराज यह पत्र लाये थे।

The 13th July 1879[1].

Dear Col. Olcott,

Your letters of 10th June and 5th July duly to hand. Also of Madam H.P. Blavatsky of probably 30th June in Hindi.

५ You have acted very wisely in negotiating with the Governor of Bombay; and that British Government has no more suspicious regarding your stay in India and your movements to different places on sacred duty of preaching the Vedic religion.

१० The Kunte brothers are fickle minded I knew. I am glad to hear, you have begun reading "Nagari".

Your proposal for publishing a monthly journal is very sound. I only add a little to the name you have already proposed. My object is that the name will convey to the १५ subscribers that joint exertions are made in the paper—this may perhaps cause a great influx of subscribers. Call the journal by name "The Theosophist or Aryaprakash."

The date of the foundation of Arya Samaj you can get from Bombay Samaj. The object of this Samaj is that all २० mankind—

(1) "give up bad ideas, deeds and habits"

(2) "and take hold of good ideas, deeds and habits." Guna (गुण) Karma (कर्म्म) and Svabhava (स्वभाव) through the ancient (Sanatana) (सनातन) २५ (1) Veda Vidya. (2) God-creation (ईश्वरकृतसृष्टि).

(3) The question with regard to my life, I should say that at present I am not quite prepared to undertake so long a business. I shall give you a brief account of me after sometime. I shall do this work myself or have it done directly ३० under my own eye. Certificate will follow.

Yours truly,

(Sd.)..................

[भाषानुवाद]

मुरादाबाद

१३ जुलाई १८७९[1]

३५

---

१. श्रावण कृष्ण ९, रविवार, सं० १९३६ ।

प्रिय कर्नल आल्काट

आपके दस जून और पांच जुलाई के पत्र हस्तगत हुए और श्रीमती एच० पी० ब्लावट्स्की का भी सम्भवतः ३० जून का हिन्दी पत्र मिला। बम्बई के गवर्नर के साथ बात चीत करके आपने बुद्धिमत्ता का काम किया है और अब आपके भारत में रहने तथा वैदिक धर्म के प्रचार के पवित्र कार्य के लिये विभिन्न स्थानों में भ्रमण के विषय में ब्रिटिश सरकार सशंक न होगी। मैं समझ गया कण्टे बन्धु चञ्चलचित्त व्यक्ति हैं। यह सुन कर कि आपने नागरी पढ़नी आरम्भ कर दी है बहुत प्रसन्न हुआ। ५

एक मासिक पत्रिका के प्रकाशन के लिये आपका प्रस्ताव बहुत ठोस है। जो नाम आपने प्रस्तुत किये हैं उसमें कुछ थोड़ा और जोड़ना चाहता हूं। मेरा उद्देश्य यह है कि नाम से ग्राहक यह समझें कि पत्रिका चलाने में संयुक्त प्रयत्न किया जा रहा है। इससे सम्भवतः ग्राहकों की संख्या में वृद्धि हो। १०

पत्रिका का नाम थियोसोफिस्ट अथवा "आर्यप्रकाश" रखें। आप आर्य-समाज स्थापना तिथि बम्बई आर्यसमाज से प्राप्त कर सकते हैं। इस समाज का उद्देश्य है कि सभी मनुष्य— १५

(१) बुरे कर्म और स्वभाव छोड़ दें।

(२) सनातन वेद विद्या और ईश्वर कृत सृष्टि से अच्छे प्रकार अच्छे गुण कर्म स्वभाव ग्रहण करें जो किये जा सकते हैं।

(३) जहां तक मेरे जीवन के विषय में प्रश्न है, मैं कहूंगा कि इस समय मैं इतने लम्बे कार्य को अपने हाथ में लेने के लिये सर्वथा तय्यार नहीं हूं। कुछ समय पश्चात् मैं स्वयं अपना संक्षिप्त वृत्तांत दूंगा। या तो यह कार्य मैं अपने आंखों के सामने करवाऊंगा। २०

प्रमाणपत्र बाद में भेजूंगा।

आपका— २५

(ह) ————

—:o:—

[पूर्ण संख्या ३३१] पत्र

Dear M. Blavatsky[1],

---

१. यह पत्र मुरादाबाद से मुम्बई को भेजा गया। इस पत्र की प्राप्ति वैसे ही हुई है, जैसे इससे पूर्व पूर्ण संख्या ३३० के पत्र की। इस पत्र के ३०

(1) After death man's or any one's "Atma" lives in air "Vayu" according to the sins and virtues of the departed soul. God allows the transmigration or a new life When there is small proportion of sins and numerous good deed, ५ then the soul gets a body of highly educated man or "Deva" in proportion to good deeds and after leaving the Vidvan body, ascends to Moksha or becomes free of sorrow and troubles. When Sins and virtues are equal, then soul gets a man's body. When Sins increase and virtues decrease the १० soul is sent to lower creation and vegetable world.

The "Jiva" or soul suffers for the increased quantity of sins in the bodies of lower animals or in form of trees plants. & c., and after a lapse of time when sins and virtues again kick the beam equally, then the soul again gets a human १५ body.

In the same manner "Vidvan" after the enjoyment of blessings in Deva-life, becomes man again, when the Virtues and Sins are in equal proportion.

Sins and Virtues are of Various stages and degrees.

२० The inferior or superior body is given according to their proportion both in the brute creation and human being as well as of Deva.

The Mukta Jiva enjoys eternal happiness till Mahakalpa (36,000 time creation and destruction of the world) and २५ comes into the human body again and transmigration goes on again, according to good and bad deeds.

(2) The first rishis were Aditya, Vayu, Agni and Angira.

The omnipresent (Sarva Vyapaka), God inspired the sacred Vedas into their Atma, "Nothing like a Heavenly ३० book coming from Heaven and sent by God thro' his Messenger." This is detailed at length in my Veda Bhashya from the very beginning (vide Anka I, & c,). You can have it read to you. All such things are discussed at length in my books both in Sanskrit and Bhasha, which see.

---

३५ अन्तर्गत वेदभाष्य के अंग्रेजी अनुवाद के विषय में जो लिखा है, उस का उल्लेख अगले पूर्ण संख्या ३३२ के जुलाई १८७९ के पत्र में भी है।

(3) The Verbal prayer as well as practice is to teach others but for ones own good it should be done internally.

(4) (a) In order to obtain the advantage of Diksha and Yoga, company of the learned (Vidvano ka sang). Atma ki pavitrata, (purification of soul) and "Pratyakshadi pramana." (The essence and reality of the Universe) one is to practice.

The practitioners are allowed to embrace the deeds which are to help in the matter; the contrary to be rejected—(see Upasanaprakarna in Veda Bhumika 9 Anka).

(b) The soul in human body can perform wonders. By knowing the properties and formation of all the things in the universe (between God and Bhumi earth)—a human being can acquire power of seeing, hearing, & c., far distant objects which generally is unable to attend to.

You can write articles on any subject, but first consult my books and write cautiously in their light. The contrary or the offspring or your own brain will have to de answered by you if criticized.

Yours.........
(Sd.).........

P. S. I received the other day under cover of Col. Olcotts' letter 9th July —Letters From:—

Peter Davidson Scotland (13th June 1879).

I shall send answer to Peter Davidson in English as you say. The others will be replied in Hindi.

In these matters I shall take steps according to your suggestions. With regard to your enquiry of translating Veda-Bhashya into English and publish it into your journal, I am of opinion that:—

(1) It is an uphill work to translate faithfully one language into another—and if at all possible the translator should be equally learned in both languages. My Bhasha version is not like common vernacular; word for word of Sanskrit is translated in Bhasha. A most competent man both in English and Sanskrit is required to translate my Veda-Bhashya—and that even not quite to the mark.

(2) Unless I hear the gist of translation thus made in English—myself I cannot be satisfied of its accuracy and I have not time enough to do this.

If you can manage to keep the translator with me it is possible that at leisure moments he can read it over to me and have it rectified where necessary—and where he might be unable to understand, he can ask its explanation from me.

(3) Supposing all these arrangement can be successfully made—the greatest drawback then is that the Aryan (English student) community of India will, on the appearance of English translation of my Veda-Bhashya give up the Sanskrit and Hindi studies which they are so vehemently pursuing now a days in order to enable themselves to read Veda-Bhashya, and which is the chief object of mine, so of course English translation will be greatly serviceable to European scholars only.

(4) This will lead to the diminution of the number of subscriber's of Hindi Edition of Veda-Bhashya and cause a great deterioration in its publication. This will result very probably in the stoppage of the Hindi version altogether. The treasure whence you wish to take will exhaust. The final result will be the total destruction of both Hindi and [Sanskrit and] English will thus be a favourable issue ? It is not my desire to prohibit you from translating, as without the English translation the European nation cannot catch the true light. But first consider the above points.

First of all the four Vedas should be expeditelly translated. I have estimated that it will take 10 years for meet the present rate of translation of all the Vedas. It is most important to finish them.

Please answer all the points, Your———

[भाषानुवाद]

प्रिय श्रीमती ब्लैवट्स्की

१—मनुष्य या किसी की मृत्यु के पश्चात् आत्मा मृत व्यक्ति के पाप

पुण्यों के अनुसार वायु में निवास करता है। ईश्वर पुनर्जन्म या नया जन्म देता है। जब पापों का अनुपात कम और शुभ कर्म अधिक होते हैं तथा शुभ कर्मों के अनुपात से सुशिक्षित या देव का शरीर प्राप्त करता है और विद्वान् का शरीर छोड़ कर मोक्ष प्राप्त करता है। या दु:ख और विपत्तियों से मुक्त हो जाता है। जब पाप पुण्य बराबर होते हैं, तब मनुष्य का शरीर प्राप्त करता है। जब पाप अधिक और पुण्य कम होते हैं तो आत्मा निम्नयोनि या स्थावर योनियों में जाता है। पाप अधिक होने से जीव निम्नकोटि के प्राणियों तथा वृक्षादिकाओं के शरीरों में कष्ट पाता है और कुछ समय बाद जब पाप और पुण्य बराबर हो जाते हैं तो आत्मा पुन: मनुष्य का शरीर पाता है।

इसी प्रकार "देव-जीवन" का आनन्द लेने के बाद पाप पुण्य के बराबर हो जाने पर विद्वान् पुन: मनुष्य शरीर धारण करता है।

पाप और पुण्य के अनेक स्तर और श्रेणियां हैं। अमानुषी सृष्टि और मानुषी तथा दैवी सृष्टि में उनके अनुपात के अनुसार अच्छा या बुरा शरीर दिया जाता है।

मुक्त जीव महाकल्प तक (संसार की ३६ हजार बार सृष्टि और प्रलय होने तक के समय का) अनन्त सुख का भोग करता है और पुन: मनुष्य शरीर में आता है। और पुन: अच्छे बुरे कर्मों के अनुसार पुनर्जन्म चल पड़ता है।

२—प्रथम ऋषि आदित्य वायु अग्नि और अंगिरा थे।

सर्वव्यापक परमात्मा ने उनकी आत्मा में पवित्र वेदों की प्रेरणा की। परमात्मा ने अपने पैगम्बर द्वारा स्वर्ग से ईश्वरीय पुस्तक जैसी कोई चीज नहीं भेजी। इस का मेरे वेदभाष्य में आरम्भ से ही बड़े विस्तार से वर्णन है। (देखो अंक १, आदि) आप इसे अपने लिये पढ़वा सकती हैं। मेरी संस्कृत और भाषा की दोनों पुस्तकों में इस प्रकार की बातों पर विवेचन किया गया है। उसे देखिए!

३—उच्चारण सहित प्रार्थना तथा आवृत्ति दूसरों को शिक्षा देने के लिये है। किन्तु अपने हित के लिये मन में ही करनी चाहिये।

४—(क) दीक्षा और योग, विद्वानों का संग, आत्मा की पवित्रता और प्रत्यक्षादि प्रमाणों (जगत् की तत्त्व और वास्तविकता) का लाभ प्राप्त करने के लिये अभ्यास करना चाहिये।

अभ्यासी को इस विषय में सहायक कार्यों को करने की अनुमति है। और विपरीतों को छोड़ देना चाहिये (देखो उपासना-प्रकरण ऋग्वेदादि-भाष्यभूमिका)।

(च) आत्मा मनुष्य शरीर में अद्भुत कार्य कर सकती है। संसार में
५ (ईश्वर से लेकर पृथिवी पर्यन्त) सभी पदार्थों के स्वरूप और गुणों को जानकर मनुष्य अत्यन्त दूर के पदार्थों के दर्शन श्रवण आदि की शक्ति प्राप्त कर सकता है। जिसे प्राप्त करने में प्राय: असमर्थ रहता है।

आप किसी भी विषय पर लेख लिख सकती हैं। परन्तु पहले मेरे ग्रन्थों का अवलोकन करलें और उनके प्रकाश में सावधानी से लिखें। विपरीत
१० लेखों या आपकी अपने मस्तिष्क की उपज के लिये आलोचना होने पर आप ही उत्तरदायी होंगी।

आपका—

ह: —

पुनश्च—

१५ कल मुझे कर्नल आल्काट के ९ जुलाई के लिफाफे में पीटर डैविडसन स्काटलैण्ड (१३ जून १८७९) के पत्र मिले।

आपके कथनानुसार मैं पीटर डैविडसन को अंग्रेजी में पत्र लिख दूंगा। शेष का उत्तर हिन्दी में दिया जायगा।

इन मामलों में आपके सुझावों के अनुसार कार्य करूंगा। वेदभाष्य के
२० अंग्रेजी में अनुवाद करने और आपकी पत्रिका में उसे प्रकाशित करने के आपके प्रश्न के विषय में मेरा मत है कि—

१—एक भाषा से दूसरी भाषा में ठीक-ठीक अनुवाद करना अति कठिन कार्य है और यदि सम्भव भी हो तो अनुवादक को दोनों भाषाओं पर समान अधिकार होना चाहिये। मेरा भाषानुवाद साधारण भाषा सा नहीं
२५ है। संस्कृत के शब्दों का भाषा में शब्दश: अनुवाद किया जाता है। मेरे वेद-भाष्य का अनुवाद करने के लिए अंग्रेजी और संस्कृत दोनों में निपुण व्यक्ति की आवश्यकता है, यद्यपि वह भी सर्वथा ठीक नहीं कर सकता।

२ इस प्रकार अंग्रेजी में किये गये अनुवाद के सारांश को जब तक मैं स्वयं न सुन लूं तब तक मैं उसकी यथार्थता से सन्तुष्ट नहीं हो सकता
३० और इस के लिये मेरे पास इतना समय नहीं है।

यदि आप अनुवादक को मेरे साथ रहने का प्रबन्ध कर सकें तो

सम्भव है कि अवकाश के समय वह उसे मुझे पढ़ कर सुना दे और जहां आवश्यक हो शुद्ध करा ले। और जहां वह समझ न सके वहां मुझ से अर्थ पूछ सकता है।

३—कल्पना कीजिए कि यह सब प्रबन्ध सफलता पूर्वक कर भी दिये जायं, तो भी सब से बड़ी बाधा यह है कि भारत की आर्य जनता (अंग्रेजी के विद्यार्थी) मेरे वेदभाष्य के अंग्रेजी अनुवाद प्रकाशित होने पर संस्कृत और हिन्दी का अध्ययन त्याग देगी। मेरे वेदभाष्य को समझने के लिये संस्कृत और हिन्दी का अध्ययन, जिस को वे कर रहे हैं, और जो मेरा मुख्य उद्देश्य है, नष्ट हो जायगा। अतः वस्तुतः अंग्रेजी अनुवाद प्रधानतया केवल यूरोपियन विद्वानों के लिये ही लाभप्रद हो सकता है।

४—इस से वेदभाष्य के हिन्दी संस्करण के ग्राहकों की संख्या में कमी हो जायगी और उस के प्रकाशन में बड़ी हानि होगी और सम्भवतः इस का यह परिणाम हो कि हिन्दी अनुवाद सर्वथा बन्द हो जाय। वह निधि जहां से आप लेना चाहते हैं; समाप्त हो जायगी और अन्तिम परिणाम हिन्दी और संस्कृत दोनों संस्करणों का पूर्ण विनाश होगा और इङ्गलिश संस्करण ही अभीष्ट बन जायगा। मेरा विचार आप को अनुवाद करने से रोकने का नहीं है, क्योंकि बिना अंग्रेजी अनुवाद के यूरोपियन जातियां सत्य प्रकाश को नहीं पा सकतीं, किन्तु पहले उपर्युक्त बातों पर ध्यान दीजिए।

सबसे पहले चारों वेदों का शीघ्रता से अनुवाद हो जाना चाहिये। मेरा अनुमान है कि सारे वेदों का इसी वेग से भाष्य करने में मुझे १० वर्ष लगेंगे। उन्हें समाप्त कर लेना सबसे आवश्यक कार्य है।

आपका

कृपया सभी बातों का उत्तर देवें।

—:o:—

[पूर्ण संख्या ३३२]　　　पत्रांश[1]

अमरीका वालों से हमारा नमस्ते कह देना।

वेदभाष्य के अंग्रेजी करने के विषय में अमरीका वालों के पत्र

---

१. पं० लेखरामकृत उर्दू जीवनचरित पृ० ८३७ (हिन्दी सं० पृष्ठ ८७२) पर उद्धृत। [सम्भवतः मुंशी समर्थदान को लिखा गया।]

का उत्तर हमने भेज दिया है।'[1] इस का उत्तर अभी तक हमारे पास नहीं पहुंचा। उनके पास जाओ तो प्रसंग से कह देना कि अब तक हमारा शरीर अच्छा नहीं था। इस लिये विलायत की चिट्ठियों का उत्तर नहीं भेजा है। अब कुछ शरीर अच्छा है। अब ५ भेजेंगे। वहां मुम्बई में इस समय हम नहीं जा सकते, किन्तु पटना से दानापुर को जावेंगे।

३१ जुलाई ७८[2]
मुरादाबाद
आज मुरादाबाद से बदायूं जाते हैं।

—:०:—

१० **[पूर्ण संख्या ३३३] पत्र-सूचना**

[पीटर डैविडसन, स्काटलैंड][3]

—:०:—

[पूर्ण संख्या ३३४] पत्रांश[4]

[मैनेजर प्रेस के नाम··· ··]

··· ·····

१५ हम मुरादाबाद से चलकर बदायूं ठहरे हैं। यहां से भाद्रपद कृष्ण १२ गुरुवार १४ अगस्त ७९ को बरेली पहुंचेंगे। अब तक हमारा शरीर काम के योग्य ठीक-ठीक नहीं हुआ है।

दयानन्द सरस्वती
बदायूं

—:०:—

२० **[पूर्ण संख्या ३३५] पत्र-सारांश**[5]

[केशवलाल निर्भयराम, सूरत]

---

१. देखो, इससे पहला पूर्णसंख्या ३३१ का अंग्रेजी पत्र।

२. श्रावण शुक्ल १३, गुरुवार, सं० १९३६।

३. इन को अंग्रेजी में पत्र लिखने का निर्देश पूर्णसंख्या ३३१ (पृष्ठ २५ ३६७, ३७०) में है।

४. पं० लेखरामकृत उर्दू जीवनचरित पृ० ४४० (हिन्दी सं० पृष्ठ ४७८) से उद्धृत। मैनेजर अर्थात् मुं० समर्थदान।

५. इस आशय के पत्र की सूचना केशवलाल निर्भयराम के १६ मार्च

संस्कारविधि का हिसाब ठीक नहीं है।

—:०:—

[पूर्ण संख्या ३३६] पत्रांश[1]

....

हमारा शरीर बहुत दिनों से बीमार है। अति दुर्बल हो गया है। सो तुम जा कर अमरीका वालों से कहना कि और कुछ न समझें। हमारा शरीर दो दिन से कुछ अच्छा है। जो ऐसा ही रहेगा तो हम उन के पत्रों का उत्तर शीघ्र भेजेंगे। और अपने जन्म से लेकर दिनचर्या अभी कुछ संक्षेप से देवनागरी और अंग्रेजी में करवा कर हम उन के पास भेजदेंगे। और विलायत के पत्रों का उत्तर भी शीघ्र भेजेंगे। अमरीका वाले लोग समाचार पत्र छापेंगे, सो उनको भूमिका आदि से बातें समझा देना।

२१ अगस्त ७९[2] दयानन्द सरस्वती
बरेली

—:०:—

[पूर्ण संख्या ३३७] पत्र

[मैनेजर वेदभाष्य के नाम][3]

... ...

करनैल साहब ने हमको लिखा था कि आप अपना जन्मचरित्र लिख दीजिये[4], प्रथम तो हमारा शरीर अच्छा नहीं रहा इस कारण

१८८० के पत्र में है (द्र० भाग ३)। वहां इसे ८ मास पूर्व का कहा है। अगले ५ अप्रैल के पत्र में १० मास पीछे पत्र आना लिखा है (द्र० भाग ३)। अत: सम्भव है यह पत्र अगस्त १८७९ में लिखा गया होगा।

१. पं० लेखरामकृत उर्दू जीवन चरित पृ० ८३७ (हिन्दी सं० पृष्ठ ८७२) पर उद्धृत [मुंशी समर्थदान को]।

२. भाद्र शुक्ल ४, बृहस्पतिवार, सं० १९३६।

३. पं० लेखराम कृत उर्दू जीवनचरित पृ० ४४१ (हिन्दी सं० पृष्ठ ४७९) से उद्धृत। मैनेजर अर्थात् प्रबन्धकर्ता मुंशी समर्थदान।

४. जन्मचरित्र लिखकर भेजने का निर्देश कर्नल आलकाट ने किस पत्र में किया था, यह अज्ञात है। इस से पूर्व के १३ जुलाई १८७९ के पूर्ण संख्या ३३० (पृष्ठ ३६४, ३६५) के पत्र में भी अपना संक्षिप्त वृत्तान्त लिखकर

से नहीं भेज सके। अब दो चार दिन से कुछ अच्छा है सो आज तुम्हारे इस पत्र के साथ जन्मचरित्र लिख कर भेजते हैं[1]। सो तुम जिस समय पहुंचे उस समय उनके पास पहुंचना। क्योंकि उनका समाचार में छापने का समय आ गया है। अलकाट साहब को यह
५ बात भी हमारी ओर से सुना देना कि हमारा यह अभिप्राय नहीं कि इस समाचार का नाम केवल आर्य्यप्रकाश वा थ्योसोफिस्ट हो, किन्तु दोनों को मिला कर रक्खा जावे। और यह भी कह देना कि आपने जो चिट्ठी के साथ दो पत्र विलायत के भेजे[2] सो पहुंच गये। हमारा शरीर दस्तों की बीमारी से बहुत दुर्बल हो गया था।
१० अब आनन्द है।

२७ अगस्त सन् १८७९[3]

दयानन्द सरस्वती
बरेली

—:o:—

[पूर्ण संख्या ३३८] **पारसल-सूचना**[4]

जन्मचरित भेजना।

—:o:—

१५ [पूर्ण संख्या ३३९] **पत्र**

My Dear friend,[5]

My friend M. Indermuni requires the address of M,

भेजने का उल्लेख किया है (द्र० पृष्ठ ३६४,३६५)। सम्भव है कर्नल आल्काट ने १० जून अथवा ५ जुलाई के किसी पत्र में भी जीवन वृत्तान्त लिखने को लिखा हो। ऋ० द० ने अपने १३ जुलाई के पत्र में इन दोनों
२० पत्रों की प्राप्ति का निर्देश किया है (द्र० पृ० ३६४)।

१. इस जन्मचरित्र का प्रारम्भिक भाग ऋ०द० ने ३ बार करके थोड़ा-थोड़ा लिखकर भेजा था। उसी का अंग्रेजी अनुवाद कर्नल आल्काट ने थियोसोफिस्ट के अक्टूबर १८७९ दिसम्बर १८७९ तथा नवम्बर १८८० के
२५ अङ्कों में छपा था।

२. ये दो पत्र कौन से थे, हमें ज्ञात नहीं है।

३. भाद्र शुक्ल ११, बुधवार, सं० १९३६।

४. इसकी सूचना पूर्णसंख्या ३३७ में पृष्ठ ३७३ पर है।

५. पं० रामाधार वाजपेयी को।

Hurprasad, the copy-navis. I hope you will send it to him as soon as possible.[1]

yours ever
Swamee Dayanand Sarasswati.

[भाषानुवाद]　　५

मेरे प्रिय मित्र !

मेरे मित्र मुन्शी राम इन्द्रमणि, म० हरप्रसाद कापी-नवीस का पता चाहते हैं। मैं आशा करता हूं कि आप उन्हें यथासम्भव यह शीघ्र भेज देंगे।

आप का　　१०
स्वामी दयानन्द सरस्वती

—:०:—

[पूर्ण संख्या ३४०]　　पत्र

रामाधार वाजपेई जी आनन्दित रहो ![1]

मुंशी जी ने जो पत्र तुम्हारे पास भेजा उनका उत्तर क्यों नहीं दिया, जो-जो पूछे वा मंगवावे उसी समय उत्तर भेज दिया करो। १५ यहां व्याख्यान खूब हो रहे हैं। पादरी स्काट साहब से तीन दिन[2] भर बहस हुई उनकी विरुद्ध बातें सब कट गईं सो जब छपेगा[3] तब

---

१. ये दोनों लेख एक ही पत्र पर हैं।

२. यह प्रसिद्ध शास्त्रार्थ २५,२६,२७ अगस्त १८७९ (भाद्र शु० ८,१०, ११ सोम मंगल बुध सं० १९३६) को बरेली में हुआ। ९ तिथि लुप्त है।　२०

३. यह पुस्तक प्रथम बार आश्विन सं० १९३६ में छपा था। इस की सूचना ऋग्वेद तथा यजुर्वेद भाष्य के ११ वें अङ्क पर इस प्रकार दी थी—

"सत्यासत्य विवेक"

इस पुस्तक में सविस्तर वृत्तान्त तीनों दिन के शास्त्रार्थ कि जो स्वामी दयानन्द सरस्वती जी और पादरी टी० जी० स्काट साहब का राजकीय २५ पुस्तकालय बरेली में, इस प्रकार की प्रथम दिन अनेक जन्म के विषय में, दूसरे दिन अवतार अर्थात् ईश्वर देह धारण कर सकता है इस विषय में और तीसरे इस विषय में कि ईश्वर पाप क्षमा कर सकता है, हुआ था। बहुत उत्तम फारसी लिपि और उर्दू भाषा में मुद्रित हुवा है। इस शास्त्रार्थ में प्रत्येक विषय पर उत्तम प्रकार से खण्डन मण्डन हुआ है कि जिसके देखने ३० से सत्यप्रेमी जनों को सत्य और असत्य प्रगट होता है। जो विद्यार्थी मिशन

तुम्हारे पास भी भेजा जायगा । और यहां से चार पांच दिन के पीछे शाहजहांपुर आकर वहां कुछ ठहर कर तुमको लिखेंगे। जैसा मकान हमारे रहने के लिये किया है, वैसा ही व्याख्यान के लिये भी एक मकान शहर में कर रक्खो, क्योंकि हमारा ठहरना अब
५ थोड़ा-थोड़ा ही होगा ।

ता० २९ अगस्त ।[1] [दयानन्द सरस्वती]

—:०:—

[पूर्ण संख्या ३४१] विज्ञापन[2]

(१) विदित हो कि पण्डित स्वामी दयानन्द सरस्वती जी महाराज इस स्थान पर कल ४ सितम्बर सन् १८७९ को दोपहर के
१० समय पधारे हैं और बंगला खजांची साहब (जो मैजिस्ट्रेट साहब की कोठी के पीछे है) ये उतरे हैं। जिन सज्जनों को दर्शन की अभिलाषा हो और वार्त्तालाप करना चाहें—वह उक्त बंगले में पधारें।

(२) स्वामी जी के संकेत पर मिस्टर विलियम साहब बहादुर-
१५ हेड-मास्टर की आज्ञानुसार सर्वसाधारण जनता को सूचना के लिए प्रकाशित किया जाता है कि गवर्नमेंट हाईस्कूल अर्थात् सरकारी पाठशाला में जो जेलखाने के समीप है—निम्नलिखित तिथियों में स्वामीजी का व्याख्यान होगा—शनिवार-६ सितम्बर; रविवार-७ सितम्बर; मंगलवार-९ सितम्बर; बृहस्पतिवार-११ सितम्बर;
२० शनिवार-१३ सितम्बर; और रविवार-१४ सितम्बर; व्याख्यान

स्कूलों में पढ़ते हैं और बहुत करके गुमराह होते हैं, उनको यह पुस्तक गुमराही से बचाता है। डाक महसूल सहित ।)॥ मूल्य भेज कर मंगवा लें ॥"

यह शास्त्रार्थ नागरी भाषा में 'रामलाल कपूर ट्रस्ट' द्वारा प्रकाशित 'दयानन्द शास्त्रार्थ-संग्रह' में पृष्ठ १२९ से १७१ तक छपा है।

२५ १. सन् १८७९ (भाद्र शुक्ल १३ शु० सं० १९३६) बरेली से लिखा गया। मूल पत्र आर्यसमाज लखनऊ के संग्रह में सुरक्षित है।

२. यद्यपि यह विज्ञापन आर्य समाज शाहजहांपुर की ओर से श्री बख्तावरसिंह के हस्ताक्षरों से छपा है तथापि संख्या २ सन्दर्भ (पैराग्राफ) में **'स्वामी जी के संकेत पर'** शब्दों का उल्लेख होने से हम इसे यहां छाप
३० रहे हैं। यह विज्ञापन पं० लेखराम कृत जी० च० हिन्दी सं० पृष्ठ ५०३ पर छपा है।

प्रतिदिन ठीक ५ बजे से ७ बजे सायं तक हुआ करेगा।

(३) व्याख्यान के समय किसी सज्जन को इस बात की आज्ञा न होगी कि वह किसी प्रकार का प्रश्न कर सके या व्याख्यान में हस्ताक्षेप कर सके।

(४) हां, किसी सज्जन को कोई बात पूछनी हो तो बंगले पर जिन में स्वामी जी उतरे हुए हैं—पधार कर पूछ लें। ५

(५) यदि किसी हिन्दु, मुसलमान, ईसाई या और किसी का विचार शास्त्रार्थ का हो तो उचित है कि कृपा करके अपने वास्तविक अभिप्राय से इस समाज को सूचित करें ताकि उसका पर्याप्त प्रवन्ध कर लिया जावे परन्तु यह ध्यान रहे कि शास्त्रार्थ लिखित होगा; मौखिक कदापि नहीं हो सकता। शास्त्रार्थ के शेष नियम सूचना देने के समय दोनों पक्षों की सम्मति से निश्चित कर लिए जावेंगे। १०

(६) चूंकि बहुत से लोग स्वामी जी के चले जाने के पश्चात् इस प्रकार की बातें किया करते हैं कि स्वामी जी चले गये अन्यथा हम शास्त्रार्थ करते। इस लिए ऐसी वातों का ध्यान रखते हुए यह भी प्रकाशित किया जाता है कि जो सज्जन शास्त्रार्थ करना चाहें—आज से लेकर १४ सितम्बर तक अर्थात् इन्हीं दस दिनों के बीच में अपने हस्ताक्षर युक्त लिखित निश्चय से इस समाज को सूचित कर अनुगृहीत करें। आगे इच्छा है। इति। १५ २०

प्रकाशक—बख्तावरसिंह

—:o:—

[पूर्ण संख्या ३४२] पत्र

ओ३म् नमः सर्वशक्तिमते परमेश्वराय[1]

श्रीयुताङ्गदशास्त्र्यादिपण्डितान् प्रतीदमाज्ञापनम्।[2]

---

१. मासिकपत्र आर्यदर्पण, शाहजहांपुर, सितम्बर १८७९, पृ० १४-१६, २६१-२६२ पर उद्धृत। पं० लेखरामकृत उर्दू जीवनचरित पृ० ४६९-४७१ (हिन्दी सं० ५०८-५१०) पर आर्यदर्पण से ही उद्धृत किया गया है। परन्तु कई पाठ अशुद्ध हैं। हमारा पाठ आर्यदर्पण के अनुकूल है। ऋ० द० ने अङ्गद शास्त्री के जिस पत्र के उत्तर में यह पत्र लिखाया था, उसे हम तीसरे भाग में छाप रहे हैं। २५ ३०

२. पं० लेखरामकृत जीवनचरित में यह पंक्ति लुप्त है।

क्या आप लोग मूर्तिपूजा आदि वेदविरुद्ध काम करने से वेद विमुख होकर वेदप्रतिपादित एक अद्वितीय ईश्वरपूजा और सद्धर्मादि से उलटा चल और चला कर अपना मतलब (प्रयोजन) सिद्ध नहीं करते हैं ?

५ और क्या मैं कोई धर्म अर्थ काम मोक्ष सम्बन्धी कर्म वेदविरुद्ध कभी करता और कराता हूं ?

जो आप को शास्त्रार्थ करने की सच्ची इच्छा होती तो सभ्यता वा नियमपूर्वक शास्त्रार्थ करने का निषेध मैंने कब किया था और अब भी नहीं करता।

१० परन्तु जो शास्त्रार्थ की आप की सच्ची इच्छा होती तो जहाँ मैं ठहरा था उसी स्थान में आकर ठहरते।

अन्य स्थान में ठहरने से विदित होता है कि आप की इच्छा शास्त्रार्थ करने की नहीं है। किन्तु कहने ही मात्र है और अब आगे जैसी होगी वैसी विदित भी हो जायेगी।

१५ हां जहां मूर्ख और असभ्य पुरुषों का हल्ला-गुल्ला होता है, वहां मैं खड़ा भी नहीं होता। तुम ने जो यह लिखा कि मैं 'जहां जहां जाता हूं वहां वहां से तुम किनारा काट कर चले जाते हो,' यह बात तुम्हारी अत्यन्त झूठ है।

तुम से मुझ को किञ्चिन्मात्र भी भय न कभी हुआ था, न है
२० और न होगा। क्योंकि आप में ऐसे गुण ही नहीं हैं, जो भयप्रद हों।

बांसबरेली में भी तुम्हारी उलटी कारवाई अर्थात् दंगा बखेड़ा करने वाले मनुष्यों के संग लाने के कारण खजानची लक्ष्मी-नारायण आदि ने अपने बंगला में तुमको आने से रोक दिया था।
२५ यह तुम को तुम्हारे ही कर्म्मों का फल है। सिवाय बरेली और शाहजहांपुर के मैंने कभी आप का आना सुना भी नहीं। अब आप और मैं दोनों शाहजहांपुर में हैं, जो इस समागम से भागे सो झूठा। अब आप को जितना शास्त्रार्थ करने का बल हो कर लीजिये। परन्तु विदित रखना चाहिये सब आप्तों की यही रीति है कि जो
३० सर्वदा सत्य को जताना है और झूठ को हराना है। इस को मत भूलियेगा। मैं अपनी विद्या और बुद्धि के अनुसार निश्चित जानता हूं कि मैं और पुरुषों को जहां तक शक्य है, वेदोक्त सनातन धर्म में

चलता और चलाता हूं। इस में जो तुम को वेदविरुद्धपने का भ्रम हुआ, सो जो शास्त्रार्थ होगा। तो तुम वेदविरुद्ध चलते हो या मैं, निश्चय हो जायगा। हां मथुरा में श्री स्वामीजी के पास बहुत विद्यार्थी जाते थे, आप भी कभी गये होंगे, परन्तु जो आप स्वामी जी के शिष्य होते तो उन के उपदेश से विरुद्ध आचरण क्यों करते ५ और ज्येष्ठ कनिष्ठ उत्तम गुण कर्म्म और नीच गुण कर्मों से ही होते हैं। इस शास्त्रार्थ में निम्नलिखित नियम उभयपक्ष वालों को मानने होंगे।

१. इस शास्त्रार्थ में चारों वेद मध्यस्थ हैं अर्थात् वेदविरुद्ध झूठा और वेदानुकूल सच्चा माना जायगा। १०

२. इस शास्त्रार्थ में जो वेद के किसी मन्त्रपद के अर्थ करने में विप्रतिपत्ति[1] हो तो जिस के अर्थ पर ब्रह्मा जी से लेकर जैमिनि मुनि पर्यन्त उक्त सनातन मान्य ग्रन्थों का प्रमाण साक्षी में मिलेंगे, उन का अर्थ सत्य माना जायगा, दूसरे का नहीं। और वेदानुकूलता, सृष्टि-क्रमानुसार,[2] प्रत्यक्षादि प्रमाण लक्षण-लक्षित, १५ आप्तानुचरण अविरुद्ध और अपने आत्मा की विद्या और पवित्रता इन पांच कसौटियों से परीक्षा में जो जो सच्चा वा झूठा ठहरेगा सो सो वैसा ही माना जायगा, अन्यथा नहीं।

३. एक एक की ओर से सभ्य धार्मिक विद्वान् चतुर पचास पचास पुरुष शास्त्रार्थ में सभासद होना चाहियें। २०

४. उभय पक्ष के १०० मनुष्य को प्रथम से सभा में प्रवेश करने के लिये टिकट मिल जायेंगे। वे ही सभा में आ सकेंगे, अन्य नहीं।

५. जो जिस का पक्ष होगा वही अपने सप्रमाण पक्ष को लिखा कर सुना समझा या दूसरे से सुना कर समझाया करेगा।

६. उभय पक्ष वालों को अपने अपने समय में एक एक अक्षर २५ प्रश्न या उत्तर लिखवा कर आगे चलना होगा, अन्यथा नहीं।

७. इस शास्त्रार्थ में उभय पक्ष वाले जो जो कहेंगे, उस उस को तीन लेखक लिखते जावेंगे। अपने अपने पक्ष के लेख लिखवा कर अन्त में तीनों पर स्वहस्ताक्षर कराके एक प्रति मुझ को दूसरी आप और तीसरी सरकार में रहेगी कि जिस से कोई घटा बढ़ा न ३०

---

१. आर्यदर्पण—विप्रतिक्त। जीवनचरि—विप्रतिपक्ष।

२. पूर्व मुद्रित—'श्रेष्ठ कर्मानुसार' अपपाठ।

सके।

८. अपने पत्र में जो आपने दस दस मिनट लिखे सो स्वीकार करता हूं, परन्तु उत्तर देने के लिये दस मिनट और प्रश्न करने के लिये दो मिनट होना योग्य है।

५ ९. शास्त्रार्थ विषय में मुझ और आप को ही बोलने लिखवाने सुनवाने का अधिकार होगा, अन्य को नहीं। अन्य सभासद तो ध्यान देकर सुनते रहेंगे।

१०. जहां खजानची जी के बङ्गला में मैं ठहरा हूं, यह ही शास्त्रार्थ के लिये निश्चित रहना चाहिये। क्योंकि यह न मेरा १० स्थान है न आप का।

११. इस शास्त्रार्थ में वेद आदि सनातन शास्त्रों की रीति से पाषाणादि मूर्तिपूजा और पुराणादि पक्षों का खण्डन विषय मेरा और आपका मण्डन विषय रहेगा।

१२. कुवचन, हठ, दुराग्रह, क्रोध, पक्षपात, भय, शङ्का, लज्जा १५ आदि को छोड़ कर सत्य का ग्रहण और असत्य का परित्याग उभयपक्ष वालों को अवश्य होना चाहिये। क्योंकि आप्तों का यह ही सिद्धान्त है।

१३. जब तक किसी विषय का खण्डन या मण्डन पूरा [न] हो तब तक शास्त्रार्थ बन्द न होगा। किन्तु प्रतिदिन होता ही जायेगा। क्योंकि आरब्ध कर्म्मों को बीच में निष्फल न छोड़ कर २० सिद्धान्त पर्यन्त पहुंचा देना विद्वानों का मुख्य सिद्धान्त है और इसी रीति से बहुत दिनों वा महीनों तक शास्त्रार्थ होने से आप के शास्त्रार्थ करने की उत्सुकता भी परिपूर्ण होगी, अन्यथा नहीं।

१४. उभयपक्ष वालों को सरकार से पोलीस आदि का प्रबन्ध २५ अवश्य करना होगा कि जिस से कोई असभ्य मनुष्य शास्त्रार्थ में विघ्न न कर सके।

१५. इस शास्त्रार्थ का समय जिस दिन से आरम्भ होगा उस दिन से सन्ध्या के ५ बजे से ८ बजे तक प्रतिदिन होना चाहिये।

१६. एक दिन पहले मैं बोलूंगा, तो दूसरे दिन आप बोलेंगे ३० और जो पहले बोलेगा वही उस दिन अन्त में भी बोलेगा। और सब सुनने वाले वा जब छप कर सब सज्जन लोग बाचेंगे तब अपनी अपनी विद्या और बुद्धि के अनुसार सच्चा वा झूठा को जान

कर झूठ को छोड़कर सत्य का ग्रहण कर लेंगे। आप की चिट्ठी कल दोपहर समय आई।[1] इससे आज उत्तर लिखा गया। जो प्रातः-काल आती तो कल ही लिख दिया होता। आप के पत्र में संस्कृत और भाषा में अनेक प्रकार से बहुत अशुद्ध है।[2] सो जब मिलोगे तब समझा दिया जायगा। ५

आश्विन कृष्ण ११ शुक्रवार[3] १९३६।[4] दयानन्द सरस्वती

—:o:—

[पूर्ण संख्या ३४३] पत्र

ओम् नमः सर्वशक्तिमते जगदीश्वराय[5]

श्रीयुताङ्गदशास्त्र्यादिपण्डितान्प्रतीदम्प्रख्यापनम्।

संवत् १९३६ आश्विन कृष्ण १२, शनिवार का लिखा तुम्हारा १० पत्र[6] आश्विन कृष्ण १३ रविवार को दिन के ११½ बजे मेरे पास पहुंचा। तत्रस्थ लेखाभिप्राय सब प्रकट हुआ। मुझ को अति निश्चय है कि तुम लोग शास्त्रों का विचार करना कराना तो तब जानोगे कि जब तुम्हारे अनेक जन्मों के पुण्य उदित होंगे, परन्तु जो तुम्हारे निश्चय किये स्थानों में बातचीत करने को आऊं तो १५

---

१. पं० अङ्गदशास्त्री ने यह चिट्ठी १० सितम्बर १८७९ को लिखी थी। दूसरे दिन दोपहर को स्वामी जी को यह चिट्ठी मिली।

२. पं० लेखरामकृत जीवन चरित में अङ्गद शास्त्री के पत्र को उसमें विद्यमान अशुद्धियों का निर्देश-पुरस्सर छापा है। द्र०—हिन्दी सं० पृष्ठ ५०४-५०७। अङ्गद शास्त्री का यह पत्र तीसरे भाग में देखें। २०

३. आर्यदर्पण में शुक्रवार छपा है। प्रतीत होता है कि उर्दू के लेखक ने शुम्वार लिखा है। जीवनचरित में सोमवार छपा है। चाहिये वस्तुतः शुक्रवार।

४. १२ सितम्बर १८७९। ऋ० द० के इस पत्र के उत्तर में अङ्गद शास्त्री ने जो पत्र लिखा था, उसे तीसरे भाग में देखें। २५

५. पं० लेखरामकृत उर्दू जीवनचरित पृ० ४७७ (हिन्दी सं० पृष्ठ ५१५) पर उद्धृत। यह पत्रव्यवहार शाहजहांपुर में हुआ। अङ्गद शास्त्री के पत्र भी जीवनरित में छपे हैं। आर्यदर्पण पृ० २७२, २७३ सितम्बर १८७९।

६. अङ्गद शास्त्री का यह पत्र तीसरे भाग में देखें। ३०

तुमको हल्ला गुल्ला करने को अवसर अच्छा मिल जावे। अब जो तुमको पूर्वोक्त ५० धार्मिक बुद्धिमान् रईसों से साथ यहां आकर कुछ कहना सुनना हो तो मैं आने से रोकता नहीं। आगे तुम्हारी प्रसन्नता।

५ सं० १९३६ आश्विन कृष्ण १३, रविवार।[1] दयानन्द सरस्वती

—:o:—

[पूर्ण संख्या ३४४] पत्र-सूचना[2]

बाबू माधोलाल आनन्दित रहो।

....

शाहजहांपुर दयानन्द सरस्वती

—:o:—

१० [पूर्ण संख्या ३४५] विज्ञापन

विज्ञापनपत्रमिदम्[3]

सब को विदित हो कि ठाकुर मुकुन्दसिंह भूपालसिंह और मुन्ना सिंह जी के नाम का ६ अङ्क में विज्ञापन दिया गया था[4] और मुन्ना सिंह जी ने परोपकार बुद्धि से ग्राहकों से उधार का रुपया लेने का १५ काम स्वीकार किया था, परन्तु उक्त ठाकुर को किसी विशेष कार्य के होने से ग्राहकों से रुपया जमा करने की फुरसत नहीं है। इस लिये सब स्थानों के ग्राहकों से तकाजा करके रुपया लेने का अधिकार मुन्शी समर्थदान, प्रबन्धकर्त्ता "वेदभाष्यकार्यालय" मुम्बई को दिया गया है। और इनके तकाजा करने पर भी ग्राहक लोग

---

२० १. १४ सितम्बर १८७९। इस पत्र के उत्तर में अङ्गद शास्त्री ने आश्विन कृष्ण १३ रविवार सं० १९३६ का जो पत्र लिखा था, उसे तीसरे भाग में देखें।

२. इस पत्र की सूचना बाबू माधोलाल के अज्ञात तिथि के पत्र से मिलती है। उसी में इस पत्र के शाहजहांपुर से लिखने का संकेत भी है। २५ माधोलाल का पत्र तीसरे भाग में देखें।

३. यह विज्ञापन ऋग्वेद और यजुर्वेद भाष्य के नवम तथा दशम अङ्क पर छपा था। श्रावण का अङ्क देर से प्रकाशित हुआ था। विज्ञापन सम्भवत: प्रथम आश्विन १९३६ में लिखा गया होगा।

४. यह विज्ञापन पूर्ण संख्या ३२३ पृष्ठ ३५८-३५९ पर छपा है।

रुपया देने में हीला हवाला करेंगे तो उससे रुपया, समर्थदान के विदित करने से राजकीय नियमानुसार ठाकुर मुन्नासिंह ही लेंगे। अब पीछे सब ग्राहक मुम्बई में रुपया भेजा करें वहां से सब के पास बराबर रसीद पहुंचेगी। हम ग्राहकों को सुगमता होने के लिये यह नियम भी लिखते हैं कि जिस-जिस स्थान के लोगों के ५ नाम हम नीचे लिखते हैं उस-उस स्थान के ग्राहक उसके पास रुपया जमा करा देंगे तो वे लोग सबके नाम पृथक्-पृथक् रसीद मुम्बई से मंगवा दिया करेंगे॥

मुनशी इन्द्रमणीजी प्रधान आर्य्यसमाज मुरादाबाद।
मुन्शी बखतावरसिंह मन्त्री आर्य्यसमाज शाहजहांपुर। १०
लाला रामशरणदास रईस उपप्रधान आर्य्यसमाज मेरठ।
लाला सांईदास मन्त्री आर्य्यसमाज लाहौर।
लाला बल्लभदास जी खजानची आर्य्यसमाज गुरदासपुर।

चौधरी लक्ष्मणदास सभासद आर्य्यसमाज अमृतसर बाजार माई सेवा। १५

बाबू रामधार वाजपेई तार आफिस रेलवे लखनऊ।

पं० सुन्दरलाल रामनारायण पोस्ट मास्टर जनरेल्स आफिस इलाहाबाद।

बाबू माधोलाल मन्त्री आर्य्यसमाज दानापुर बंगाल।

मुन्शी समर्थदान और मुन्शी इन्द्रमणी जी के पास हमारे बनाए २० सब पुस्तक रहते हैं जिसको इच्छा हो मंगवा ले॥

हस्ताक्षर दयानन्द सरस्वती

—:०:—

[पूर्ण संख्या ३४६] पत्रांश[1]

अमरीका वालों के पास हम एक पत्र भेजेंगे तो उस में सब बातें लिखेंगे। आबू में कोई विष खाता था, यह बात हमने सुनी हुई २५ कही थी। ठीक नहीं समझते। इस लिये जन्मचरित्र में नहीं लिखी

---

१. पं० लेखरामकृत उर्दू जीवनचरित पृ० ८३७ (हिन्दी सं० पृष्ठ ८७२) पर उद्धृत [सम्भवत: मुन्शी समर्थदान को लिखा गया]।

और एक साधु समुद्र पर चलता था, ऐसी असंभव बातें मैंने कदापि न लिखी होंगी।[1]

१७ सितम्बर ७९[2] दयानन्द सरस्वती
शाहजहांपुर

—:o:—

५ [पूर्ण संख्या ३४७] पत्रांश

[मैनेजर वेदभाष्य के नाम][3]

कुंवर मुन्नासिंह छलेसर वाले का अब चंदा वसूल करने का कुछ भरोसा नहीं। इस लिये तुमको चाहिये कि यहां तक बने चंदा वसूल करो। आठ दिन पीछे लखनऊ जावेंगे। अब हमारा शरीर १० कुछ अच्छा है।

१७[4] सितम्बर ७९[5] दयानन्द सरस्वती
शाहजहांपुर

—:o—

[पूर्ण संख्या ३४८] पत्रांश[6]

....

१५ १. सम्भवत: मुन्शी समर्थदान ने किसी पत्र में इन बातों के विषय में पूछा होगा। यह पत्र अप्राप्त है।

२. प्रथम आश्विन शुक्ल १, बुधवार, सं० १९३६। इसी पृष्ठ की टि० ४ भी देखें।

३. पं० लेखरामकृत उर्दू जीवनचरित पृ० ४७९ (हिन्दी सं० पृष्ठ २० ५१८) से उद्धृत।

४. पं० लेखराम जी कृत जीवनचरित में १७ सितम्बर ही छपा है। इस पत्र में ८ दिन पीछे लखनऊ जाने का उल्लेख है, परन्तु अगले पूर्ण संख्या ३४८ के पत्र में १८ सितम्बर को ही लखनऊ पहुंचने का निर्देश है। अत: सम्भव है जीवनचरित्र में छपने की असावधानता से पूर्णसंख्या ३४६, २५ ३४७ दोनों में ७ सितम्बर का १७ बन गया होगा। ७ सितम्बर १८७९ को प्रथम आश्विन कृष्ण ६ रविवार १९३६ था।

५. प्रथम आश्विन शुक्ल १, बुधवार, सं० १९३६।

६. पं० लेखरामकृत उर्दू जीवनचरित पृ० ४८० (हिन्दी सं० पृष्ठ

हम १८ सितम्बर[1] सन् [१८] ७९ को सायंकाल को शाहजहांपुर से लखनऊ आये और ता० २४ सितम्बर[2] सन् [१८]७९ बुधवार के दिन प्रातःकाल कानपुर को जायेंगे और वहां से उसी दिन फर्रुखाबाद को जावेंगे और वहां एक सप्ताह या दस दिन ठहर कर फिर कानपुर आवेंगे और फिर यहां दो चार दिन-ठहर कर प्रयाग मिर्जापुर काशी होते हुए कार्तिक पूर्णमासी तक दानापुर पहुंचेंगे और अब हमारा शरीर पहले से अच्छा है। 　५

२१ सितम्बर १८७९,[3]　　　दयानन्द सरस्वती
लखनऊ

—:०:—

[पूर्ण संख्या ३४९]　　विज्ञापन[4]　　१०

जो आप लोगों को शास्त्रप्रमाण सहित उत्तर अपेक्षित था, तो

---

५१८) से उद्धृत। यह पत्र दानापुर के बाबू माधोलाल को लिखा गया होगा। मूल पत्र प० लेखरामजी के संग्रह के साथ नष्ट हो गया प्रतीत होता है।

१. प्रथम आश्विन शुक्ल २, बृहस्पतिवार, सं० १९३६। 　१५

२. प्रथम आश्विन शुक्ल ९, बुधवार, सं० १९३६।

३. प्रथम आश्विन शुक्ल ६, रवि, सं० १९३६।

४. यह विज्ञापन 'धर्मसभा फर्रुखाबाद के ६ अक्टूबर १८७९ के विज्ञापन और प्रश्नों के उत्तर में दिया गया था। उस में २५ प्रश्न किये गये थे और उनका उत्तर मांगा गया था। ७ अक्टूबर को ऋषि दयानन्द 　२० से उन प्रश्नों के उत्तर लिखवा लिये और ८ ता० को स्वामी जी के चले जाने के पश्चात् शुद्ध करके १२ अक्टूबर १८७९ को आर्यसमाज में सुनाकर धर्मसभा के पास भेज दिये गये।

यह विज्ञापन और प्रश्नों के उत्तर पं० लेखरामकृत जी० च० हिन्दी सं० पृष्ठ ५२१-५२७ तक, फर्रुखाबाद के इतिहास में पृष्ठ १२६-१३४ तक 　२५ और पं० देवेन्द्रनाथ सं० जी० च० में पृष्ठ ५७२-५७८ तक छपे हैं। पं० देवेन्द्रनाथ सं०जी०च० में फर्रुखाबाद के इतिहास से लेकर छापे गये हैं।

इतने पण्डितों में से कोई एक भी तो कुछ पण्डिताई दिखलाता ? आपके तो प्रश्न सबके सब अण्डबण्ड शास्त्रविरुद्ध यहां तक कि भाषारीति से भी शुद्ध नहीं। ऐसों का उत्तर प्रमाण सहित मांगना, मानों गाजरों की तुला देकर तुरन्त विमान की मार्ग परीक्षा ५ करना है। शास्त्रोक्त उत्तर शास्त्रज्ञों को ही मिलते हैं क्योंकि वे ही इन वचनों को समझ सकते हैं। तुम्हारे सामने शास्त्रोक्त वचन लिखना ऐसा है जैसा कि गंवार मनुष्य के आगे रत्नों की थैलियां खोल देना। वास्तव में तुम्हारा एक भी प्रश्न उत्तर देने के योग्य न था तथापि हमने "तुष्यतु दुर्जनः" इस न्याय से सबका उत्तर १० शास्त्रोक्त प्रमाण सहित दिया है। समझा जाये तो समझ लो।

प्रश्नों के उत्तर

पहला प्रश्न—आप्त ग्रन्थों अर्थात् वेदादिक सत्य शास्त्रों के अनुसार परिव्राजकों अर्थात् संन्यासियों के धर्म क्या हैं। वेदों के अनुसार उनको यानों अर्थात् सवारियों पर चढ़ना और धूम्र अर्थात् १५ हुक्का आदि पीना योग्य है या नहीं ?

उत्तर वेदादि शास्त्रों में विद्वान् होकर वेद और वेदानुकूल सत्य शास्त्रोक्त रीति से पक्षपात, शोक, वैर, अविद्या, हठ, दुराग्रह, स्वार्थसाधन, निन्दास्तुति, मान, अपमान, क्रोधादि दोषों से रहित हो स्वपरीक्षापूर्वक सत्यासत्य निश्चय करके सर्वत्र-भ्रमणपूर्वक २० सर्वथा सत्यग्रहण, असत्य-परित्याग से सब मनुष्यों को शारीरिक,

---

पं० लेखरामकृत जीवनचरित में छपे उत्तरों में और फर्रुखाबाद के इतिहास में छपे उत्तरों में कुछ भेद है। विशेष भेद सं० ९ के उत्तर में है। पं० लेखराम सगृहीत उत्तर निश्चय ही प्रामाणिक हैं क्योंकि उनका संग्रह सब से पुराना है। प्रतीत होता है पं० लेखराम जी को कोई पुरानी कापी इन २५ उत्तरों की प्राप्त हुई होगी। फर्रुखाबाद के इतिहास से स्पष्ट है कि उसने जो उत्तर छपवाये हैं वे पीछे से संशोधित किये गये थे। पं० लेखराम के पाठ में कहीं-कहीं कुछ लेखक प्रमाद जन्य साधारण दोष हैं। परन्तु हमारी दृष्टि में पं० लेखराम का पाठ ही प्रामाणिक है। नवें प्रश्न का जो उत्तर फर्रुखाबाद के इतिहास में छपा है, वैसा उत्तर ऋषि दयानन्द का नहीं हो ३० सकता।

आत्मिक और सामाजिक उन्नति, आसन के साधन, सत्यविद्या, सनातन धर्म, स्वपुरुषार्थयुक्त करके व्यावहारिक और पारमार्थिक सुखों से **वर्त्तमान (युक्त) करके,** दुष्टाचरणों से पृथक् कर देना—**संन्यासियों का धर्म है।** लाभ में हर्ष, अलाभ में शोकादि से रहित होकर विमानों में बैठना और रोगादि निवारणार्थ औषधिवत् धूम्र अर्थात् हुक्का पीकर परोपकार करने में तत्पर, **तिन्ही को कुछ भी दोष नहीं।** यह सब शास्त्रों में विधान है परन्तु तुमको—वर्तमान वेदादि सत्य शास्त्रों से विमुखता होने के कारण—भ्रम है; सो इन सत्य ग्रन्थों से विमुखता न चाहिये। ५

दूसरा प्रश्न—यदि आपके मत में पापों की क्षमा नहीं होती तो मन्वादिक आप्त ग्रन्थों में प्रायश्चित्त का क्या फल है? वेदादि ग्रन्थों में परमेश्वर की क्षमाशीलता और दयालुता का वर्णन है इससे क्या प्रयोजन है? यदि उससे आगन्तुक पापों की क्षमा से प्रयोजन है तो क्षमा न हुई और जब मनुष्य स्वतन्त्र है और आगन्तुक पापों से बचा रहे तो उसमें परमेश्वर की क्षमाशीलता क्या काम आ सकती है? १० १५

उत्तर—हमारा, अपितु हम लोगों का, वेद-प्रतिपादित मत के अतिरिक्त और कोई कपोल-कल्पित मत नहीं है। किये हुए पापों की क्षमा वेदों में कहीं नहीं लिखी; न कोई युक्ति से भी विद्वानों के सामने किये पापों की क्षमा सिद्ध कर सकता है। शोक है उन मनुष्यों पर कि जो प्रश्न करना नहीं जानते और करने को उद्यत हो जाते हैं। क्या प्रायश्चित्त तुम ने सुखभोग का नाम समझा है? जैसे जेलखाने में चोरी आदि पापों के फल का भोग होता है वैसे ही प्रायश्चित्त भी समझो। इसमें क्षमा का कोई कथन तक नहीं। क्या प्रायश्चित्त वहां पापों के दुःखरूप फल का भोग है? कदापि नहीं। परमेश्वर की क्षमा और दयालुता का यह प्रयोजन है कि बहुत से मूढ़ मनुष्य नास्तिकता से परमात्मा का अपमान और खंडन करते और पुत्रादि के न होने या अकाल में मरने, अतिवृष्टि, रोग और दरिद्रता के होने पर ईश्वर को गाली प्रदान आदि भी करते हैं; तथा परब्रह्म सहन करता और कृपालुता से रहित नहीं होता। यह भी उसके दयालु स्वभाव का फल है। क्या कोई २० २५ ३०

न्यायाधीश कृतपापों की क्षमा करने से अन्यायकारी और पापों के आचरण का बढ़ाने वाला सिद्ध नहीं होगा ? क्या परमेश्वर कभी अपने न्यायकारी स्वभाव से विरुद्ध अन्याय कर सकता है ? हां, जैसे न्यायाधीश विद्या और सुशिक्षा करके पापियों को पाप से ५ पृथक् करके राजदण्ड-प्रतिष्ठित आदि करके उनको पवित्र कर सुखी कर देता है, वैसे परमात्मा को भी जानो।

तीसरा प्रश्न--यदि आपके मत से तत्त्वादिकों के परमाणु नित्य हैं और कारण का गुण कार्य्य में रहता है तो परमाणु जो सूक्ष्म और नित्य हैं उनसे स्थूल और सान्त संसार कैसे उत्पन्न हो १० सकता है ?

उत्तर--सूक्ष्मता की जो परम सीमा--अर्थात् जिसके आगे, सूक्ष्म से और अधिक सूक्ष्मता कभी नहीं हो सकती--वह परमाणु कहलाता है। जिसके प्रकृत, अव्याकृत, अव्यक्त कारण आदि नाम भी कहलाते हैं ! वह अनादि होने से सत् हैं। हाय खेद है लोगों १५ की उल्टी समझ पर ! कारण के जो गुण उसमें समवाय सम्बन्ध से हैं, वे कारण में नित्य हैं। कारण के जो गुण कारणावस्था में नित्य हैं वे कार्य्यावस्था में भी नित्य हैं। क्या जो गुण कारणावस्था में नित्य हैं वह कार्य्यावस्था में भी वर्तमान होकर जब कारणा-वस्था होती है तब भी कारण के गुण नित्य नहीं होते ? और जब २० परमाणु मिलकर स्थूल होते हैं या पृथक्-पृथक् होकर कारणरूप होते हैं तब भी उनके विभाग और संयोग होने का सामर्थ्य, नित्य होने से, अनित्य नहीं होता। वैसे ही गुरुत्व, लघुत्व होने का सामर्थ्य भी उनमें नित्य है क्योंकि यह गुण गुणी में समवाय सम्बन्ध से है।

२५ **चौथा प्रश्न**--मनुष्य और ईश्वर में परस्पर क्या सम्बन्ध है ? विद्याज्ञान से मनुष्य ईश्वर हो सकता है या नहीं ? जीवात्मा और परमात्मा में (परस्पर) क्या सम्बन्ध है और जीवात्मा और परमात्मा दोनों नित्य हैं और जो दोनों चेतन हैं तो जीवात्मा के आधीन है या नहीं ? यदि है तो क्यों है ?

३० **उत्तर**-मनुष्य और ईश्वर का--राजा-प्रजा, स्वामी-सेवकादि-

सम्बन्ध है। अल्पज्ञान होने से जीव ईश्वर कभी नहीं हो सकता। जीव और परमात्मा में व्याप्यव्यापकादि सम्बन्ध है। **जीवात्मा परमात्मा के आधीन सदा रहता है परन्तु कर्म करने में नहीं।** किन्तु पाप कर्मों के फल-भोग में वह ईश्वर की व्यवस्था के आधीन रहता है तथापि दुःख भोगने में स्वतन्त्र नहीं है। चूंकि परमेश्वर अनन्त-सामर्थ्य युक्त है और जीव अल्प सामर्थ्य वाला है; अतः उसका परमेश्वर के आधीन होना आवश्यक है।

पांचवां प्रश्न—आप संसार की रचना और प्रलय को मानते हैं या नहीं? और जब प्रथम सृष्टि हुई तो आदि सृष्टि में एक या बहुत उत्पन्न हुए? जब कि उनमें कर्म आदिक की कोई विशेषता नहीं थी तब परमेश्वर ने कुछ मनुष्यों को ही वेदोपदेश क्यों किया? ऐसा करने से परमेश्वर पर पक्षपात का दोष आता है।

उत्तर—संसार की रचना और प्रलय को हम मानते हैं। सृष्टि प्रवाह से अनादि है, सादि नहीं; क्योंकि ईश्वर के गुण, कर्म, स्वभाव अनादि और सत्य हैं। जो ऐसा नहीं मानते उनसे पूछना चाहिये कि क्या प्रथम ईश्वर निकम्मा था और उसके गुण, कर्म, स्वभाव निकम्मे थे? जैसे परमेश्वर अनादि है, वैसे ही जगत् का कारण, जीव भी, अनादि है; क्योंकि किसी वस्तु के बिना उससे कुछ कार्य्य होना संभव नहीं। जैसे इस कल्प की सृष्टि के आदि में बहुत से स्त्री-पुरुष उत्पन्न हुए थे वैसे ही पूर्व कल्प की सृष्टि में भी बहुत से स्त्री-पुरुष उत्पन्न हुए थे और आगे की कल्पान्त सृष्टियों में भी उत्पन्न होंगे। जीव के कर्म आदि भी अनादि हैं। चार मनुष्यों की आत्मा में वेदोपदेश करने का यह हेतु है कि उनके सदृश या अधिक पुण्यात्मा जीव कोई भी नहीं था। इससे परमेश्वर में **पक्षपात कुछ नहीं आ सकता।**

छठा प्रश्न—आप के मतानुसार न्यूनाधिक कर्मानुसार फल होता है तो मनुष्य स्वतन्त्र कैसे हैं? परमेश्वर सर्वज्ञ है तो उसको भूत, भविष्यत्, वर्तमान का ज्ञान है अर्थात् उसको यह ज्ञान है कि कोई पुरुष किस समय में कोई कर्म करेगा और परमेश्वर का यह ज्ञान असत्य नहीं होता क्योंकि वह सत्यज्ञान वाला है अर्थात् वह

पुरुष वैसा ही कर्म करेगा जैसा कि परमेश्वर का ज्ञान है तो कर्म इसके लिये नियत हो चुका; तो फिर जीव स्वतन्त्र कैसे है ?

उत्तर कर्म के फल न्यूनाधिक कभी नहीं होते क्योंकि **जिसने**
५ **जैसा और जितना कर्म किया हो उसको वैसा और उतना ही फल मिलना न्याय कहलाता है।** अधिक न्यून होने से ईश्वर में अन्याय आता है।

हे आर्यो ! क्या ईश्वर के ज्ञान में भूत भविष्यत् काल का सम्बन्ध भी कभी होता है ? क्या ईश्वर का ज्ञान होकर न हो और
१० न होकर होने वाला है ? जैसे ईश्वर को हमारे आगामी कर्म्मों के होने का ज्ञान है वैसे मनुष्य अपने स्वाभाविक गुण-कर्म-साधनों के नित्य होने में सदा स्वतन्त्र है परन्तु अनिच्छित दुःखरूप पापों का फल भोगने के लिये ईश्वर की व्यवस्था में परतन्त्र होते हैं जैसा कि राजा की व्यवस्था में चोर और डाकू पराधीन हो जाते हैं
१५ वैसे उन पापपुण्यात्मक कर्मों के दुःख-सुख होने का ज्ञान मनुष्य को प्रथम नहीं है। क्या परमेश्वर का ज्ञान हमारे किये हुए कर्म्मों से उलटा है। जैसे वह अपने ज्ञान में स्वतन्त्र है वैसे ही सब जीव अपने कर्म करने में स्वतन्त्र हैं।

सातवां प्रश्न—मोक्ष क्या पदार्थ है ?

२० **उत्तर** सब दुष्ट कर्मों से छुटकर सब शुभ कर्म्म करना **जीवन्मुक्ति** और सब दुःखों से छूट कर आनन्द से परमेश्वर में रहना— यह **मुक्ति** कहलाती है।

आठवां प्रश्न—धन बढ़ाना अथवा शिल्पविद्या व वैद्यकविद्या से ऐसा यन्त्र अर्थात् कला तथा औषधि निकालना जिससे मनुष्य
२५ को इन्द्रियजन्य सुख प्राप्त हो अथवा पापी मनुष्य जो रोगग्रस्त हो उसको औषधि आदि से नीरोग करना—धर्म है या अधर्म है ?

उत्तर—न्याय से धन बढ़ाने, शिल्पविद्या करने, परोपकार बुद्धि से यन्त्र वा औषधि सिद्ध करने से धर्म; और अन्याय करने

से **अधर्म**; होता है। न्याय से आत्मा, मन, इन्द्रिय शरीर का सुख प्राप्त हो तो **धर्म** और जो अन्याय से (आत्मा आदि को सुख प्राप्त) हो तो **अधर्म** होता है। जो पापी मनुष्य को अधर्म से छुड़ाने और धर्म में प्रवृत्त करने के लिये औषधि आदि से रोग छुड़ाने की इच्छा हो तो धर्म, इससे विपरीत करने से अधर्म होता है। ५

नवां प्रश्न तामस भोजन (मांस) खाने से पाप है या नहीं? यदि पाप है तो वेद और आप्त ग्रन्थों में हिंसा करना यज्ञ आदिकों में क्यों विहित है और भक्षणार्थ हत्या करना क्यों लिखा है?

उत्तर—मांस खाने में पाप है। वेदों तथा आप्त ग्रन्थों में कहीं भी यज्ञ आदि के लिये पशुहिंसा करना नहीं लिखा है। गो, अश्व १० अजमेध के अर्थ वामियों[1] ने बिगाड़ दिये हैं। उनके सच्चे अर्थ, हिंसा करना, कहीं भी नहीं लिखा। हां, जैसे डाकू आदि दुष्ट जीवों को राजा लोग मारते, उनका बन्धन और छेदन करते हैं; वैसे ही हानिकारक पशुओं को मारना लिखा है। परन्तु मार कर उनको खाना कहीं भी नहीं लिखा। आजकल तो वामियों ने झूठे १५ श्लोक बनाकर गोमांस खाना भी बतलाया है कि जैसे कि मनुस्मृति में इन धूर्तों का मिलाया हुआ लेख है कि गोमांस का पिंड देना चाहिये। क्या कोई पुरुष ऐसे भ्रष्ट वचन मान सकता है?

दसवां प्रश्न— जीव का क्या लक्षण है?

उत्तर—न्यायशास्त्र में जीव का लक्षण इच्छा, द्वेष, प्रयत्न, २० सुख, दुःख, ज्ञान, लिखा है।

ग्यारहवां प्रश्न—सूक्ष्म यन्त्रों से ज्ञात होता है कि जल में अनन्त जीव हैं; तो फिर जल पीना उचित है या नहीं?

उत्तर—क्या विद्याहीन लोग अपनी मूर्खता की प्रसिद्धि अपने वचनों से नहीं करा देते? न जाने यह भूल संसार में कब तक २५ रहेगी। जब पात्र और पात्रस्थ जल अन्त वाले हों तो उनमें अनन्त जीव कैसे समा सकेंगे और **छानकर या आंख से देखकर जल पीना**

---

१. अर्थात् वाममार्गियों ने।

सबको उचित है।

बारहवां प्रश्न—मनुष्य के लिये बहुत स्त्री करना कहां निषेध है ! यदि निषेध है तो धर्मशास्त्र में जो यह लिखा हुआ है कि यदि एक पुरुष के बहुत स्त्री हों और उनमें एक के पुत्र होने से सब ५ पुत्रवती हैं—यह क्यों लिखा ?

उत्तर—वेद में मनुष्य के लिये अनेक स्त्रियों के करने का (बहु विवाह का) निषेध लिखा है। संसार में प्रत्येक व्यक्ति अच्छा नहीं होता। जो अनेक अधर्मी पुरुष कामातुर होकर अपने विषय-सुख के लिये बहुत-सी स्त्री कर लेवें तो उनमें (परस्पर) सपत्नी-१० भाव (सौतन के भाव) से विरोध अवश्य होता है। जब किसी एक स्त्री के पुत्र हुआ तो कोई विरोध से विष आदि के प्रयोग से न मार डाले इसलिये यह लिखा है।

तेरहवां—आप ज्योतिष शास्त्र के फलित ग्रन्थों को मानते हैं या नहीं ! और भृगुसंहिता आप्त ग्रन्थ है या नहीं ?

१५ **उत्तर**—हम ज्योतिष शास्त्र के गणित भाग को मानते हैं; फलित भाग को नहीं; क्योंकि ज्योतिष के जितने सिद्धान्त-ग्रन्थ हैं—उनमें, फलित का लेश भी नहीं है। भृगुसिद्धान्त—जिसमें केवल गणित विद्या है—उसको हम आप्त-ग्रन्थ मानते हैं; इतर को नहीं। ज्योतिष शास्त्र में भूत, भविष्यत् काल का सुख-दुःख विदित २० होना अनाप्तोक्त ग्रथों के अतिरिक्त अर्थात् अप्रमाणित व्यक्तियों की लिखी हुई पुस्तकों के अतिरिक्त कहीं नहीं लिखा।

चौदहवां प्रश्न—ज्योतिष शास्त्र में आप किस ग्रन्थ को आप्त-ग्रन्थ समझते हैं ?

उत्तर—ज्योतिष शास्त्र में जो **जो वेदानुकूल ग्रन्थ हैं—उन** २५ **सबको हम आप्त ग्रन्थ जानते हैं**—अन्य को नहीं।

पन्द्रहवां प्रश्न—आप पृथिवी पर सुख, दुःख, विद्या, धर्म और मनुष्य संख्या की न्यूनता-अधिकता मानते हैं या नहीं ? यदि मानते हैं तो आगे इनकी वृद्धि थी या अब है या होगी ?

उत्तर—हम पृथिवी में सुखादि की वृद्धि आदि की व्यवस्था

को सापेक्ष होने से, **अनियत मानते हैं**; मध्यावस्था में समान जानो।

सोलहवां प्रश्न—धर्म का क्या लक्षण है और धर्म सनातन है या परमेश्वरकृत अथवा मनुष्यकृत ?

उत्तर—जो पक्षपातरहित न्याय कि जिसमें सत्य का ग्रहण और असत्य का परित्याग हो—**वह धर्म का लक्षण कहलाता है**; सो वह सनातन और ईश्वरोक्त और वेदप्रतिपादित है; **मनुष्य-कल्पित कोई धर्म नहीं।**

सत्रहवां प्रश्न—यदि कोई मतानुयायी आपके अनुसार मुहम्मदी या ईसाई है और आपके मत में दृढ़ विश्वासी हो जाये तो क्या आपके मतानुयायी उसको ग्रहण कर सकते हैं या नहीं और उसका पाक किया हुआ (पकाया) भोजन आप और आपके मतानुयायी कर सकते हैं या नहीं ?

उत्तर—वेदों के अतिरिक्त हमारा कोई कपोलकल्पित मत नहीं है। फिर हमारे मत के अनुसार कोई कैसे चल सकता है ? क्या तुमने अन्धेरे में गिरकर खाना-पीना, मलमूत्र करना, जूती-धोती-अङ्गरखा धारण करना, सोना, उठना, बैठना, चलना धर्म मान रखा है ? हाय खेद है कि इन कुमति पुरुषों पर ! कि जिनकी बाहर और भीतर की दृष्टि पर पर्दा पड़ा हुआ है जो कि जूता पहनना या न पहनना धर्म मानते हैं। **सुनो; और आंख खोल कर देखो; कि यह सब अपने-अपने देशव्यवहार हैं।**

अठारवां प्रश्न—आपके मत से ज्ञान के बिना मुक्ति होती है या नहीं ? यदि कोई पुरुष आपके मतानुसार धर्म पर आरूढ़ हो और अज्ञानी अर्थात् ज्ञानहीन हो, उसको मुक्ति हो सकती है या नहीं ?

उत्तर—परमेश्वर सम्बन्धी ज्ञान के विना मुक्ति किसी की न होगी। सुनो भाइयो ! जो धर्म पर आरूढ़ होगा उसको क्या ज्ञान का अभाव कभी हो सकता है ? वा ज्ञान के विना क्या कोई मनुष्य धर्म में दृढ़ आस्था रख सकता है ?

उन्नीसवां प्रश्न—श्राद्ध आदिक अर्थात् पिण्डदान आदि—जिसमें पितृतृप्ति के अर्थ ब्राह्मण-भोजनादि कराते हैं शास्त्ररीति है या अशास्त्ररीति ? यह यदि अशास्त्ररीति है तो पितृकर्म का क्या अर्थ

है और मनुस्मृति आदि ग्रन्थों में इनका लेख है या नहीं ?

उत्तर—जीते पितरों की श्रद्धा से सेवा, पुरुषार्थ व पदार्थों से तृप्ति करना **श्राद्ध और तर्पण कहलाता है।** यह तर्पण वेदादि-शास्त्रोक्त है। भोजनभट्ट अर्थात् स्वार्थियों का लड्डू आदि से पेट ५ भरना श्राद्ध और तर्पण शास्त्रोक्त तो नहीं किन्तु पापों का अनर्थ-कारक आडम्बर है। जो-जो मनु आदिक ग्रन्थों में लेख है सो वेदा-नुकूल होने से माननीय है; अन्य कोई नहीं।

बीसवां प्रश्न—कोई मनुष्य यह समझ कर कि मैं पापों से मुक्त नहीं हो सकता—आत्मघात करे तो उसको कोई पाप है या नहीं ?

१० **उत्तर—आत्मघात करने से पाप ही होता है; और** भोगे बिना पापाचरण के फल के पापों से मुक्त कोई भी नहीं हो सकता।

इक्कीसवां प्रश्न—जीवात्मा संख्यात हैं या असंख्यात ? कर्म्म से मनुष्य पशु अथवा वृक्ष आदि योनियों में उत्पन्न हो सकता है या नहीं ?

१५ **उत्तर**—ईश्वर के ज्ञान में जीव **संख्यात** और जीव के अल्पज्ञान में **असंख्यात** हैं। पाप अधिक करने से जीव, पशु, वृक्ष आदि योनियों में उत्पन्न होता है।

बाईसवां प्रश्न—विवाह करना अनुचित है या नहीं ? और सन्तान करने से किसी पुरुष पर पाप होता है या नहीं ? और २० होता है तो क्या ?

उत्तर—जो पूर्ण विद्वान् और जितेन्द्रिय होकर सर्वोपकार किया चाहे उस पुरुष वा स्त्री को **विवाह करना योग्य नहीं, अन्य सबको उचित है।** वेदोक्त रीति से विवाह करके ऋतुगामी होकर सन्तानो-त्पत्ति करने में कुछ दोष नहीं। व्यभिचार से सन्तान उत्पन्न करने २५ में दोष है, क्योंकि अन्यायाचरणों में दोष हुए विना कभी नहीं रह सकता है।

तेईसवां प्रश्न—अपने सगोत्र में (विवाह) सम्बन्ध करना दूषित है या नहीं, यदि है तो क्यों है ? सृष्टि के आदि में ऐसा हुआ था या नहीं ?

३० **उत्तर**—अपने सगोत्र में विवाह करने से दोष यों है कि इससे शरीर आत्मा, प्रेम, बल आदि की उन्नति यथावत् नहीं होती; इसी-लिये **भिन्न-भिन्न गोत्रों में ही विवाह-सम्बन्ध करना उचित है।**

सृष्टि के आदि में गोत्र ही नहीं थे फिर वृथा क्यों परिश्रम किया। हां, पोपलीला में दक्ष प्रजापति वा कश्यप की एक ही सन्तान मानने से पशुव्यवहार सिद्ध होता है। इसको जो माने मानता रहे।

चौबीसवां प्रश्न—गायत्री-जाप से कोई फल है या नहीं, और है तो क्यों है ?

उत्तर—गायत्री जाप यदि वेदोक्त रीति से करे तो फल अच्छा होता है क्योंकि इसमें गायत्री के अर्थानुसार आचरण करना लिखा है। पोपलीला के जप [से] अनर्थरूप फल होने की तो कथा ही क्या है ? **कोई अच्छा व बुरा किया हुआ कर्म्म निष्फल नहीं होता है।**

पच्चीसवां प्रश्न—धर्म-अधर्म मनुष्य के अन्तरीय भाव से होता है या कर्म के परिणाम से ? यदि कोई मनुष्य किसी डूबते हुए मनुष्य को बचाने को नदी में कूद पड़े और वह आप डूब जाये तो उसे आत्मघात का पाप होगा या पुण्य ?

उत्तर—मनुष्यों के **धर्म** और **अधर्म** भीतर और बाहर की सत्ता से होते हैं कि जिनका नाम **कर्म** और **कुकर्म** भी है। जो किसी को बचाने के लिये परिश्रम करेगा और फिर उपकार करते हुए जिसका शरीर वियुक्त ही हो जाये, तो उसको पाप नहीं पुण्य ही होगा।

—:o:—

[पूर्ण संख्या ३५०]　　　　पत्र

Lucknow
the 21-9-79

My dear Pandit Soonder Lall
Ramnarain Jee

Please send the all other Books to Moonshi Indermani Deendar Pora, Moradabad but keep one Book Mahabharat with you (मुंशी इन्द्रमणि जी मुरादाबाद मुहल्ला दीनदारपुरा)

I arrived here on the 18th instant and will leave for Furruckabad thro: Cownpore on the 24th by morning train and most probably will reach Furruckabad on the morning of 25th. I think I shall stop there for a week or ten days after which I shall go back to Cownpore and thence start for Allahabad of which I shall give you notice in due time.

You must in the mean time make arrangement for a House i. e. for my residence.

Yours sincerely
दयानन्द सरस्वती
(Signed) Swami Dayanand
Saraswati

५

[भाषानुवाद]

लखनऊ २१-९-१८७९

प्रिय पं० सुन्दरलाल[1] रामनारायणजी,

१० कृपया अन्य समस्त पुस्तकें मुन्शी इन्द्रमणि, दीनदारपुरा मुरादाबाद को भेज दें किन्तु एक पुस्तक—महाभारत अपने पास ही रखें। (मुन्शी इन्द्रमणिजी मुरादाबाद मुहल्ला दीनदारपुरा)—

मैं इसी माह की १८ को यहां आ गया हूं तथा कानपुर होता हुआ फर्रुखाबाद दिनांक २४ को सुबह की ट्रेन से रवाना होऊंगा तथा सम्भव-
१५ तया फर्रुखाबाद २५ की प्रातः पहुंच जाऊंगा। मेरा वहां एक सप्ताह या १० दिन ठहरने का विचार है। तत्पश्चात् मैं वापस कानपुर जाकर इलाहाबाद के लिये रवाना होऊंगा। इसकी सूचना मैं आपको यथासमय दे दूंगा।

इस बीच में आप मेरे निवास के लिये एक मकान का इन्तजाम कर
२० दें।

आपका
(दयानन्दसरस्वती)
स्वामी दयानन्दसरस्वती

—:o:—

[पूर्ण संख्या ३५१] पत्रांश[2]

२५ ....

छापाखाना के वास्ते एक हजार फरुखाबाद से हुआ है। अब

---

१. यह पण्डित सुन्दरलाल को भेजे गये पत्र की प्रतिलिपि है, जो परोपकारिणी सभा के संग्रह में विद्यमान है।

२. पं० लेखरामकृत उर्दू जीवनचरित पृ० ४९२ (हिन्दी सं० पृष्ठ
३० ५३०) पर उद्धृत। यह पत्र सम्भवतः मुन्शी समर्थदान को लिखा गया है। अगला पत्रांश भी इसी में सम्मिलित रहा होगा।

अपना छापाखाना स्वतन्त्र कराया जावेगा। तुम भी मुम्बई में इसके वास्ते चन्दा करो। हमारा विचार मार्गशीर्ष तक अपना छापाखाना कर लेने का है।

दयानन्द सरस्वती

कानपुर ११ अक्टूबर १८७९, आश्विन [२] वदी ११ शनि०। ५

[आश्विन द्वितीय शुक्ल १ बृहस्पतिवार][1] अर्थात् १६ अक्टूबर को यहां से प्रयाग को जावेंगे!

—:०:—

[पूर्ण संख्या ३५२]   पत्रांश[2]

....

और कर्नल अलकाट साहब के पत्र आये। उसका उत्तर पीछे १० से तुम को नागरी में भेजेंगे। उनकी नकल अंग्रेजी में करके दे देना, तो हम सीधा भेज दिया करें।

११ अक्तूबर ७९[3]   दयानन्द सरस्वती
कानपुर

—:०:—

[पूर्ण संख्या ३५३]   पत्र   १५

आर्य्यसमाज के मन्त्री बाबू माधोलाल आनन्दित रहो![4]

तुम्हारी कई चिट्ठियां आईं। हम सफर में रहे, इस लिये चिट्ठी का जवाब नहीं भेज सके। विज्ञापन तुमने छपवा लेने। नमूना भेजते हैं और हम १६ अक्तूबर को प्रयाग जायेंगे तब तुमको और चिट्ठी भेजेंगे। अब हम बनारस नहीं जावेंगे। **मिरजापुर से दाना-** २०

---

१. सम्भवत: कोष्ठान्तर्गत पाठ पं० लेखरामजीकृत जीवनचरित में लेखकप्रमाद से छूट गया होगा।

२. पं० लेखरामकृत उर्दू जीवनचरित पृ० ८३७ (हिन्दी सं० पृष्ठ ८७२) पर उद्धृत।

३. आश्विन (२) वदी ११, शनिवार, सं० १९३६।   २५

४. जो पत्र हमें दानापुर से प्राप्त हुए हैं, उनमें यह पत्र नहीं है, परन्तु पण्डित लेखरामजी रचित बृहद् उर्दू जीवनचरित के पृ० ४९६ (हिन्दी सं० पृष्ठ ५३३) पर यह मिलता है। हमने वहां से लेकर इसे शब्दश: देवनागरी लिपि में कर दिया है।

पुर सीधे चले जावेंगे, रास्ते में कहीं न ठहरेंगे। हमारे पास कोई आदमी आप भेजें। जब हम दूसरी चिट्ठी लिखें तब मिरजापुर में भेजना। मुरादाबाद से विज्ञापन बाबत[1] नवीन पुस्तक छपवाने[2] के आप के पास गया होगा, उसके मुताबिक चन्दा करने का बन्दोबस्त
५ कर रहे होंगे। फर्रुखाबाद से एक हजार रुपया हो गये होंगे। यह चन्दा हम को बनारस में मार्गशीर्ष में जाना होगा सो समझ लेना। हम को दानापुर से लौट कर आरा अथवा जहां कहीं ठहरना होगा वहां ठहरेंगे। मार्गशीर्ष तक बनारस लौट कर आ जावेंगे। और विज्ञापन में स्थान की जगह छोड़ दी है, सो तुम जो जगह निश्चित
१० हो, लिख कर छपवा देना और तारीख की जगह छोड़ देना। जब हम आयेंगे लिखवायेंगे। हमारे रहने का मकान शहर से एक मील अलग रहे, इससे दूर न हो। व्याख्यान का मकान शहर में हो। और रहने के मकान की आबोहवा अच्छी देख लेनी। और हरिहर क्षेत्र के मेला में जायेंगे। वहां का भी बन्दोबस्त, मकान,
१५ डेरा, तम्बू वगैरा का कर लेना, अब हम चिट्ठी मिरजापुर से लिखेंगे। और अगले महीना में **बनारस में आकर छापाखाना अपना बनवाने की तजवीज करेंगे।** सो चन्दा अपने हां जल्दी करना और अब **बनारस में छः महीने रहने का बन्दोबस्त हुआ है,** जिस में वेदभाष्य और बाकी पुस्तक जल्दी छप कर तय्यार
२० हो जावेंगे, ऐसा विचार है।

मुकाम कानपुर, १२ अक्टूबर ७९ ई०।[3] दयानन्द सरस्वती

—:०:—

[पूर्ण संख्या ३५४] विज्ञापन-नमूना[4]

[दानापुर में पहुंचने और व्याख्यान देने सम्बन्धी विज्ञापन का नमूना]

—:०:—

२५ १. इस संबंध में द्वितीय भाग के द्वितीय परिशिष्ट की टिप्पणी देखें।

२. यहां 'नवीन पुस्तक छापाखाने के' पाठ चाहिये।

३. आश्विन (द्वितीय कृष्ण १२, रविवार सं० १९३६।

४. इस विज्ञापन-नमूने की सूचना पूर्ण संख्या ३५३ के पत्र में है। उसमें लिखा है—'विज्ञापन तुमने छपवा लेने, नमूना भेजते हैं।'

[पूर्ण संख्या ३५५]　　**विज्ञापनपत्रम्**[1]

ठाकुर मुकुन्दसिंह वा मुन्नासिंह आम मुकद्दमा के वास्ते मुख्तार हैं। परन्तु पुस्तकें बेचने और रुपया लेने के मुख्तार ये हैं मुन्शी समर्थदान मुम्बई वाले। मुन्शी इन्द्रमणी जी प्रधान आर्य्यसमाज मुरादाबाद। बख्तावरसिंह मन्त्री आर्य्यसमाज शाहजहांपुर। लाला　५
रामशरणदास उपप्रधान आर्य्यसमाज मेरठ। लाला सांईदास मन्त्री आर्य्यसमाज लाहौर। लाला बलदेवदास[2] वा डा० बिहारीलाल मन्त्री आर्यसमाज गुरुदासपुर। चौधरी लक्ष्मण-दास[3] सभासद आर्यसमाज अमृतसर। बाबू रामाधार वाज-पेई[4] तार आफिस रेलवे लखनऊ। पं० सुन्दरलाल रामनारायण　१०
पोस्ट मास्टर जनरल आफिस प्रयाग। बाबू माधोलाल मन्त्री आर्यसमाज दानापुर। इन सब को चन्दा वेदभाष्य के उगराहने का अधिकार है। और जिसके पास जितना चन्दा होवे, जैसराज गोटे-राम साहूकार फरुखाबाद के पास रुपया भेज कर रसीद मंगा लें। और मुं० समर्थदान मुम्बई वाले और मुं० इन्द्रमणि जी मुरादा-　१५
बादी के पास मेरे बनाए सब पुस्तक मिलेंगे।

१४ अक्तूबर १८७९।[5]　　　　दयानन्द सरस्वती
कानपुर

—:o:—

---

१. पं० लेखरामकृत उर्दू जीवनचरित पृ० ४९२ (हिन्दी सं० पृष्ठ ५३०) पर उद्धृत इसी आशय का एक विज्ञापन पूर्ण सं० ३४५ पृष्ठ ३८२ पर　२०
छपा है।

२. पूर्ण संख्या ३४५ में (पृष्ठ ३८२ पर) 'लाला वल्लभदास' नाम है।

३. ये ही चौधरी लक्ष्मणदास थे, जो पीछे लक्ष्मणानन्द स्वामी के नाम से प्रसिद्ध हुए। इन्होंने श्री स्वामी जी से योग की अनेक क्रियाएं सीखी थीं। इन्हीं का ग्रन्थ ध्यानयोगप्रकाश योगशिक्षा के लिए अपूर्व है। हमने　२५
(=भगवद्दत्त ने) उन्हीं की कृपा से सन् १९१२ में अमृतसर में जप की विधि सीखी और सत्यार्थप्रकाश के कई प्रकरण पढ़े। ऋषि दयानन्द सरस्वती का महत्त्व हमने (=भगवद्दत्त ने) इन्हीं से समझा था।

४ जीवनचरित में 'अर्जुन आधार' नाम छपा है, परन्तु शुद्ध नहीं। रामधार जी के नाम के अनेक पत्र इस संग्रह में छापे गए हैं। पूर्ण सं०　३०
३४५ में (पृष्ठ ३८२ पर) भी रामधार शुद्ध नाम ही है।

५. आश्विन (द्वितीय) कृष्ण १४, मंगलवार सं० १९३६।

[पूर्ण संख्या ३५६]　　　पत्र

पण्डित सुन्दरलाल[1] रामनारायणजी आनन्दित रहो।

विदित हो कि हम ता० १६ दुपहर को रेल पर सवार होकर प्रयाग पौहचैंगे सो आप स्थान का वदोवस्त् ठैरने का कर लेने तथा आगे हम लिख चुके है मकान हमारे ठैरने को शहर त० छावनी के बीच रेल के पास और व्याख्यान का शहर में होइ और नोटिस भी व्याख्यान का छपवाइ लेने तारीख की जग्घे छोड़ देने मकाकी निश्चै हो जाइ तौ छपवाइ देने नहीं तौ जग्घे छोड़ देने हमारे पौहचे पीछे लिखा जाइगा और हमको रोज ७ से जादे रहने का अवकाश नही है इतने अरसा में जो व्यख्यान हो जाइगे सो हो जाइगे सब सभासदन को नमस्ते॥ ता० १४ अक्तुबर शन १८७९ इ० मु० कानपुर ॥　　　　दयानन्दसरस्वती

—:o:—

[पूर्ण संख्या ३५७]　　　पत्र

बाबू माधोलालजी आनन्दित रहो![2]

विदित हो कि १९३६ द्वि० आश्विन सुदी ९ गुरुवार ता० १३ अक्टूबर को हम प्रयाग से मिरजापुर आकर सेठ रामरतन के बाग में ठहरे हैं अब तुम लोगों का क्या विचार है। हमारा शरीर बीमार है, परन्तु तुम्हारे यहां आने को लिख चुके हैं। आना तो होगा ही, व्याख्यान होना, न होना वहां आकर मालूम होगा। [व्याख्यान न होगा तो तुम लोगों से बातचीत तो अवश्य होगी][3]। और तुम लोगों ने लिखा था कि हमारे सभासद आप को लेने को

---

१. यह पण्डित सुन्दरलाल को भेजे गये पत्र की प्रतिलिपि है, जो परोपकारिणी सभा के संग्रह में विद्यमान है।

२. पं० लेखरामकृत उर्दू जीवनचरित पृ० ४९६,४९७(हिन्दी सं० पृष्ठ ५३४) पर उद्धृत। परन्तु हमने यह पत्र दानापुर समाज में सुरक्षित मूलपत्र से ही छापा है।

३. पं० लेखरामकृत जीवनचरित में [ ] कोष्ठगत लेख अधिक है। सम्भवत: पं० लेखरामजी ने यह पत्र वैदिक यन्त्रालय के संग्रह के पत्र से प्रतिलिपि किया हो और उस पत्र से प्रतिलिपि होकर दानापुर को जाने वाले पत्र में परिवर्तन कर दिया हो अथवा लिखने में छूट गया हो।

आवेंगे सो जो आने का विचार हो तो ६ छः दिन के बिच यहां मिरजापुर में पूर्वोक्त पते पर आ जावें। क्योंकि कार्तिक वदि प्रतिपदा ता० ३० अक्टूबर[1] को हम यहां से चल कर डुमरांव वा आरा अथवा पटना में पहुंचेंगे। इस में सन्देह नहीं।

सब से मेरा नमस्ते। ५

मिर्जापुर दयानन्द सरस्वती

—:o:—

[पूर्ण संख्या ३५८] पत्रांश

[मुंशी समर्थदान..........][2]

कर्नल अलकाट साहब को मेरे शरीर का हाल विदित नहीं है कि दस मास तक तो दस्तों का रोग रहा। पश्चात् एक बड़ा ज्वर १० आने लगा सो तीन वारी आकर छूट गया है। अब दोनों रोग नहीं हैं, परन्तु विचार करो कि इतने रोग के पश्चात् निर्बलता और सुस्ती कितनी हो सकती है। इसमें भी हमको कितने काम आवश्यक हैं जिन से दम भर अवकाश नहीं मिल सकता। जो एक जन्मचरित्र के लिखने लिखवाने का काम ही होता, तो एक बार १५ लिख लिखवा के भेज दिया होता।

६ नवम्बर ७९[3] दयानन्द सरस्वती

दानापुर

—:o:—

[पूर्ण संख्या ३५९] पत्रांश

[मैनेजर प्रेस के नाम][4] २०

---

१. २३ और २९ अक्टूबर १८७९ के मध्य की किसी तिथि को यह पत्र लिखा गया होगा। बा० देवेन्द्रनाथ संकलित जीवनचरित पृ० ५८२ पर इस पत्र को भेजने की तारीख २३ अक्टूबर लिखी है।

२. मैनेजर वेदभाष्य के नाम। पं० लेखरामकृत उर्दू जीवनचरित पृ० ८३७, ८३८ (हिन्दी सं० पृष्ठ ८७२, ८७३) पर उद्धृत। अगला पूर्ण २५ संख्या ३५९ का पत्र भी इसी पत्र का एक अंश प्रतीत होता है।

३. कार्तिक कृष्ण ७ बृहस्पतिवार सं० १९३६।

४. पं० लेखरामकृत उर्दू जीवनचरित पृ० ४९९ (हिन्दी सं० ५३६,

आजकल दानापुर में प्रतिदिन व्याख्यान होते हैं, आज पांचवा दिन है। यहां का समाज और समाज के पुरुष बहुत उत्तम हैं। समाज का प्रबन्ध भी उत्तम किया है। यहां से अमावस के पश्चात् हरिहरक्षेत्र के मेले में जाना होगा। वहां से कार्तिकी पूर्णमासी के ५ अनन्तर काशी में जाकर छापेखाने का प्रबन्ध किया जावेगा और वहां आधे चैत या अन्त चैत तक ठहरेंगे।

६ नवम्बर १८७९[1] दयानन्द सरस्वती
दानापुर

—:०:—

[पूर्ण संख्या ३६०] पत्रांश[2]

१० ………

शोक की बात है कि आर्यपुरुष ठाकुर मुन्नासिंह का शरीर छूट गया।

दयानन्द सरस्वती
२० नवम्बर १८७९[3] काशी

—:०:—

---

१५ ५३७) पर उद्धृत।

१. कार्तिक कृष्ण ७, बृहस्पतिवार, सं० १९३६।

२. यह पत्रांश पं० लेखरामकृत उर्दू जीवनचरित पृष्ठ ७६८ (हिन्दी सं० पृष्ठ ७९५) पर उद्धृत। [सम्भवत: मुंशी समर्थदान के नाम लिखा गया।]

२० ३. भ्रमोच्छेदन के प्रारम्भ में तथा आर्यदर्पण फरवरी १८८० पृ० ४२ पर स्वामीजी महाराज के काशी पहुंचने की तिथि कार्तिक सुदि १४ सं० १९३६ गुरुवार (२७ नवम्बर, सन् १८७९) लिखी है, वह अशुद्ध प्रतीत होती है। क्योंकि २० नवम्बर से २४ नवम्बर तक के काशी से लिखे गये तीन पत्र पूर्ण संख्या ३६०, ३६१, ३६२ पर छाप रहे हैं। पं० घासीराम २५ संपा जी० च० पृ० ५९२ में दानापुर से चलने की ता० १९ नवम्बर लिखी है। पं० लेखराम जी कृत उर्दू जीवनचरित पृ० ५०५ (हिन्दी सं० पृष्ठ ५४३) में लिखा है—"कार्तिक सुदि ७, गुरुवार, मुताबिक १९ नवम्बर को दानापुर से चलकर उसी रोज बनारस में सुशोभित हुए।" परन्तु पं० लेखराम जी कृत उर्दू जीवनचरित में ही पृष्ठ १५१ (हिन्दी सं० पृष्ठ १५८

[पूर्ण संख्या ३६१]   पत्र

बाबू माधोलाल जी आनन्दित रहो ![1]

हम वहां से चल के आनन्द पूर्वक काशी में पहुंच कर महाराजे विज[य] नगर के आनन्द बाग में ठहरे हैं यह बाग बहुत अच्छा है। हवा और जल यहां का बहुत अच्छा है। मकान भी इस बाग में बहुत और उत्तम हैं यह बात प्रसिद्ध है। इस में ठहरने के लिये लाजरस साहेब ने प्रबन्ध कर रक्खा था चिट्ठी पहुंचने पर। जैसा यह बाग है वैसा काशी में दूसरा नहीं है इसके आगे जो २ अवश्य लिखने योग्य समाचार हों वे २ लिखे जायेंगे आप लोग भी लिखते रहना। सब से हमारी नमस्ते कहना ॥

सं० १९३६ मि० का सुद० ८ शुक्रवार।[2]

दयानन्द सरस्वती
काशी ।

---:o:---

[पूर्ण संख्या ३६२]   पत्र

Benares
The 24th Nov. 1879[3]

Babu Ramadhar, Bajpaye,[4]

पर लिखा है 'मिर्जापुर और दानापुर का एक दौरा करके कार्तिक सुदि १४ गुरुवार मुताबिक २७ नवम्बर सन् १८७९ ईस्वी को काशी नगर में तशरीफ ····।'

यहां भी ध्यान रहे कि १९ नवम्बर को कार्तिक सुदि ७ मी और गुरुवार नहीं था, अपितु कार्तिक सुदि ६ बुधवार था। अत: यहां अंग्रेजी तारीख लिखने में अवश्य ही कुछ भूल हुई है। हमारा विचार है कि श्री० स्वामीजी २० नवम्बर(कार्तिक सुदि ७)गुरुवार के दिन ही काशी पहुँचे थे।

१. मूलपत्र आर्यसमाज दानापुर में सुरक्षित है। इसकी प्रतिकृति श्रीमद्दयानन्द चित्रावली (संस्क० ३) में छपी है।

२. २१ नवम्बर, शुक्रवार सन् १८७९।

३. कार्तिक सुदी ११, सोमवार, सं० १८७९।

४. मूलपत्र आर्यसमाज लखनऊ के संग्रह में सुरक्षित है।

May you prosper ! I returned from Danapore and have lodged now-a-days in the garden of his late Highness the Maharajah of Vizianagram, at Benares. I will write for the books about which you told me, to Bombay and Moradabad,
५ You will try your best to treat in a friendly manner the son of Munshi Indra-Man, named Narayan Das, who wishes to go to Lucknow from Moradabad in the search of a copy-writer on a printed lithographic paper. You will procure for him such a writer if you can find one—for such a writer is
१० urgently required.

दयानन्द सरस्वती
काशी ।।

[भाषानुवाद]

बनारस
१५ २४ नवं० १८७९[1]

बाबू रामधार बाजपेई आनन्द रहो!

मैं दानापुर से लौटा हूं और बनारस में स्वर्गवासी श्री महाराजे विजय-नगर के बाग में आजकल ठहरा हूं। जिन पुस्तकों के लिये आप ने मुझे कहा था, उन के लिये मैं मुम्बई और मुरादाबाद को लिखूंगा। मुन्शी इन्द्रमन
२० के पुत्र नारायणदास को मित्रवत् रखने में आप अपना पूर्ण यत्न करेंगे वह मुरादाबाद से छपे हुए लिथो कागज पर कापी लिखने वाले की खोज में लखनऊ जाना चाहता है। यदि ढूंढ सकें तो उसके लिये ऐसा लेखक निकालें, क्योंकि ऐसे लेखक की अत्यन्तावश्यकता है।

(दयानन्द सरस्वती)
२५ काशी ।।

—:०:—

[पूर्ण संख्या ३६३,३६४,३६५] विज्ञापनपत्र

।। ओ३म् । नमः सर्वशक्तिमते परमेश्वराय ।।

।। प्रथमं विज्ञापनपत्रमिदम् ।। (३३)

सर्वान् सज्जनान् प्रतीदं विज्ञाप्यते सम्प्रति दयानन्दसरस्वती-
३० स्वामिनः श्रीयुतमहाराजविजयनगराधिपतेरानन्दारामे निवसन्ति।

---

१. कार्तिक सुदी ११, सोम, सं० १९३६।

यैर्वेदानां मतमङ्गीकृत्य तद्विरुद्धं किंचिदपि नैव मन्यते। किन्तु यानीश्वरगुणकर्मस्वभाववेदोक्तेभ्यः सृष्टिक्रमात्प्रत्यक्षादिप्रमाणेभ्यः आप्ताचारसिद्धान्तात्स्वात्मपवित्रता सुविज्ञानतश्च विरुद्धत्वात्पाषाणादिमूर्तिपूजा, जलस्थलादौ पापनिवारणशक्तिः, व्यासमुन्यादिभिरप्रणीतास्तन्नामव्याजेन प्रसिद्धीकृता नवीना व्यर्थ- ५ पुराणादिसंज्ञा ब्रह्मवैवर्तादयो ग्रन्थाः, परमेश्वरस्यावताराः, सपुत्रो[1] भूत्वा स्वविश्वासिनां पापानि क्षमित्वा मुक्तिं प्रददाति, उपदेशाय स्वमित्रं भूमौ प्रेषितवान्, पर्वतोत्थापन-मृतकसंजीवनचन्द्रखण्डनाकारणकार्य्योत्पत्तिस्वीकरणानीश्वरवाद-जीवब्रह्मणोः स्वरूपैक्यादीनि, कण्ठीतिलकरुद्राक्षादिधारणम्, शैवशाक्तवैष्णवगाणपतादयो[2] १० नवीनाः सम्प्रदायादयश्च निराकर्त्तुमर्हाणि सन्ति, तानि खण्डयन्ते॥

अतोऽत्र यस्य कस्यचिद्वेदादिसत्यशास्त्रार्थविज्ञाने प्रवीणस्य सभ्यस्य शिष्टस्याप्तस्य विदुषो विप्रतिपत्तिः स्वमतस्थापने परमतखण्डने च सामर्थ्यं वर्त्तते। स स्वामिभिः सह शास्त्रार्थं कृत्वैतेषां १५ मण्डनाय प्रवर्त्तेत नेतरः खलु।

इह शास्त्रार्थे वेदा मध्यस्था भविष्यन्ति। एतेषामर्थनिश्चयाय ब्रह्मादिजैमिनिपर्य्यन्तैर्मुनिभिर्निर्मिता ऐतरेयब्राह्मणादि-पूर्वमीमांसापर्यन्ता आर्षा वेदानुकूला वादिप्रतिवाद्युभयसम्मता ग्रन्था मन्तव्याश्च। येऽत्र सभासदो भवेयुस्तेऽपि पक्षपातविरहा धर्मार्थकाम- २० मोक्षपदार्थस्वरूपसाधनाभिज्ञाः सत्यप्रिया असत्यद्वेषिणः स्युर्नातो विपरीताः। यत् किंचित्पक्षिप्रतिपक्षिभ्यामुच्येत तत्सर्वं त्रिभिरभिलेखकैर्लिपीकृतं भवेत्। स्वस्वलेखान्ते वादिप्रतिवादिनौ सम्मत्यर्थं स्वहस्ताक्षरैः स्वस्वनाम लिखेताम्, ये च मुख्याः सभासदः। एतत्कृत्वैकदिनलेखसिद्धं पुस्तकमेकं वादिने, द्वितीयं प्रतिवादिने देयं, २५ तृतीयं च सर्वसम्मत्या कस्यचित्प्रतिष्ठितस्य राजपुरुषस्य सभायां स्थापितं भवेद्यतः कश्चिदप्यन्यथा कर्तुं न शक्नुयात्।

---

१. पुत्रेण ईशुमसीहनाम्ना सहितः सपुत्रः। इशुमसीहेन सह मिलित्वैव ईसाईमतानुयायिनामीश्वरः पापानि क्षन्तुं समर्थो भवति। भाषानुसारं तु 'तत्पुत्रो भूत्वा' इति पठनीयम्। तत्पुत्र – ईश्वरपुत्र इत्यर्थः। ३०

२. '०गाणपतादि' अपपाठः पूर्वमुद्रिते।

यद्येवं सति काशीनिवासिनो विद्वांसः सत्यानृतयोर्निश्चयं न कुर्य्युस्तर्ह्येषामतीव लज्जास्पदमस्तीति वेदितव्यम्। विदुषामयमेव स्वभावो यत्सत्यासत्ये निश्चित्य सत्यस्य ग्रहणमितरस्य परित्यागं कृत्वा कारयित्वा स्वेनान्यैः सर्वैर्मनुष्यैश्चानन्दितव्यमिति ॥

५ ॥ प्रथम विज्ञापन ॥

॥ भाषार्थ ॥

सब सज्जन लोगों को विदित किया जाता है कि इस समय पण्डित स्वामी दयानन्द सरस्वती जी महाराज काशी में आकर जो श्रीयुत् महाराजे विजयनगर के अधिपति का आनन्दबाग मह-
१० मूदगञ्ज के समीप है उसमें निवास करते हैं। वे वेदमत का ग्रहण करके उससे विरुद्ध कुछ भी नहीं मानते, किन्तु जो-जो ईश्वर के गुण कर्म स्वभाव और वेदोक्ति १, सृष्टि क्रम २, प्रत्यक्ष आदि प्रमाण ३, आप्तों का आचार और सिद्धान्त ४, तथा अपने आत्मा की पवित्रता और उत्तम विज्ञान ५, से विरुद्ध होने के कारण जो
१५ पाषाणादि मूर्तिपूजा, जल और स्थल विशेष में पाप निवारण करने की शक्ति, व्यास मुनि आदि के नाम पर छल से प्रसिद्ध किये नवीन व्यर्थ पुराण आदि नामक ब्रह्मवैवर्त आदि ग्रन्थ, परमेश्वर के अवतार, ईश्वर का पुत्र होके अपने विश्वासियों के पाप क्षमा करके मुक्ति देने हारे का मानना, उपदेश के लिये अपने मित्र
२० पैगम्बर को पृथ्वी पर भेजना, पर्वतों का उठाना, मुरदों का जिलाना, चन्द्रमा का खण्ड करना, कारण के बिना कार्य की उत्पत्ति मानना, ईश्वर को नहीं मानना, स्वयं ब्रह्म बनना, अर्थात् ब्रह्म से अतिरिक्त वस्तु कुछ भी न मानना, जीव ब्रह्म को एक ही समझना, कण्ठी तिलक और रुद्राक्षादि धारण करना, और शैव,
२५ शाक्त, वैष्णव, गाणपतादि सम्प्रदाय आदि हैं, इन सब का खण्डन करते हैं।

इस से इस विषय में जिस किसी वेद आदि शास्त्रों के अर्थ जानने में कुशल, सभ्य, शिष्ट, आप्त विद्वान् को विरुद्ध ज्ञान पड़े, अपने मत का स्थापन और दूसरे के मत का खण्डन करने में
३० समर्थ हो, वह स्वामी जी के साथ शास्त्रार्थ कर के पूर्वोक्त व्यवहारों का स्थापन करो। इस से विरुद्ध मनुष्य कभी नहीं कर

सकता ।

इस शास्त्रार्थ में वेद मध्यस्थ रहेंगे । वेदार्थ निश्चय के लिये जो ब्रह्मा से लेकर जैमिनि मुनि पर्यन्त के बनाए ऐतरेय ब्राह्मण से लेके पूर्वमीमांसा पर्यन्त वेदानुकूल आर्ष ग्रन्थ हैं, वे वादी और प्रतिवादी उभय पक्ष वालों को माननीय होने के कारण माने जावेंगे । और जो इस सभा में सभासद् हों, वे भी पक्षपातरहित धर्म, अर्थ, काम और मोक्ष के स्वरूप तथा साधनों को ठीक-ठीक जानने सत्य के साथ प्रीति और असत्य के साथ द्वेष रखने वाले हों, इन से विपरीत नहीं । दोनों पक्ष वाले जो कुछ कहें, उसको शीघ्र लिखने वाले तीन लेखक लिखते जावें । वादी और प्रतिवादी १० अपने-अपने लेख के अन्त में अपने-अपने लेख पर स्वहस्ताक्षर से अपना अपना नाम लिखें । तथा जो मुख्य सभासद् हों,वे भी दोनों के लेख पर हस्ताक्षर करें । उन तीन पुस्तकों में से एक वादी दूसरा प्रतिवादी को दे दिया जाए और तीसरा सब सभा की सम्मति से किसी प्रतिष्ठित राजपुरुष की सभा में रखा जावे कि जिस से १५ कोई अन्यथा न कर सके ।

जो इस प्रकार होने पर काशी के विद्वान् लोग सत्य और असत्य का निर्णय करके औरों को न करावेंगे, तो उनके लिये अत्यन्त लज्जा की बात है, क्योंकि विद्वानों का यह ही स्वभाव होता है जो सत्य और असत्य को ठीक-ठीक जान के सत्य का ग्रहण और २० असत्य का परित्याग कर दूसरों को कराके आप आनन्द में रहना औरों को आनन्द में रखना ।[1]

॥ दूसरा विज्ञापन[2] ॥

स्वामी जी को छः पुरुषों की अपेक्षा है ॥ एक– वेद वेदाङ्ग निघण्टु निरुक्त व्याकरण मीमांसादि शास्त्रों में निपुण शुद्ध लिखने २५ पूर्वापर शब्द अर्थ और सम्बन्ध के विचार से शुद्धाशुद्ध को जान के शुद्ध करने और भाषा व्याकरण की रीति से संस्कृत की भाषा की सुन्दर रचना करने वाला विद्वान् ॥

---

१. आर्यदर्पण दिसम्बर १८७९, पृ० ३४७, ३४८ पर भी इतना आर्य-भाषा का भाग फारसी अक्षरों में छपा है । यह भाग आर्यदर्पण फरवरी ३० १८८० पृ० ४२ पर भी छपा है ।

२. यह विज्ञापन पूर्व विज्ञापन के साथ ही छपा है ।

दूसरा—व्याकरण में निपुण लिखने में शीघ्रकारी पूर्वोक्त रीति से संस्कृत की ठीक-ठीक भाषा की रचना करने हारा ॥

तीसरा - शुद्ध लेखक शीघ्र लिखने वाला ॥

चौथा - ब्राह्मण रसोई बनाने में अति चतुर ॥

५ पांचवा—चतुर सेवक कहार काछी कुर्मी व किशान ॥

और छठा— नागरी इङ्गलिश और उर्दू भाषाओं का लिखने पढ़ने वाला हो। इन छः पुरुषों की जैसी-जैसी योग्यता अपने-अपने काम में होगी उस को मासिक भी वैसा ही दिया और उससे यथा-योग्य काम लिया जायगा। जिस किसी को ऐसा करना अपेक्षित १० हो वह उक्त स्थान पर जाकर स्वामी जी से मिलके प्रबन्ध कर लेवे ॥

ऋतुकालाङ्कचन्द्रेऽब्दे मार्गशीर्षेऽसिते दले।
चन्द्रवारे तृतीयायां पत्रमेतदलेखिषम् ॥१॥

संवत् १९३६ मिती मार्गशीर्ष वदी ३ सोमवार[1] को यह पत्र १५ मैंने लिखा है ॥

हस्ताक्षर
पण्डित भीमसेन शर्म्मा[2]

Printed At The Medical Hall Press, Berares—3-12-1879—200[3]

२० ## तृतीय विज्ञापन[4]

सन्ध्या के चार बजे से लेके रात्रि को दश बजे पर्यन्त स्वामी

---

१. १ दिसम्बर १८७९। उस दिन तृतीया भी लग गई थी। प्रेस लाइन के अनुसार ३ दिसम्बर १८७९ को छपा।

२. हमने सारा विज्ञापन मूल-विज्ञापन से छापा है। मूल विज्ञापन हमारे २५ संग्रह में सुरक्षित है।

३. ये दोनों विज्ञापन पं० लेखराम जी कृत उर्दू जीवनचरित में पृष्ठ १५१, १५२ (हिन्दी सं० पृष्ठ १७८—१८०) पर छपे हैं। उन में अन्त की प्रेस लाइन और पं० भीमसेन के हस्ताक्षर नहीं हैं। साथ में एक विज्ञापन और छपा है। उसे हम आगे दे रहे हैं। देखो इसी पृष्ठ पर, तथा उस की ३० टिप्पणी सं० ४।

४. उपर्युक्त दो विज्ञापनों के साथ यह विज्ञापन पं० लेखराम जी कृत

जी को सब से मिलने और बातचीत करने का अवकाश प्रतिदिन रहता है।

हस्ताक्षर पण्डित भीमसेन शर्मा
दशाश्वमेध आर्य यन्त्र में मुद्रित हुआ।

—:o:—

[पूर्ण संख्या ३६६] पत्र ५

बाबू माधोलाल जी आनन्दित रहो[1]!

अब तक छापेखाने की कुछ सामग्री आई नहीं और न कुछ पण्डित सुन्दरलाल का जवाब आया। अब आप लोग इसका बहुत शीघ्र भाव ताब टेप् का नमुना और रायलप्रेस का मूल्य लिखकर हमारे पास भेजिये। इसमें जितना बने उतनी शीघ्रता कीजिये। १० हमको सब छापेखानों से तिगुना चौगुना टेप् लेना होगा। उसके केस, लकड़ी, सबका भाव लिखना।

मुंशी बखतावरसिंह मन्त्री आर्यसमाज साहजहांपुर ने ३०) रुपये मावारी पर छापेखाने का सब प्रबन्ध करने के लिये सरकारी नौकरी छोड़के आने का स्वीकार किया है। ये बहुत अच्छे आदमी १५ हैं। तीनों भाषा पढ़े हुये सब काम अच्छा चलेगा छापेखाने का काम सब जानते हैं। और विज्ञापन पत्र आज छप चुके हैं, सो भी तुम्हारे पास भेजते हैं।[2]

दयानन्द सरस्वती

—:o:—

उर्दू जीवन चरित पृष्ठ १५२ (हिन्दी सं० पृष्ठ १८०) पर मिलता है। २० पं० लेखराम जी द्वारा संगृहीत तीनों विज्ञापनों के अन्त में 'दशाश्वमेध आर्य यन्त्र में मुद्रित हुआ' पाठ है और पूर्व मुद्रित दोनों विज्ञापनों के अन्त में 'मेडिकल हाल यन्त्रालय' में छपने का उल्लेख और 'हस्ताक्षर पण्डित भीमसेन' इतना पाठ नहीं है। प्रतीत होता है कि मेडिकल हाल वाला प्रथम संस्करण है और आर्य यन्त्र में छपा द्वितीय संस्करण है। द्वितीय २५ संस्करण के समय यह तृतीय विज्ञापन बढ़ाया गया, ऐसा प्रतीत होता है।

१. मूल पत्र आर्यसमाज दानापुर के संग्रह में सुरक्षित है।

२. इस पर कोई तिथि नहीं है। परन्तु इस पत्र के अन्त में लिखित

[पूर्ण संख्या ३६७] पारसल-सूचना

[बाबू माधोलाल जी, दानापुर]
विज्ञापनपत्र ।[१]

—:o:—

[पूर्ण संख्या ३६८] पत्रांश

५ [बाबू माधोलाल जी][२]

ता० १५ दिसम्बर ७९[३] को साहब लोग अंग्रेज निम्नलिखित बनारस आकर मेरे पास राजा विनयनगर के बाग में जो निकट महमूदगंज है, ठहरेंगे। इस लिये आप को लिखा जाता है कि यदि आपको इन अंग्रेजों से मुलाकात करनी हो, तो सोलहवीं तक मेरे १० पास उक्त बाग में चले आइये। और कृपा करके छपरा में महावीर प्रसाद आदि को भी इस विषय में विदित कीजिये।

१२ दिसम्बर ७९[४]

नाम उन साहब लोग अंग्रेजों के जो बनारस में १५ को आवेंगे। करनेल एच० एस० अलकाट साहब बहादुर अमरीकन। १५ मेडम एच० पी० ब्लेवेटस्की साहिबा। इ० एफ० सिनेट साहब प्रबन्धक पायोनियर समाचार इलाहाबाद। अतिरिक्त इन अंग्रेजों के उनके साथी और भी दो तीन अंग्रेज आवेंगे।

दयानन्द सरस्वती

—:o:—

'विज्ञापनपत्र आज छप चुके हैं' वाक्य में पूर्व पूर्णसंख्या ३६३, ३६४ पर २० मुद्रित विज्ञापनों की ओर संकेत है। वे ३ दिसम्बर १८७९ को छपे थे। अतः यह पत्र ३ दिसम्बर सन् १८७९ को लिखा गया होगा।

१. विज्ञापन पत्र भेजने की सूचना बिना तारीख के पूर्णसंख्या ३६६ के पत्र में है। यह पत्र ३ दिसम्बर १८७९ का है। द्र० — पृ० ४०९, टि० २।

२. पं० लेखरामकृत उर्दू जीवनचरित पृ० ८३८ (हिन्दी सं० पृष्ठ २५ ८७३) पर उद्धृत। यह पत्र सम्भवतः उर्दू में था। जीवनचरित में सब उर्दू शब्द ही हैं।

३. मार्गशीर्ष शुक्ल २, सोमवार, सं० १९३६।

४. मार्गशीर्ष कृष्ण १४, शुक्रवार, सं० १९३६।

[पूर्ण संख्या ३६९] पत्रांश[1]

[प्रबन्धकर्त्ता वेदभाष्य][2]

करनल अल्काट आदि सब अंग्रेज १५ दिसम्बर ७९ को मेरे पास आ गये। और मेरा संवाद उन से प्रारम्भ हो गया।

१७ दिसम्बर ७९[3] दयानन्द सरस्वती ५

बनारस

—:०:—

[पूर्ण संख्या ३७०] विज्ञापन[4]

वेद विद्या के पूर्ण विद्वान् पण्डित दयानन्द सरस्वती बंगाली टोले के प्रिपेरेटरी स्कूल में २० दिसम्बर १८७९ शनिवार तदनुसार अगहन सुदी ७ संवत् १९३६ को व्याख्यान करेंगे। आशा है १० कि सब सज्जन आन कर लाभ उठावें।[5]

भीमसेन शर्मा

—:०:—

[पूर्ण संख्या ३७१] पत्र

[काशी के मजिस्ट्रेट[6] के नाम][7]

श्रीमान् ! १५

क्या आप मुझे बताने की कृपा करेंगे कि आप की कल की

---

१. यह पत्रांश पं० लेखरामकृत उर्दू जीवनचरित पृष्ठ ८३८ (हिन्दी सं० पृष्ठ ८७३) पर उद्धृत।

२. मुन्शी समर्थदान।

३. मार्गशीर्ष शुक्ल ४, बुधवार, सं० १९३६। २०

४. पं० लेखरामकृत जीवनचरित हिन्दी सं० पृष्ठ १८२ पर मुद्रित।

५. यह विज्ञापन अगहन सुदी ७ सं० १९३६ (२० दि० सन् १८७९) से दो तीन दिन पूर्व दिया गया होगा।

६. इस मजिस्ट्रेट का नाम "मिस्टर बाल" था। देखो पं० घासीराम सम्पा० जीवनचरित पृष्ठ ५९५। २५

७. यह पत्र २१ दिसम्बर १८७९ (मार्गशीर्ष शु० ८ रवि, सं० १९३६) को लिखा गया था। पं० घासीरामजी सम्पादित जीवनचरित्र पृष्ठ ५५९ पर उद्धृत।

आज्ञा कि मैं सम्प्रति व्याख्यान न दूं किन आधारों पर निहित थी। आप की सूचनार्थ उस आज्ञा की प्रतिलिपि इस पत्र के साथ भेजी जाती है। मैं आप का उपकृत हूंगा यदि आप मुझे यह भी बतायेंगे कि यह प्रतिबन्ध कितने समय तक रहेगा। आप की
५ सुविधानुसार आपके पत्र का प्रतीक्षक –

[२१ दिसम्बर १८७६] आप का प्रतिष्ठाभावसम्पन्न
दयानन्द सरस्वती स्वामी

—:o:—

[पूर्ण संख्या ३७२] कार्ड

जैसराज गोटीराम[1] [जी आनन्दित रहो][2]।

१० मुनशी बखतावर सिंह ·· ·· वार को[3] कलकत्ता रवाने हुए। जब [वह आप] के पास पहुंचें तो मेरा यह पत्र उनके [हवा]ले कीजिये।

मुन्शी साहब –

एक रोयल प्रेस तो आप लेंगे ही परन्तु एक छोटा प्रेस भी
१५ जिस से प्रूफ उठाने का काम लिया जाता है अवश्य लेना चाहिये। और यह सब सामग्री अमृत [बाजार] पत्रिका के सम्पादक की सम्मति से लीजियेगा क्योंकि वे इस विषय के जानकार हैं। चीज अच्छी और कीमत वाजिब दिलावेंगे। यहां एक बङ्गाली का प्रेस, टाइप के अक्षर केस आदि सब चीज बिकाऊ है हम दो एक दिन
२० में उनको देख भाल कर यदि वह अच्छे और काम के लायक होंगे तो ख[रीद लेंगे]

१३ दिस० ७६ ई०![4] दयानन्द सरस्वती

---

१. इनका नाम पूर्णसंख्या ३५५ के विज्ञापन में भी आया है। ये फर्रुखाबाद के थे। इन का व्यापार सम्भवत: कलकत्ता में भी था।

२५ २. यह कार्ड म० मामराज जी ने ता० २३ जुलाई सन् १९४५ को स्वर्गीय लाला रामशरण दास जी रईस मेरठ शहर वालों के पुराने पत्रों में से उनके पौत्र लाला परमात्माशरण जी के साथ खोज कर प्राप्त किया। मूल कार्ड हमारे संग्रह में सुरक्षित है।

३. बिन्दु वाला स्थान नष्ट हो गया है। कोष्ठों में हमने पूर्ति की है,
३० बनारस से लिखा गया।

४. मार्गशीर्ष सुदी १०, मङ्गलवार, संवत् १९३६।

[कार्ड पर उर्दू तथा देवनागरी में निम्नलिखित पता है—
कलकत्ता अफीम का चौराहा जुगल किशो[र]
विलासराय की कोठी में जैसराज गोटीराम के पास

—:o:—

[पूर्ण संख्या ३७३] पत्र-सूचना

[लेफ्टिनेंट गवर्नर व चीफ कमिशनर को व्याख्यानों पर प्रति- ५
बन्ध लगाने के सम्बन्ध में पत्र][1]

—:o:—

[पूर्ण संख्या ३७४] पत्र-सूचना[2]

वल्लभदास लाहौर।
मार्ग० सु० १२ सं० १९३६ बृहस्पतिवार
२५ दिसम्बर १८७९ १०

—:o:—

[पूर्ण संख्या ३७५] पत्र

पण्डित सुन्दरलाल[3] वो रामनारायण जी आनन्दित रहो— पण्डित मण्डनराम जी ने मुझ से चलते समय कहा था कि मैं जीविका के लिये अत्यन्त दुखी हूं आप मुझे अपने साथ रखिये इस-लिये आप उनसे पूछ कर लिखिये यदि उनकी इच्छा हो तो काशी १५ में मेरे पास चले आवें - दूसरे यह कि यदि वहां छापेखाने के केस तैयार मिल सकते हों तो हमको लिखिये हमको उनकी जरूरत है करनेल ओलकाट साहेब और मेडम ब्लेवस्तकी से तुम मिले होंगे

---

१. इस पत्र की सूचना देवेन्द्रनाथ संकलित जी० च० पृष्ठ ५९४ से मिलती है। इस पत्र के उत्तर में जूनियर सेक्रेटरी पी० स्मीटन का सं० २० ४६१ ता० २४ फरवरी १८८० का पत्र तीसरे भाग में देखें।

२. इस पत्र का संकेत लाहौर समाज के कोषाध्यक्ष वल्लभदास जी के पत्र में है। [बल्लभदास का पत्र लाहौर में पं० भगवद्दत्त जी के संग्रह में था, वहीं नष्ट हो गया।]

३. यह पं० सुन्दरलाल व रामनारायण जी को भेजे गये पत्र की प्रति- २५ लिपि है, जो परोपकारिणी सभा के संग्रह में विद्यमान है।

इसका हाल लिखना। सं० १६३६ मि० मार्ग० शु० १२ बुध[1]
दयानन्द सरस्वती

—:०:—

[पूर्ण संख्या ३७६] विज्ञापन

॥ओ३म्। नमः सर्वशक्तिमते जगदीश्वराय॥[2]

५ ॥ विज्ञापनपत्रमिदम् ॥

समस्तान्धार्मिकान् प्रतीदं प्रत्याय्यते—यच्छ्रीताराचरणप्रकाशितं वाराणसीस्थविदुषां स्वामिभिः सह शास्त्रार्थकरणाभिप्रायसूचकं सभ्यविद्वल्लेखविरुद्धं पत्रमस्ति। तद् दृष्ट्वाऽत्यन्तमाश्चर्यं प्रतिभाति नः। यदत्रत्यो दयालुरुपानहां निर्माताऽन्त्यजोऽपि विद्व-
१० दुपमां बिभर्ति तर्हीहत्याः पण्डिताः खलु कस्योपमां दधतीति। नहि योग्ययोर्विदुषोः समागमेन विना कदापि सत्यासत्यव्यवहाराणां सिद्धान्ता [विदिता] भवितुमर्हन्ति। तस्माद् भाविनि समागमे विशुद्धानन्दसरस्वतीस्वामिनो बालशास्त्रिणो वा संवादङ्कर्तुं प्रवर्तेरन्नेतराः किल। यदैतेऽत्र प्रवर्त्स्यन्ति तदा स्वामिनोऽप्युद्यताः
१५ सन्त्येवेत्यलमतिविस्तरेण।

विद्वांसः सुविचारशीलसहिता धर्मोपकारे रता
दुष्टं कर्म विहाय सत्यसरणा नौकेव पाराय ते।
क्रूराः कामसिताः किमत्र समलाः स्वार्था अहो भावना
विघ्नाः[3]कस्य नरस्य नैव विततान्कुर्युः सदा दूषिताः ॥१॥

२० ऋतुरामाङ्कचन्द्रेऽब्दे मार्गशीर्षे सिते दले।
चतुर्दश्यां शनीवारे[4] पत्रमेतदलेखिषम् ॥

---

१. यहां बृहस्पतिवार होना चाहिये।

२. पं० लेखरामकृत उर्दू जीवनचरित पृ० १५७, १५६ (हिन्दी सं० पृष्ठ १८४-१८५) से उद्धृत।

२५ ३. यहां 'विघ्नान्' पाठ चाहिये। पं० लेखरामकृत जीवनचरित हिन्दी सं० पृ० १८४ पर 'विघ्नान्:' पाठ छपा है। 'विघ्नान्' यह सम्पादक ने ठीक किया प्रतीत होता है, क्योंकि उसमें मूलपाठ के : विसर्ग भी उपलब्ध हैं।

४. पं० लेखरामकृत जीवनचरित हिन्दी सं० में **शनी वारे** पाठ है। यह सम्पादक ने शोधा है, ऐसा प्रतीत होता है। शनिवार के अर्थ में दीर्घ ईकार-
३० वान् '**शनीवार**' स्वतन्त्र शब्द है। छन्दोनुरोध से यहां दीर्घ नहीं हुआ है।

॥ भाषार्थ ॥

सब काशीस्थ धार्मिक विद्वान् महाशयों पर प्रगट हो कि श्री ताराचरण शर्म्मा ने एक विज्ञापन पत्र छपवाया जिसका अभिप्राय यह है कि काशी निवासी विद्वज्जन स्वामी दयानन्द सरस्वती जी से शास्त्रार्थ करने की इच्छा करते हैं। यह पत्र विश्वास करने ५ योग्य तो है परन्तु ऐसा लेख सभ्य विद्वानों का नहीं होता। इसके देखने से हम को बड़ा आश्चर्य होता है कि जब जूते गांठने और बनानेहारा काशी का चमार विद्वानों की उपमा को धारण करता है तो पण्डित लोग किस की उपमा को धारण करेंगे। भला बक और हंस की समता कहीं सम्भव है। यदि यह बात एक मूर्ख से १० भी पूछी जावे तो वह भी दृढ़तापूर्वक कहेगा कि सत्य का सिद्धान्त विना पण्डितों के समागम के कदापि नहीं हो सकता। अब इस काशी में सर्वोत्तम पण्डित दो हैं। एक स्वामी विशुद्धानन्द सरस्वती दूसरे बालशास्त्री। जो इन दोनों महाशय में से कोई एक भी यदि शास्त्रार्थ करना चाहे तो स्वामी जी भी सर्वथा उपस्थित १५ हैं। सिवाय इन दोनों के दूसरों को विज्ञापनपत्र देना और लिखना सर्वथा निर्थक है।

श्लोक की भाषा

सर्वशक्तिमान् जगदीश्वर की सृष्टि में दो प्रकार के मनुष्य हैं। एक उत्तम दूसरे निकृष्ट। उत्तम वे हैं जो कि विचारयुक्त सुशील २० धर्म और उपकार करने में सन्तुष्ट दुष्ट कर्मों से दूर सत्य के प्रेमी नौका के समान अविद्यादि दोषों और कष्टों से लोगों को पार उतारने वाले विद्वान् हैं। वे अपनी शान्ति परोपकार और गम्भी-

---

अन्यथा कवि की काव्यशक्ति की हीनता-द्योतन के साथ-साथ इसे अपशब्द भी मानना पड़ेगा। अमरकोश (२।६।१) में पुरुष समानार्थक दीर्घ ऊकार- २५ वान् पूरुष को स्वतन्त्र शब्द माना है। अष्टाध्यायी की प्राचीन अनुपलब्ध **भागवृत्ति** में लिखा है कि जिन **पूरुष नारक** आदि शब्दों में काशिकाकार **'अन्येषामपि दृश्यते'** (६।३।१३७) से दीर्घत्व मानता है, वे वस्तुत: स्वतन्त्र दीर्घोपदेश संज्ञा शब्द हैं, क्योंकि उक्त सूत्र उत्तरपद परे रहने पर दीर्घत्व का विधान करता है। 'पूरुष:, नारक:' में उत्तरपद परे नहीं है (**अनेनोत्तर- ३० पदे विधानादप्राप्तिरिति पूरुषादयो दीर्घोपदेशा एव संज्ञाशब्दा इति भागवृत्ति:**) देखो हमारा 'भागवृत्ति-सङ्कलनम्' (६।३।१३७)।

रतादि को कभी नहीं छोड़ते। और जो क्रूर कामी अविद्यादि मलयुक्त स्वार्थी दूषित मनुष्य हैं वे श्रेष्ठ मनुष्यों को बड़े-बड़े विघ्न सदा क्या नहीं करते हैं? ये बड़ा आश्चर्य है कि आप्त लोग असभ्य लोगों पर कृपा करके सदा उनका उपकार ही किया करते
५ हैं। परन्तु वे अपने दोषों से उपकार को अनुपकार ही माना करते हैं। इसलिये हम प्रार्थना करते हैं कि सर्वशक्तिमान् परमात्मा अपनी कृपा से उन मनुष्यों को सब बुरे कामों से हटाकर सत्यमार्ग में सदा प्रवृत्त करें।

संवत् १९३६ मि॰ मार्ग॰ शुक्ल १४ शनिवार।[1]

—:o:—

१० [पूर्ण संख्या ३७७] उर्दू पत्र

जनाब मुन्शी इन्द्रमन जीव साहब आनन्दित रहिये।[2]

नमस्ते! ५९९ पंचसौ निनानवें जिल्द सन्ध्याभाष्य मुरसले आप की पहुंची। हस्बुला ईमा आपके मैं यहां चन्द्रिका तलाश कर रहा हूं। अनकरीब बशरते दस्तयाबी अरसाल खिदमत होगी।
१५ कैफीयत यहां की यह है कि जमीअ असबाब छापेखाने का मय कागज व रौशनाई व प्रूफसीट वगैरा के कलकत्ते से यहां आ गया। व ५ पाँच मन टाइप तो राजा साहब ने मुरादाबाद से मेरे पास भेज दिये हैं। व करीब ८ आठ मन के कलकत्ते से खरीद किये गये हैं गरज कि अन्दर एक महीने के कार छापेखाने का इजरा हो
२० जावेगा। मेरा कस्द है कि पेशतर शिक्षा पुस्तक जो छोटी व हाल में तसनीफ हुई है छपवाई जावे। व बाद उसके दूसरी किताबें जो काबिल नविश्त खवांद हैं छपवाई जावें। व जब कार छापेखाने का बखूबी इजरा हो जावेगा तब बम्बई से बुला वेदभाष्य का कारखाना उठवा कर बनारस में जारी किया जावेगा।
२५ अब यहां रुपये के लिये कमाल दिक्कत है। व यह कारखाना

---

१. २७ दिसम्बर, सन् १८७९।

२. यह उर्दू पत्र काशी से मुरादाबाद भेजा गया था। मूल पत्र मुंशी जी के पोते ला॰ भगवतसहाय के पास लिफाफे के अन्दर मुरादाबाद में है। इसकी प्रतिलिपि ता॰ १० नवम्बर सन् १९२६ को म॰ मामराज जी ने
३० उन के स्थान मुरादाबाद से प्राप्त की।

सिर्फ आप लोगों की उम्मीद पर चलाया जाता है आगाजकरदय सास मासाह।

इसलिये आप बराये मेहरबानी ला० श्यामसुन्दर से कहकर अरदूनी महकमा जहां-जहां जिस कदर रुपया जमा हो यकजा करा कर मेरे पास भेज दीजिये। ताकि इजराय कार में तवक्कुफ व तसाहुल न हो। अब बनिसबत निकालने अखबार के क्या कस्द हैं। मेरी दानिस्त में तो अगर अखबार अंग्रेजी व हिन्दी व उर्दू तीनों एक ही परचे में हों तो निहायत मुनासिब होगा। या जैसी राय शरीफ हो वही अनसब है। बराये मेहरबानी दर्बारए निकालने अखबार के जो तजवीज आप की मुसम्मिम हो उसको तहरीर फरमाइये। बाकी कैफियत यहां की बदस्तूर है। हनूज यहां के पण्डित शास्त्रार्थ करने के लिये मुसतइद नहीं हुए। जैसा हाल होगा उससे आप मतले करूंगा। फक्त १० जनवरी सन् १८८० ई०।[1]

दस्तखत

[द० दयानन्द सरस्वती]

—:o:—

[पूर्ण संख्या ३७८] पत्रांश

[मुंशी समर्थदान मुम्बई]

तुम सब काम उठाकर बनारस चले आओ।[2]

[लगभग ता० १७ जनवरी १८८० काशी][3]

—:o:—

[पूर्ण संख्या ३७९] पत्रांश

[थियोसोफिस्ट के सम्पादक]।[4]

---

१. पौष कृष्ण १३, शनिवार, सं० १९३६।

२. श्री पं० कालूरामजी रामगढ़ के नाम मुंशी समर्थदानजी ने ता० २० जनवरी १८८० को मुम्बई से एक पत्र लिखा था। उसमें अगली सूचना है स्वामी का पत्र आज आया है उन्होंने लिखा है कि "तुम सब काम उठा कर बनारस चले आओ।" उक्त पत्र हमारे संग्रह में सुरक्षित है।

३. पौष शुक्ल ६, शनिवार, सं० १९३६।

४. थियोसोफिस्ट फरवरी सन् १८८० (माघ सं० १९३६) में उद्धृत।

मजिस्ट्रेट मिस्टर बाल ने मेरे उस पत्र का जो मैंने उनकी आज्ञा के प्रतिवाद के रूप में भेजा था[1] और जिस में कुछ बातें पूछी थीं नोटिस तक नहीं लिया।

—:०:—

[पूर्ण संख्या ३८०] पत्र-सारांश[2]

५ [करनैल आल्काट, मेडम-ब्लेवेस्टकी]

मैं सिवाय वेदोक्त सनातन आर्यावर्तीय धर्म के अन्य सुसाइटी समाज वा सभा के नियमों को न स्वीकारता था, न करता हूं न करूंगा। क्योंकि यह बात मेरे आत्मा की दृढ़तर है, शरीर प्राण भी जायें तो भी इस धर्म से विरुद्ध कभी नहीं हो सकता।

१० मेरा नाम आपने अपनी इच्छा से जहां कहीं [थयोसोफिकल सोसाइटी के] सभासदों में लिखा हो काट दीजिये।

—:०:—

[पूर्ण संख्या ३८१] उर्दू पत्र

चौधरी लक्ष्मणदास जी आनन्दित रहो![3]

बाद नमस्ते आं के आपने जो पापोश पेशतर भेजा था वह भी १५ बड़ा था। यह तो निहायत बड़ा व चौड़ा है। देखिये इसमें आप का आठ आने पारसल व चार आने रजिस्ट्री में फजूल सर्फ हुआ।

देखो पं० घासीरामजी सम्पादित जी० च० पृष्ठ ५९५।

१. यह पत्र पूर्ण संख्या ३७१, पृष्ठ ४११ पर छपा है।

२. इस पत्र सारांश में मुद्रित दोनों भाग सं० १९३७ मार्गशीर्ष बदी २० ६ (= २३ नवम्बर १८८०) के आगे मुद्र्यमाण ऋ० द० के पत्र में पृथक्-पृथक् स्थानों में उद्धृत हैं। ये दोनों अंश एक ही पत्र के हैं वा भिन्न-भिन्न के, यह अज्ञात है। हमारे विचार में ये दोनों अंश एक ही पत्र के हैं। यह पत्र काशी से बम्बई को लिखा गया था। लगभग ३१ मार्च सन् १८७२ को मुम्बई के ओरियन्टल प्रेस में छपे **'थियोसोफिस्टों का गोलमाल पोल-२५ पाल'** विज्ञापन में भी इस पत्र का संकेत है।

३. इस पत्र की उर्दू प्रतिलिपि म० मामराजजी ने मेरठ निवासी लाला रामशरणदासजी के पत्रों में से जुलाई सन् १९४५ में खोजी। प्रतिलिपि हमारे संग्रह में सुरक्षित है। इन के संबन्ध में पृष्ठ ३९८, टि० ३ देखो।

अगर मालगाड़ी में आता तो शायद कम खर्च होता। पापोश तो हर जगह उमदा किस्म के दस्तयाब हो सकते हैं। अबाबदून हमाले मंगवाये कोई चीज भेजने की तक्लीफ न उठा इयेगा। फकत। बाकी हाल बनारस का बदस्तूर है। होर कोई पंडत शास्त्रार्थ के लिये मुस्तइद नहीं हुआ। जो कुछ आइन्दा हाल होगा लिखेंगे। ५
फकत।

मुअर्खा २८ जनवरी सन् १८८०।[1]		[दयान———

—:०:—

**[पूर्ण संख्या ३८२]		पत्रसूचना**

[शुकदेवप्रसाद नसीराबाद]।
फरवरी १८८० के आरम्भ में लिखा गया।[2]		१०

—:०:—

**[पूर्ण संख्या ३८३]		पत्र-सूचना**

बाबू श्रीप्रसाद जयपुर
अष्टाध्यायी [भाष्य] बहुत शीघ्र छपने वाला है।[3]
फरवरी १८८०

—:०:—

**[पूर्ण संख्या ३८४]		विज्ञापन[4]**		१५

सब सज्जनों पर विदित हो कि अब वेदभाष्य तेरहवें १३ अंक

---

१. माघ कृष्ण १ बुधवार सं० १९३६।

२. इस पत्र की सूचना शुकदेवप्रसाद के माघ १९३६ के पत्र से मिलती है। यह पत्र श्री मामराजजी के संग्रह में था, अब नष्ट हो चुका है।

३. यह सूचना बाबू श्रीप्रसाद जयपुर के १९ मार्च १८८० (फा० शु० ८ सं० १९३६) से पूर्व लिखे गये के पत्र में है। यह पत्र तीसरे भाग में देखें। १९ मार्च १८८० का बाबू श्रीप्रसाद का पत्र मामराज जी के संग्रह में था, जो नष्ट हो गया। २०

४. यजुर्वेद और ऋग्वेदभाष्य के बारहवें अङ्क पर छपा। यह अङ्क कार्तिक मास सं० १९३६ का है। [यह अङ्क देर से प्रकाशित हुआ था।] २५

इस अङ्क से सम्बन्ध रखनेवाला एक विज्ञापन यजुर्वेद और ऋग्वेदभाष्य के १३ वें अङ्क (मार्गशीर्ष १९३६) पर छपा था। आवश्यक होने से हम

पर्य्यन्त मुम्बई में छपेगा, इस के आगे १४वें अंक से लेकर आगे-आगे काशी में "**आर्यप्रकाश**" यंत्रालय में सदा छपा करेगा। मैंने इस यंत्रालय में अधिष्ठाता मुन्शी बखतावरसिंह मन्त्री आर्य्य-समाज शाहजहांपुर को नियत किया है, इस लिये सब ग्राहक और ५ दूसरे सज्जनों से यह निवेदन है कि इस के आगे अब जो कुछ वेद-भाष्यादि पुस्तकों के लेने के लिये पत्र और मूल्यादि भेजा चाहें सो उक्त यंत्रालय में उक्त स्थान पर उक्त मुन्शी जी के पास भेजा करें। और इस के आगे बाहर के लोग मुम्बई में मुन्शी समर्थदान के समीप वेदभाष्य संबंधी कार्य्य के लिये पत्र अथवा मूल्य आदि न १० भेजें क्योंकि १३ अंक छपे पीछे मुम्बई में इस का कुछ भी संबंध नहीं रहेगा, किन्तु मुम्बई के लोग दूसरा विज्ञापन दिया जाय तब सब व्यवहार मुम्बई में ही रक्खें।

(दयानन्द सरस्वती)

—:०:—

[पूर्ण संख्या ३८५]   पत्र

१५ मुंशी मनोहरलालजी [आनन्दित] रहो ![1]

उसे नीचे दे रहे हैं।

"विज्ञापन"

(१) सब सज्जनों को विदित हो कि मुम्बई में १३ अङ्क छपने का था, सो छप चुका, अब पीछे सब काम काशी अर्थात् बनारस में रहेगा। १२ २० अङ्क में काशी के यन्त्रालय का नाम **"आर्य्यप्रकाश"** छपा था, उसके बदले **"वैदिक"** यन्त्रालय नाम रक्खा गया है। इसलिये अब पीछे वेदभाष्य-सम्बन्धी पत्रव्यवहार मुम्बई और बाहर के सब लोगों को मुन्शी बखतावर सिंह जी प्रबन्धकर्ता "वैदिक" यन्त्रालय काशी से करना चाहिये। मुम्बई में इसका कुच्छ काम नहीं है।"

२५ इसके साथ दो विज्ञापन और छपे हैं। अन्त में मुन्शी समर्थदान के हस्ताक्षर हैं, अतः यह विज्ञापन भी उन्हीं की ओर से छपा होगा।

१. श्री स्वामी जी ने क़ुरान का भाषानुवाद करवा रखा था [देखो पूर्ण संख्या ३१०, पृष्ठ ३४३ की टिप्पणी २]। मुन्शी मनोहरलास रईस गुड़ हट्टा, पटना निवासी अरबी के अच्छे विद्वान् थे। वे ही उस अनुवाद को ३० शोधने के लिये अपने घर ले गये। यह पत्र उसी अनुवाद की पुस्तक में पड़ा

आप ले लाइये सब, परन्तु जितना शोधा जाय उतना भेज दें। वा सब को शोध के शीघ्र भेजियेगा। क्योंकि इस का काम हमको बहुत पड़ता है। और जगन्नाथ के हाथ और भी सब पूरे पत्रे भेजते हैं। आप संभाल लीजिये।

मि० मा० ३० मंगल[1]

१०४ से लेकर १२५ पृष्ठ सब हैं। [दयानन्द सरस्वती]

—:०:—

[पूर्ण संख्या ३८६] पत्र

[सम्पादक थियोसोफिस्ट][2]

[3]जब अजमेर में सभा हुई थी तो मैंने पादरी साहब को कहा था

रहा। हमारे मित्र श्री साधु महेशप्रसाद मौलवी फाजिल प्रो० हिन्दू विश्वविद्यालय, काशी, उस अनुवाद को अजमेर में देखने गये। वहीं से वे इस पत्र की प्रतिलिपि कर लाये। वह प्रतिलिपि उन्होंने अपने पत्र ७-८-१९४३ के साथ सोलन में हमारे पास भेजी।

१. मार्गशीर्ष ३० संवत् १९३४ मङ्गल, तदनुसार ४ दिसम्बर १८७७ को पड़ता है। और माघ ३० संवत् १९३६ मङ्गल, १० फरवरी १८८० को पड़ता है। यही सं० १९३६ की तिथि ठीक प्रतीत होती है। क्योंकि कुरान के इस भाषानुवाद के अन्त में **'सं० १९३५ कार्तिक शु० ९ रविवासरे कुराणाख्योऽयं ग्रन्थः सम्पूर्णः'** लेख मिलता है। अतः मार्गशीर्ष ३० सं० १९३४ मङ्गलवार का यह पत्र नहीं हो सकता। द्र०—पृष्ठ ३४३ की टि० २।

२. थियोसोफिस्ट पत्रिका खण्ड १, संख्या ६, मार्च सन् १८८०, पृष्ठ १४१ पर सम्पादक के नाम अजमेर के पादरी 'ग्रे' ने लिखा था—"यदि स्वामी जी उचित समझें तो आपके समाचारपत्र में अपने आक्षेपों को जिन का उत्तर सुनने के लिये वह अजमेर नहीं ठहरे, छपवा दिया करें और मेरे उत्तर के लिये इतना स्थान समाचारपत्र में दें तो मैं उस शास्त्रार्थ को जो अजमेर में अपूर्ण रह गया था प्रकाशित करूं।" (हस्ताक्षर) ग्रे। २७ जनवरी सन् १८८०। (द्र० —पं० लेखरामकृत जीवनचरित हिन्दी संस्क० पृष्ठ ७४५।

३. यह पत्र ऋ०द० ने थियोसोफिस्ट में छपे पादरी ग्रे के पत्र के उत्तर में लिखा था। द्र०—पं० लेखराम कृत जीवनचरित, हिन्दी संस्क० पृष्ठ ७४५।

कि अगले दिन सभा में आओ और शास्त्रार्थ करो, परन्तु उन्होंने आना स्वीकार नहीं किया इसलिये अब हम उनके साथ शास्त्रार्थ करना उचित नहीं समझते। हाँ यदि कोई शिक्षित विशप इस प्रकार का शास्त्रार्थ आप के समाचार पत्र के द्वारा करने के लिये
५ उद्यत हो तो हम निस्सन्देह शास्त्रार्थ करेंगे।

बनारस, १० फरवरी सन् १८८०[1]

(स्वामी दयानन्द सरस्वती)

—:o:—

[पूर्ण संख्या ३८७] तार-सारांश

[करनैल आलकाट]

१० जैसा हमने प्रथम 'वैदिक धर्म उपदेशक' लिखा था, वैसा लिखो।[2]

—:o:—

[पूर्ण संख्या ३८८] विज्ञापन[3]

॥ विज्ञापनपत्रमिदम् ॥

देवो देवानामसि मित्रो अद्‌भुतो वसुर्वसूनामसि चारुरध्वरे।
१५ शर्मन्त्स्याम तव सप्रथस्तमेऽग्ने सख्ये मा रिषाम वयं तव ॥
(ऋग्वेदे १० मण्डले ९४ सूक्ते १३ मन्त्रः)

---

१. माघ कृष्ण ३०, मङ्गल, सं० १९३६।

२. करनैल आलकाट आदि ने श्री स्वामी जी महाराज का नाम विना स्वीकृति के ही थियोसोफिकल सोसाइटी के सभासदों में लिख लिया था।
२० जब श्री स्वामी जी ने इसके विरोध में कड़ा पत्र लिखा **'जहां कहीं हमारा नाम सभासदों में लिखा हो वहां से काट दीजिये'** (द्र०—पूर्णसंख्या ३८० पृष्ठ ४१८ का पत्र), तब करनैल आलकाट ने तार द्वारा पूछा कि 'हम आप के लिये क्या लिखें।' उस के उत्तर में यह तार दिया। देखो आगे मुद्रित **'थियोसोफिस्टों का गोलमाल पोलमाल'** विज्ञापन।

२५ ३. यद्यपि यह विज्ञापन मुंशी बख्तावरसिंह के नाम छपा है फिर भी इस का साक्षात् सम्बन्ध ऋषि दयानन्द के साथ होने से, तथा अगले पूर्ण संख्या ३८९ के पत्र में इसे भेजने का उल्लेख होने से इसे यहां छापा है। यह विज्ञापन पं० लेखरामकृत जीवनचरित हिन्दी संस्क० पृष्ठ २०३ पर मुद्रित है।

जिस लिए (अग्ने) हे विज्ञानस्वरूप और सब जीवों को वेद तथा अन्तर्यामी द्वारा विज्ञान देने वाले जगदीश्वर आप, (देवानाम्) सब विद्वान् और सूर्य्यलोक आदि दिव्य पदार्थों के (देवः) स्वामी, पूजनीय, उनके उपास्य देवता (असि) है, (वसूनाम्) जिन्होंने २४ वर्ष पर्यन्त ब्रह्मचर्य से वेदादि विद्या पढ़ी हैं और ५ पृथिवी आदि लोकों के बीच में प्रत्यक्ष और व्यापक होके (वसुः) निवास करने और अपने में सबको निवास कराने हारे (असि) हैं। (अध्वरे) हिंसा करने के अयोग्य, धर्म युक्त, उपासनादि व्यवहारों में (चारुः) सर्वोत्कृष्ट, (अद्भुतः) अत्यन्त आश्चर्यरूप प्रशस्त गुण-कर्म-स्वभाव सहित, (मित्रः) सबके हितकारी, सुहृद्, सखा १० हैं। इस लिए हम लोग (तव) सब पर कृपा ही करने के स्वभाव से युक्त आपके (सप्रथस्तमे) सर्वोत्कृष्ट विस्तीर्ण विद्यादि शुभगुण और अत्यन्त आनन्दों के हेतुओं से संयुक्त (सख्ये) मित्रता के भाव और कर्मों में दृढ़ता से वर्त्तमान होकर (मा रिषाम) कदाचित् दूसरे मनुष्यादि प्राणियों के अनुपकार, दुःख और पीड़ा रूप हिंसा १५ करने हारे वा किसी दुष्ट से पिड़ित न होकर, सदा स्वयं आनन्दयुक्त रहकर, सब जीवों को आनन्द हो देते रहें।

"सब सज्जनों को विदित हो कि आज मैं इस आर्य्यावर्त देश के निवासियों के लिये बड़ी प्रसन्नता की बात को प्रकट करता हूं कि संवत् १९३६ माघ शुक्ल २, बृहस्पतिवार, के दिन यहां काशी २० में लक्ष्मीकुण्ड पर श्रीयुत महाराजे विजयनगराधिपति के स्थान में **"वैदिक यन्त्रालय"** नियत किया गया है; जिसमें वेदभाष्य (जो प्रथम डा० लाजरस साहब के यन्त्रालय में छपता था और तत्पश्चात् मुम्बई में छपा करता रहा) वह और व्याकरणादि शास्त्रों के विषय-प्रकाश युक्त पुस्तक मुद्रित हुआ करेंगे **इस** २५ **यन्त्रालय के अधिष्ठाता श्रीयुत स्वामी दयानन्द सरस्वती जी हैं और उनकी ओर से मैं बख्तावरसिंह जो कि मन्त्री आर्य्यसमाज शाहजहांपुर का था, प्रबन्धक नियत हुआ हूं।** इस में टाईप आदी उत्तम प्रकार की विलायती बनी हुई सामग्री कलकत्ते से मंगायी गयी है। इस यन्त्रालय से मुद्रित पुस्तकों में श्रेष्ठ कागज लगा ३० करेगा और अक्षर भी सुन्दर, स्पष्ट, और शुद्ध हुआ करेंगे।

अब तेरहवें अङ्क तक वेदभाष्य मुम्बई में छपकर आगे वहां से

उठके यहां काशी में आकर चौदहवें अङ्क से लेके सदा इसी वैदिक यन्त्रालय में मुद्रित हुआ करेगा। इसलिए जिन महाशयों को वेद-भाष्य आदि का मूल्य भेजना अथवा वहां से कोई पुस्तक मंगवाना हो तो उक्त ठिकाने में मेरे पास भेजा और मंगवाया करें।

—:o:—

५ [पूर्ण संख्या ३८९] पत्र

To,

Lala Mulraj, M. A,, officiating Extra Assistant Commissioner, Multan,
Benares. dated 16th February 1880[1]

१० Namaste,

Your letter, dated 11th February 1880, received. It has given me great pleasure to hear of your appointment as an Extra Assistant Commissioner. May God raise you still higher. As regards matters over here, the Lieutenant-
१५ Governor has as yet sent us no reply. The Magistrate Sahib verbally tells us to commence lecturing, but shrinks from giving the order in writing. We have come to know that the Lieutenant-Governor forwarded our application to the Magistrate for his remarks, and the Magistrate returned
२० it (about one week ago) saying that he had stopped the lectures on account of the Muharram procession, fearing lest a quarrel may not arise. We expect to get a reply in a day or two. We have not thought it proper to commence lectu-ring without a written order of the Local Government.
२५ This will settle the matter once for all.

We will commence our series of lectures with great earnestness. The press has been started and named Vedic Press. A notice to that effect is sent separately to-day. Namaste to all.

(Sd.) Dayananda Saraswati.

३०

१. माघ शु० ६, सोमवार, सं० १९३६।

[भाषानुवाद]

लाला मूलराज एम० ए० स्थानापन्न
ऐक्स्ट्रा असिस्टेंट कमिश्नर, मुलतान
बनारस, १६ फरवरी १८८०[1]

नमस्ते !

आपका पत्र ११ फरवरी १८८० का मिला। आपकी ऐक्स्ट्रा असिस्टेंट कमिश्नर पद पर नियुक्ति सुन कर मुझे बड़ी प्रसन्नता हुई। परमात्मा आप को और भी उन्नत करे। यहां का हाल यह है कि लाट साहब ने अभी तक हमें उत्तर नहीं दिया। मजिस्ट्रेट साहिब मौखिक रूप से हमें व्याख्यान आरम्भ करना कहते हैं पर लिखित आज्ञा के देने में संकोच करते हैं। हमें पता लगा है कि लाट साहब ने हमारा प्रार्थनापत्र मजिस्ट्रेट को उस की सम्मत्यर्थ भेजा था, और मजिस्ट्रेट ने (लगभग एक सप्ताह हुआ) उसे यह कह कर लौटा दिया था कि उस ने मुहर्रम मेले के कारण व्याख्यान बन्द किये थे, इस भय से कि कोई झगड़ा न उठ पड़े। हम एक या दो दिन में उत्तर की आशा रखते हैं। हमने स्थानीय सरकार की लिखित आज्ञा विना व्याख्यान आरम्भ करना उचित नहीं समझा। इस से इस बात का सदा के लिये निर्णय हो जायगा।

हम अपने व्याख्यानों का क्रम बड़े उत्साह से आरम्भ करेंगे। यन्त्रालय का आरम्भ कर दिया गया है। इस का नाम वैदिक यन्त्रालय रखा गया है। इस विषय का एक विज्ञापन आज पृथक् भेजा जाता है। सब को नमस्ते।[2]

ह० दयानन्द सरस्वती

—:o:—

पूर्ण संख्या ३९०] पारसल-सूचना[3]

[वैदिक यन्त्रालय के विज्ञापन]

—:o:—

१. माघ शु० ६, सोमवार, सं० १९३६।

२. मूलपत्र आर्यभाषा में था। उसका अंग्रेजी अनुवाद दि० गुरुकुल मैगजीन, गुजरांवाला, अक्तूबर-दिसम्बर, सन् १९०८, पृष्ठ २४८ पर छपा है। ला० मूलराज जी ने कहा था कि गुजरांवाला गुरुकुल के सञ्चालक ला० रलाराम जी की असावधानी से मूल पत्र चूहों से नष्ट किया गया।

३. इसकी सूचना पूर्णसंख्या ३८९ के पत्र के अन्तिम वाक्य में मिलती है।

[पूर्ण संख्या ३९१] पत्रांश

[मिस्टर सिनेट सम्पादक पायोनियर प्रयाग]

आप काशी आने का कष्ट न उठावें, मैं स्वयं ही प्रयाग आकर आप से मिलूंगा।[1]

—:o:—

५ ## [पूर्ण संख्या ३९२] पत्र-सारांश

उर्दू पत्र

मुन्शी समर्थदान मुम्बई।[2]

पुस्तकों का महसूल आदि अधिक लगा।

लगभग २० फरवरी १८८०

१० वनारस

—:o:—

[पूर्ण संख्या ३९३] लेख

श्राद्ध (ओरिजन) अर्थात् असली है। श्राद्ध शब्द के अर्थ श्रद्धा के हैं। पुत्र को माता पिता आदि की सेवा श्रद्धा से उनके जीवन पर्यन्त करना अवश्य है। परन्तु जो लोग मरे हुए माता पिता का १५ श्राद्ध करते हैं वह असली नहीं है क्योंकि जीते माता पिता आदि की सेवा श्रद्धा से करनी श्राद्ध कहाता है। मृतक के लिये पिण्ड देना व्यर्थ है क्योंकि मरे हुए को पिण्ड देने से कुछ लाभ नहीं होता।[3]

दयानन्द सरस्वती

—:o:—

२० १. देखो पं० घासीराम जी सम्पादित जी० च० पृष्ठ ५९७।

पायोनियर प्रयाग के सम्पादक मिस्टर सिनेट साहब ने श्री स्वामीजी महाराज को अंग्रेजी में १८ फरवरी सन् १८८० को जो पत्र भेजा था, उस के उत्तर में स्वामी जी ने उपर्युक्त पत्रांश लिखा था। मिस्टर सिनेट का मूलपत्र जो श्री मामराज जी लाये थे, अनेक बहुमूल्य पत्रों के साथ लाहौर २५ में देशविभाजन के समय नष्ट हो गया।

२. इस का संकेत मुंशी समर्थदान के पत्र में था। वह लाहौर में नष्ट हो गया।

३. किसी पुरुष ने सम्पादक थ्योसोफिस्ट को ८ फरवरी १८८० को एक

[पूर्ण संख्या ३९४] पत्र-सारांश[1]

[मुकुन्दसिंह जी छलेसर]

जो सत्यार्थप्रकाश राजा जयकृष्णदास जी की मारफत मुद्रित हुआ है। उसमें कई स्थलों पर वेदविरुद्ध लेख छप गया है। इसलिये श्राद्ध के विषय में जो मांस का विधान है। और मृतकों का श्राद्ध है वह भी वेदविरुद्ध है। क्योंकि आप को ज्ञात हो कि जो पञ्चमहायज्ञविधि शाके १७९६[2] आर्यप्रकाश यन्त्रालय मुम्बई में हम ने छपवाई थी उस में हमने मृतक श्राद्ध का खण्डन किया है। जो कि राजा जी के सत्यार्थ-प्रकाश[3] से एक वर्ष पूर्व प्रथम मुद्रित हुई है। अतः इस वेदविरुद्ध कर्म को आप कभी भी नहीं करें।

काशी[4] दयानन्द सरस्वती

—:०:—

[पूर्ण संख्या ३९५] पत्र-सूचना[5]

गोपालराव हरि फरुखाबाद।

लगभग १० मार्च १८८० [फाल्गुन कृ० ३० सं० १९३६]

—:०:—

पत्र लिखा। उसमें उनसे श्राद्ध विषय में उनकी और विशेष कर स्वामी दयानन्द सरस्वती की सम्मति मांगी थी। वह मूल और स्वामीजी की ओर से उसका पूर्वोक्त उत्तर थ्योसोफिस्ट मार्च १, १८८० [फा० कृ० ५ सं० १९३६] में छपा था।

१. यह पत्र सारांश भूमित्र शर्मा आर्योपदेशक लिखित द्वितीय भाद्रपद बदि १, सं० १९७४ वि० में भास्करप्रेस मेरठ में मुद्रित 'पितृ-यज्ञ-समीक्षा' में निर्दिष्ट है। ठा० मुकुन्दसिंह का पत्र, जिसके उत्तर में ऋषि दयानन्द ने यह पत्र लिखा था, तीसरे भाग में देखे।

२. अर्थात् वि० सं० १९३१, सन् १८७४।

३. सत्यार्थप्रकाश का मुद्रण सन् १८७५ में हुआ था।

४. पत्र में तिथि वा तारीख अङ्कित नहीं है। अतः हमने ऋ० द० के छठी बार काशी-निवास के प्रकरण में इसे रक्खा है।

५. इस पत्र का संकेत गोपालराव के १८ मार्च ८० [फा० शु० ७ सं० १९३६] में था। यह पत्र लाहौर में नष्ट हो गया।

[पूर्ण संख्या ३९६] पत्रांश

Though I am very anxious that my autobiography which you are publishing in your journal, should be completed, I have not yet been able to give the necessary time to
५ it. But as soon as possible I will send the narrative to you............[1]

[भाषानुवाद]

यद्यपि में बहुत उत्सुक हूं कि मेरी स्वयंलिखित आत्मकथा जिसे आप अपनी पत्रिका में प्रकाशित कर रहे हैं, पूर्ण हो जावे तथापि अभी उसे
१० आवश्यक समय नहीं दे सका। किन्तु जितना शीघ्र हो सकेगा मैं आप को आत्मकथा भेज दूंगा ...

—:o:—

---

१. यह पत्रांश थ्योसोफिस्ट ऐप्रिल सन् १८८० चैत्र १९३७ के पृ० १९० पर छपा है। इससे पहले निम्नलिखित सूचना है। आवश्यक समझकर वह भी छापी जाती है—

१५ The foolish embargo laid upon Swamiji Dayanand Saraswati by Mr. Wall, the Benares Magistrate, has at last been raised, and that learned and eloquent Pandit was to have resumed his lectures on the evening of the 21st March. Before Granting the permission, which the Swami ought never
२० to have been obliged to ask. Mr. Wall had a conversation of nearly an hour with him. The excuse, offered by the lieutenant Governor for the action in the premises, was that it was not safe for the Swami to lecture in the mohuram holidays. The Subject of the opening discourse was "the crea-
२५ tion"

अर्थात् "बनारस के मैजिस्ट्रेट मिस्टर वाल द्वारा स्वामी दयानन्द के ऊपर लगाई गई रोक अन्त में उठा ली गई और वह विद्वान् और वाग्मी पण्डित २१ मार्च सायङ्काल को अपना व्याख्यान पुनः आरम्भ करनेवाले थे। अनुमति देने से पूर्व, जो अनुमति मांगने के लिये स्वामीजी कभी भी विवश नहीं किये जाने चाहिये थे, मि० वाल ने उनके साथ लगभग एक
३० घण्टा वार्तालाप किया। लैफ्टिनेण्ट गवर्नर ने इस कार्य के लिये जो बहाना बताया था, वह यह था कि मुहर्रम के त्यौहार पर व्याख्यान देना स्वामी

[पूर्ण संख्या ३९७] पत्र-सूचना[1]

[केशवलाल निर्भयराम सूरत]
संस्कारविधि की छपाई के हिसाब के सम्बन्ध में।
३१ मार्च १८८० [चैत्र कृ० ५ बुध सं० १९३६] काशी।

—:०:—

[पूर्ण संख्या ३९८] विज्ञापन-सारांश[2] ५

हम वैशाख कृष्णा ११ सं० १९३७[3] को काशी से चले जायेंगे। यदि किसी को अपना कोई संशय मिटाना हो तो हमारे स्थान पर आकर मिटा सकता है।

दयानन्द सरस्वती

—:०:—

[पूर्ण संख्या ३९९] पत्र १०

॥ ओम् ॥

सं० १९३७ चैत्र शुदी १२ गुरुवार।[4]
राजा शिवप्रसादजी आनन्दित रहो !

आप का चैत्र शुक्ल ११ बुधवार[5] का लिखा पत्र मेरे पास आया। देख के अभिप्राय विदित हुआ। उस दिन[6] आप से और १५

जी के लिये सुरक्षा की दृष्टि से ठीक नहीं था, व्याख्यान का विषय सृष्टि था।"

१. इस पत्र-सूचना का संकेत केशवलाल निर्भयराम के ५ अप्रैल १८८० के पत्र में है। यह पत्र तीसरे भाग में छपा है।

२. यह विज्ञापन का सारांश पं० देवेन्द्रनाथ सङ्कलित जीवनचरित, २० पृष्ठ ६०६ पर मुद्रित है। जीवनचरित के अनुसार यह एक मास पूर्व दिया गया था। इस विज्ञापन का संकेत ऋ० द० ने भ्रमोच्छेदन (द्र० दयानन्दीय लघुग्रन्थसंग्रह, पृष्ठ २४५) में इस प्रकार किया है – जब मेरी यात्रा सुनी तभी पत्र भेज के ।

३. ५ मई, बुधवार, सन् १८८०। ४. २२ एप्रिल, १८८०। २५

५. २१ एप्रिल, १८८०।

६. अर्थात् १९ दिसम्बर १८७९। देखो पं० लेखरामकृत जीवनचरित हिन्दी सं० पृष्ठ १८२।

मुझ से परस्पर जो-जो बातें हुई थीं वे तब आपको अवकाश कम होने से मैं न पूरी बात कह सका और न आप पूरी बात सुन सके, क्योंकि आप उन साहबों से मिलने को आए थे। आप का वही मुख्य प्रयोजन था। पश्चात् मेरा और आपका कभी समागम न ५ हुआ जो कि मेरी और आपकी बातें उस विषय में परस्पर होतीं। अब मैं आठ दश दिनों में पश्चिम को जाने वाला हूं। इतने समय में जो आपको अवकाश हो सके तो मुझ से मिलिये। फिर भी बात हो सकती है। और मैं भी आपको मिलता, परन्तु अब मुझको अवकाश कुछ भी नहीं है। इससे मैं आप से नहीं मिल सकूंगा। १० क्योंकि जैसा सम्मुख में परस्पर बातें होकर शीघ्र सिद्धान्त [ज्ञात] हो सकता है, वैसा लेख से नहीं, इसमें बहुत काल की अपेक्षा है।

आपका प्रश्न	मेरा उत्तर
१. आपका मत क्या है ?	१. वैदिक।
२. आप वेद किसको मानते १५ हैं ?	२. संहिताओं को।
३. क्या उपनिषदों को वेद नहीं मानते ?	३. मैं वेदों में एक ईशावास्य को छोड़ के अन्य उपनिषदों को नहीं मानता[1]। किन्तु अन्य सब उपनिषद् ब्राह्मण ग्रन्थों में २० है। वे ईश्वरोक्त नहीं है।

---

१. अर्थात् ईशोपनिषद् को स्वामी जी महाराज यजुर्वेद के अन्तर्गत मानते हैं। इसी कारण पूर्णसंख्या ७४ के विज्ञापन के पृ० ९८ पंक्ति ७-९, में जो १० उपनिषदें गिनाई हैं, उन में ईश का उल्लेख नहीं है। दश संख्या की पूर्ति 'मैत्रेयी' को गिन कर की है। यह भी ध्यान रहे कि स्वामी २५ जी महाराज ईशोपनिषद् के माध्यन्दिन संहितानुसारी पाठ को ही वेदान्तर्गत मानते हैं, काण्व शाखानुसारी पाठ को नहीं। क्योंकि श्री स्वामी जी महाराज माध्यन्दिन संहिता को ही तदन्तर्गत प्रतीक निर्देशों को छोड़कर मूल वेद मानते हैं। उसी का उन्होंने भाष्य किया है। काण्वसंहिता को उसकी शाखा अर्थात् व्याख्यात्मक पाठ मानते हैं। इसलिये उन के मत में ३० काण्वशाखानुसारी ईशोपनिषद् माध्यन्दिन ईशोपनिषद् की व्याख्यारूप होने से उसकी पृथक् गणना की कोई आवश्यकता नहीं रहती।

आपका प्रश्न	मेरा उत्तर
४. क्या आप ब्राह्मण पुस्तकों को वेद नहीं मानते ?	४. नहीं, क्योंकि जो ईश्वरोक्त है वही वेद होता है जीवोक्त नहीं। जितने ब्राह्मण ग्रन्थ हैं वे सब ऋषि मुनि प्रणीत और संहिता ईश्वर प्रणीत है। जैसा ईश्वर के सर्वज्ञ होने से तदुक्त निर्भ्रान्त सत्य और मत के साथ स्वीकार करने योग्य होता है वैसा जीवोक्त नहीं हो सकता क्योंकि वे सर्वज्ञ नहीं। परन्तु जो वेदानुकूल ब्राह्मण ग्रन्थ हैं उनको मैं मानता और विरुद्धार्थों को नहीं मानता हूं। वेद स्वतःप्रमाण और ब्राह्मण परतः प्रमाण हैं। इससे जैसे वेदविरुद्ध ब्राह्मण ग्रन्थों का त्याग होता है वैसे ब्राह्मण ग्रन्थों से विरुद्धार्थ होने पर भी वेदों का परित्याग कभी नहीं हो सकता क्योंकि वेद सर्वथा सब को माननीय ही हैं।[1]

अब रह गया यह विचार कि जैसा संहिता ही को ईश्वरोक्त निर्भ्रान्त सत्य वेद मानना होता है वैसा ब्राह्मण ग्रन्थों को [क्यों] नहीं, इसका उत्तर मेरी बनाई ऋग्वेदादिभाष्यभूमिका के ९ नववें पृष्ठ से लेके ८८ अट्ठासी पृष्ठ तक वेदोत्पत्ति, वेदों का नित्यत्व, और वेदसंज्ञाविचार विषयों को देख लीजिये। वहां मैं जिसको

१. प्रश्न और उत्तर का यह भाग एक दो शब्दों के अन्तर से भ्रमोच्छेदन (द्र० दयानन्दीय लघुग्रन्थ संग्रह के अन्तर्गत पृष्ठ २५४-२५५)में भी छपा है।

जैसा मानता हूं, सब लिख रक्खा है। इसी को विचार पूर्वक देखने से सब निश्चय आपको होगा कि इन विषयों में जैसा मेरा सिद्धान्त है वैसा ही जान लीजियेगा।[1]

(दयानन्द सरस्वती) काशी।

—:०:—

५ [पूर्ण संख्या ४००] **पत्र**

राजा शिवप्रसाद जी आनन्दित रहो!

आपका पत्र[2] मेरे पास आया देखकर अभिप्राय जान लिया। इस से मुझ को निश्चय हुआ कि आपने वेदों से लेके पूर्वमीमांसा[3] पर्यन्त विद्या पुस्तकों के मध्य में से किसी भी पुस्तक के शब्दार्थ १० सम्बन्धों को जाना नहीं है। इसलिये आपको मेरी बनाई भूमिका[4] का अर्थ भी ठीक-ठीक विदित न हुआ, जो आप मेरे पास आके समझते तो कुछ समझ सकते। परन्तु जो आपको अपने प्रश्नों के प्रत्युत्तर सुनने की इच्छा हो तो स्वामी विशुद्धानन्द सरस्वती व बालशास्त्री जी को खड़ा करके सुनियेगा तो भी आप कुछ-कुछ १५ समझ लेंगे, क्योंकि वे आप को समझावेंगे तो कुछ आशा है समझ

---

१. मूल पत्र अब हमारे संग्रह में सुरक्षित है। इस पर अधिकांश श्री स्वामी जी के हाथ का संशोधन है। इसी की प्रतिलिपि राजा जी को भेजी गयी होगी।

२. राजा शिवप्रसाद जी का यह पत्र सं० १९३७ चैत्र शुक्ला पूर्णिमा २० (२४ अप्रेल १८८०) का है। इसे तीसरे भाग में देखें।

३. इस स्थल पर राजा जी ने अपने निवेदन में एक टिप्पण दिया है। उसमें उन्होंने इस बात पर हास्य किया है—'जान पड़ता है कि स्वामी जी महाराज ने पूर्वमीमांसा ही तक देखा है उत्तर मीमांसा नहीं देखा, नहीं तो ऐसा न लिखते' (निवेदन (१) पृष्ठ १२, टि० ९)। राजा जी इस पर २५ बड़े प्रसन्न दीखते हैं, परन्तु यह भी उनका अज्ञान है। उन्हें यह ज्ञान नहीं कि अन्तिम आर्षग्रन्थकार जैमिनि मुनि हुए हैं। उन्हीं का बनवाया पूर्व-मीमांसा है। ग्रन्थगणना में चाहे वह पहले गिना जाय वा पीछे, परन्तु रचयिता की दृष्टि से जैमिनि ही अन्तिम है। अत एव ऋषि का उपर्युक्त लेख सत्य ही है।

३० ४. अर्थात् ऋग्वेदादिभाष्यभूमिका।

जायेंगे। भला विचार तो कीजिये कि आप उन पुस्तकों को पढ़े विना वेद और ब्राह्मण पुस्तकों का कैसा आपस में सम्बन्ध, क्या-क्या उन में हैं और स्वतःप्रमाण तथा ईश्वरोक्त वेद और परतः प्रमाण और ऋषि मुनि कृत ब्राह्मण पुस्तक हैं इन हेतुओं से क्या-क्या सिद्धान्त सिद्ध होते और ऐसे हुए विना क्या-क्या हानि होती है इन विचाररहस्य की बातों को जाने विना आप कभी नहीं समझ सकते। ५

सं० १९३७ मि० वै० व० सप्तमी शनिवार[1]

दयानन्द सरस्वती

—:०:—

[पूर्ण संख्या ४०१,४०२,४०३] पत्र-सूचना १०

[पं० ज्वालादत्त फर्रुखाबाद]

[ज्वालादत्त को बुलाने के लिये ३ पत्र भेजे][2]

—:०:—

[पूर्ण संख्या ४०४] पत्र-सूचना[3]

बख्तावरसिंहजी आनन्दित रहो

[4] १५

वैशाख कृष्णा १४ सं० १९३७[5]	दयानन्द सरस्वती

—:०:—

१. १ मई, १८८०।

२. आर्यसमाज फर्रुखाबाद के १७-५-१८८० (वैशाख शु० ८ सोम सं० १९३७) के पत्र में ज्वालादत्त को बुलाने के लिये श्री स्वामी जी के ३ पत्र पहुंचने का संकेत है। यह पत्र तीसरे भाग में देखें। २०

३. इस पत्र की सूचना अगले पूर्णसंख्या ४०५ के पत्र के प्रथम वाक्य से मिलती है।

४. आगे पूर्णसंख्या ४०९ पृष्ठ ४३८, पं० ६-७ में लिखा है—'जब हम लखनऊ में थे तब हमने लिखा था कि रमाधार बाजपेई के पास जो-जो पुस्तक वे लिखें भेज दिया करो।' क्या यह लेख इसी पत्र में था अथवा अन्य में, यह अज्ञात है। २५

५. ८ मई, १८८०।

[पूर्ण संख्या ४०५] पत्र

मुंशी बखतावरसिंहजी आनन्दित रहो[1]

कल एक पत्र आपके पास भेजा है पहुंचा होगा। आज यहां[2] आर्यसमाज का आरम्भ होगा। फिर दो दिन और व्याख्यान देंगे।
५ बुधवार के रोज व्याख्यान देंगे वा न देंगे, परन्तु रहेंगे यहीं। बृहस्पति [वार] के प्रातःकाल कान्हपुर कम्पू को जायंगे।[3] खरबूजे यहां अब तक चले ही नहीं ठीक-ठीक। और जो चले हैं वे पूर्ववायु से फीके भी हैं जैसे कि काशी में। रामाधार वाजपेयी से हमने कह दिया कि जब अच्छे आने लगें तब तुम्हारे पास भेज देंगे।

१० पण्डित इन्द्रनारायण के पास नीचे लिखे हुए पुस्तक भेज देना—

ऋग्वेद का अङ्क आठवां। दशवां ८।१० — १ सत्यार्थप्रकाश
— १ संस्कारविधि
यजुर्वेद का अङ्क आठवां। दशवां। बारहवां ८।१०।१२। — १ वर्णोच्चारणशिक्षा
१५ — १ संस्कृतवाक्य प्र०
वहां रह गये हैं सो सेठ सेवाराम कालूराम की दूकान में भेज देना कान्हपुर में — १ भ्रान्तिनिवारण
— १ आर्योद्देश्यरत्नमाला

और स्त्रैणताद्धित के पत्रे यहां भीमसेन ने नहीं रखे हैं। और किस पत्रे में कहां से आगे लिखा जायगा कि कौन पंक्ती कहां तक
२० लिखा गया और कहां से लिखना होगा, वहां चिन्ह कर देना। जिस-जिस चिट्ठी में जो-जो लिखें उस-उसका ख्याल रखा करना। फिर दूसरी वखत वह विषय न लिखेंगे। पण्डित इन्द्रनारायण ने ५)रु० हमारे पास जमा किये। उनमें –)॥ टिकट का और ४॥।=)॥ पुस्तकों के का दाम जमा हुआ। –)॥ इस के आगे जो
२५ महमूल लगे सो उन से वसूल कर लेना। वा और जो रामधार वाजपेयी के पास पुस्तक भेजें उनके साथ भेज देना तो रामधार को लिख भेजना कि ये पुस्तक पण्डित इन्द्रनारायण के पास शीघ्र

---

१. पत्रलेखक ने लिखा है और श्री स्वामी ने अनेक स्थानों पर बढ़ाया तथा शोधा भी है।

३० २. अर्थात् लखनऊ में।

३. अर्थात् १३ मई १८८० को। कान्हपुर कम्पू = कानपुर छावनी।

भेज देवें।

और जो ब्रह्मचारी काशी में रसोई करता था वह भाग उठा था सो यहां मिला, हमारे पास है।

भैरव कहार एक रुपया नरसिंह थापा को दिलाता है। सो भीमसेन उसके पास नेपाली रानी के स्थान में जाके रसीद लेके १)रु० उसको देदे। और चपरासी को पहेचान करवादे। जब भैरव उस को रुपया दिलवावे तब उसके पास पहुंचा दिया करे।

मिती वैशाख कृष्ण ३० सं० १९३७।[1]   दयानन्द सरस्वती[2]

—:o:—

[पूर्ण संख्या ४०६]   पत्र

मुन्शी बखतावरसिंह जी आनन्दित रहो!

वैशा[ख] सुदी ११[3] को कान्हपुर से फर्रुखाबाद आनन्द में पहुंच कर टोकाघाट पर कालीचरण रामचरण के बाग में ठहरे हैं। पिछले पत्र में वर्तमा[न] जो लिखा है सो सब करते होंगे। और कलकत्ते से टैंपादि आ गया होगा तो वेदभाष्य का आरम्भ कर दिया होगा और जो न आया हो तो चिट्ठी के देखते हि कलकत्ते जाके टैंपादि लाके शीघ्र ही वेदभाष्य का आरम्भ चलाओ। और दूसरे पुस्तक का सन्धिविषयक का भी शीघ्र-शीघ्र छपना चाहिये। व्यवहारभानु का पुस्तक छप गया हो तो भेज दो। और पिछले पत्र के लिखे मुताबिक सब काम करो। और पिछले पत्र का जवाब लिखो। सबसे नमस्ते कह देना।

मिती वैशाख शुक्ल १२ शुक्रवार सं० १९३७।[4]

दयानन्द सरस्वती

—:o:—

---

१. ता० ९ मई, सन् १८८०, रविवार। लखनऊ से बनारस को भेजा गया।

२. ता० २४ जुलाई सन् १९४५ को म० मामराज जी ने लाला राम-रामशरणदास मेरठ वालों के पुराने पत्रों में से खोजा। मूल पत्र हमारे संग्रह में सुरक्षित है। जीवनचरितों में लखनऊ से कानपुर जाने का उल्लेख नहीं है। वह इस पत्र से सिद्ध है।।

३. २० मई, १८८०।

४. २१ मई,१८८०, फर्रुखाबाद। मूलपत्र हमारे संग्रह में सुरक्षित है।

[पूर्ण संख्या ४०७] पत्र-सारांश

[पादरी हरप्रसाद, फर्रुखाबाद]

बड़े पादरी साहब के साथ आइये। आपकी शङ्काओं का समाधान किया जावेगा।[1]

—:o:—

५ [पूर्ण संख्या ४०८] पत्र-सूचना

मु० बखतावरसिंह बनारस।[2]

६ जून १८८०।[3]

—:o:—

[पूर्ण संख्या ४०९] पत्र

ओ३म्

१० मुन्शी बखतावरसिंह जी आनन्दित रहो!

दशमी [१०] जून[4] का लिखा हुआ पत्र तुमारा आया वर्तमान विदित हुआ। क्या डेढ़ महीना हुआ जब मैं चला था, तब व्यवहारभानु थोड़ा सा बाकी रहा था। क्या अब तक डेढ़ महीना हुआ बाकी ही पड़ा रहा है। और सन्धिविषय का भी एक ही फर्मा १५ तैयार हुआ। व्यवहारभानु रहा खण्डित। सन्धिविषय का एक ही फर्मा। अब कहो कोई ग्रन्थ पढ़ने के लायक हुआ? अब जल्दी व्यवहारभानु का बाकी फर्मा तैयार करके जहां जहां भेजना है

---

१. यह पत्रसारांश 'फर्रुखाबाद का इतिहास' के पृष्ठ १५२ पर छपा है। यह पादरी हरप्रसाद के ऋ० द० को लिखे गये जिस पत्र के उत्तर में २० दिया था, वह ७ जून सन् १८८० का स्वामी जी के नाम था। अत: यह उत्तर भी उनकी ओर से लिखा गया होगा, यह मानकर हमने इसका यहां उल्लेख किया है। पादरी हरप्रसाद का ७ जून १८८० का पत्र तो 'फर्रुखाबाद का इतिहास' में नहीं छपा है, परन्तु उनका १८ जुलाई सन् १८८० का एक पत्र जो ऋषि दयानन्द के नाम लिखा गया था, उसी ग्रन्थ में पृष्ठ २५ १५२-१५३ पर छपा है। इसे तीसरे भाग में देखें। इस का उत्तर आर्यसमाज के मन्त्री कालीचरण ने दिया था। वही ग्रन्थ, पृष्ठ १५४-१५५।

२. इस पत्र के संकेत वाला पत्र लाहौर में नष्ट हो गया।

३. ज्येष्ठ शुक्ल १, बुध, सं० १९३७।

४. ज्येष्ठ शुक्ल २, बृहस्पतिवार, सं० १९३७।

भेज दो। और वेदभाष्य का काम भी चलता रहे।

फौंडरी का बन्दोबस्त कर लिया अच्छा हुआ। अभयलाल व चुन्नीलाल का ढीलापन मैं खूब जानता हूं। जब किसी दूसरे साहूकार के यहां काम होगा तब वहां से उठा लिया जावेगा। और भीमसेन को भेजकर तीन अशर्फी और थोड़ा सा सोना है मंगवा ५ लो। अथवा जो अरंडीये[1] उस्में हिसाव किताव करें उनसे कह दो कि हम बाजार में बेंच लेंगे। तो बाबू अविनाशीलाल[2] चौक [खं]भे वाले के साथ जो अपना सभासद् आर्य स० है बेच लेना। और रुपया अलग ही जमा रखना खर्च मत करना। क्योंकि वह अरंडीन उस्के ही लिये हैं। वेदभाष्य का फर्मा हमने देखा तुम भी मिला १० लो। बम्बई के फर्मे से आध अंगुल कम है सो जिल्द बांधने में कैसा होगा। और जड़ में आर्वल भी कम रहना है। इसलिये चारों ओर बराबर रहना चाहिये जैसा कि बम्बई के छापे में है। परन्तु हां जब वैसा कागज इतना लम्बा चौड़ा नहीं मिलता तो इसी में छपवाना होगा। शिवप्रसाद का खण्डन[3] हमने तैयार कर लिया है १५ शोध के भेज देंगे। और उस्के टाटल पेज पर (रचिता) शब्द (रचित:) अर्थात् (ता को त:) कर दो।

क्या दफतरी ने नौकरी छोड़ दी? मुझ को मालूम होता है कि अब काम अच्छी तरह चलेगा और तुम चलाओगे। कल फर्रुखाबाद के कंपू[4] में भी शाखा समाज स्थापित हो गया है। जो-जो पुस्तक २० जैसराज गोटीराम के नाम पर फर्रुखाबाद भेजो वह कालूराम सेवाराम के नाम पर उसी दूकान पर कानपुर कम्पू[4] में रेल पर भेज दिया करो। वहां से फर्रुखाबाद चला आवेगा। और उनको

---

१. अरंडीये या अरंडीन उन कारीगरों का नाम है जो दुपट्टा व अरडी कपड़ा बनाते हैं। उनको ही देने के लिये यह रुपये अलग रखवाये गये थे। २५ देखो पत्र पूर्णसंख्या ४१०, पृष्ठ ४३९।

२. इन्हीं बा० अविनाशीलाल ने स्वामी जी कृत पञ्चमहायज्ञविधि मूलमात्र छपवाई थी। उस में जीवित श्राद्ध के स्थान में मृतक श्राद्ध का विधान छपवाया था। देखो हमारा 'ऋषि दयानन्द के ग्रन्थों का इतिहास' में पृष्ठ ५०। ३०

३. अर्थात् 'भ्रमोच्छेदन' नामक ग्रन्थ। ४. अर्थात् फतेहगढ़ में।

चिट्ठी में भी लिख दो कि तुम फर्रुखाबाद भेज दिया करो। और जब फर्रुखाबाद तक सूधा रेल हो जावें तब जैसराज गोटीराम की दुकान पर सूधा फर्रुखाबाद ही भेज दिया करो।

मुन्शी इन्द्रमणि के पास रुपये भेजे या नहीं उनका जवाब ५ लिखो। और न भेजा हो तो जितना उनने हिसाब करके लिखा हो भेज दो। जब हम लखनऊ में थे तब हमने लिखा था[1] कि रामधार वाजपेई के पास जो-जो पुस्तकें वे लिखें भेज दिया करो। सो तुमने नहीं भेजीं। शायद तुम काम काज में भूल गये होगे। ऐसा न होना चाहिये। उनने तुमारी शिकायत लिखी है। वह कार्ड भी तुमारे १० पास भेजते हैं देख लेना। जब हम यहां से कहीं को जावेंगे, तुमको इत्तला करेंगे।

और सन्धिविषय जो हम ने शुद्ध कर लिखा है सो भी भेज देवेंगे। जैसी कि स्याही वेदभाष्य में तुमने लगवाई है ऐसी ही लगती रहे। और अभी ये अङ्क आये हैं। भूल चूक देखके पीछे से १५ लिखेंगे। और भीमसेन से व्यवहारभानु में शुद्धाशुद्ध पत्र लिखवाके साथ छपवा के लगा दो। क्योंकि उस्में बहुधा शुद्ध अशुद्ध है। और वेदभाष्य के पत्रे जो कमती होते हैं वे टाटल पेज पर नोटिस लगवा दो कि इतना चौड़ा लम्बा कागज नहीं मिलता जो कि बम्बई के बराबर हो। इसलिये इसी प्रकार के कागज से छपा २० करेगा। हम आनन्द में हैं आप आनन्द में हूजिये। और समाज आदि का सब काम अच्छे प्रकार चले। भीमसेन से कह दो कि व्याख्यान अच्छे प्रकार दिया करे। और अपने पढ़ने पढ़ाने व शोधने में होशियारी रखे। पण्डित सूबेराव जी और हरि पण्डित[2] जी से हमारा नमस्ते कह देना। पं० अमरनाथ का शरीर आरोग्य

---

२५ १. यह निर्देश सम्भवत: ऋ० द० ने वै० कृ० १४, सं० १९३७ (८ मई १८८०) के अनुपलब्ध पत्र, जिसे पूर्णसंख्या ४०४, पृष्ठ ४३३ पर संकेतित किया है, में लिखी होगी। अथवा सम्भवत: अन्य किसी अज्ञात पत्र में लिखी होगी।

२. पं० सूबेराव और हरि पण्डित का उल्लेख अगले आषाढ़ कृ० २ ३० सं० १९३७, पूर्णसंख्या ४१० के पत्र में भी है। हरि पण्डित महाराजा विजयनगर की बनारस कोठी के कामदार थे। द्र०—आगे आषाढ़ शु० ११, सं० १९३७ (१८ जुलाई १८८०) पूर्णसंख्या ४२१ का पत्र।

हो गया है वा नहीं। वहाँ जो कारवाई जो कुछ हुआ करे आठवें दिन लिख भेजा करो। और हमको जब जरूरत होगी तब हम भी लिखेंगे। इति

ज्येष्ठ शुक्ल ६ सं० १९३७।[1] दयानन्द सरस्वती[2]

—:o:—

[पूर्ण संख्या ४१०] पत्र

ओम्

मुंशी ब[खतावरसि]ंह जी आनन्दि[त] रहो।[3]

आज रजस्टरी करके राजा शिवप्रसाद का उत्तर यहां से रवाना करेंगे। उस के पहुंचते बखत ही रसीद भेजनी। इस पुस्तक को प्रथम भीमसेन देखकर कम्पोजीटर को समझा देवे। कहीं टूट फूट अशुद्ध न होने पावे। नोट जैसा कि इस में है वैसा ही छपे। और इस की भी, २,००० दो हजार कापी छपवानी।—) मूल्य। और वेदभाष्य के साथ जहां-जहां भेजना योग्य समझें वहां भी भेजना। [सब आर्यस]माजों में भेज देना। और [संन्यासि]यों के पास भी। और जो भाष्य के गाहक योग्य हैं उन [सब] के पास [एक]एक पुस्तक भेज देनी। सब कालेज ग[वर्नमेण्ट स्कूलों] और सरकारी पुस्तकालय में भी भेजना॥

तुमारे लिखे प्रमाण सीसा (टैप आदि) के लिए सेठ निर्भयराम से कह दिया है। जैसी तुम लिखो [गे वैं]सी कलकत्ते से आजावेगी। परन्तु प्रथम कलकत्ते में सौ रुपैये जैसी [राम गुट] राम की दूकान पर भेज दो। उन्हीं में से जो-जो चीजें तुम को चाहने पड़गी सो-सो वे भेज दिया करेंगे। और जो तुमने लिखाके अभयराम चुन्नीलाल अच्छी तरह से बन्दोबस्त नहीं रखते उसके लिए वहां काशी में एक

---

१. ता० १४ जून सन् १८८० सोमवार को फर्रुखाबाद से बनारस को भेजा। इस पत्र की आरम्भ की २॥ पंक्ति दूसरे लेखक की हैं, शेष पत्र पं० गणेशप्रसाद शर्मा फर्रुखाबाद वालों के हाथ का लिखा हुआ है। हस्ताक्षर ऋषि के हैं।

२. जुलाई सन् १९४५ में मामराज जी ने लाला रामशरणदास जी रईस मेरठवालों के पत्रों में से खोजा। मूलपत्र हमारे संग्रह में सुरक्षित है।

३. इस पत्र पर अनेक स्थलों में श्री स्वामी जी ने स्वहस्त से संशोधन किया है।

साहूकार के पास रुपैये जमा करने के लिये यहां बन्दोबस्त किया है। उसी की दो[का]न* पर जमा करना। और अभयराम चुन्नीलाल के यहां केवल सौ रुपैये बाकी रहने भी देना जिस में [लेन दे]न न टूटे। फिर दिवाली पर हिसाब करके सब चुका लेना।
५ तुमने जो पारसल भेजा ठीक-ठीक पहुंचा। परन्तु उसका डाक महसूल बहुत क्यों लगा। जिस कारीगर ने ये दुपट्टा और अरंडी बनाई है उसको ३ रुपैये इनाम दे देना। मैं खूब जानता हूं कि तुम तन मन धन से काम करते हो। परन्तु मेरे जरूरी वार-वार लेख से कुछ सन्देह न करना। क्योंकि तुम अपना और मेरा काम [दो]
१० नहीं समझते। सन्धिविषय और वेदभाष्य [के पत्रे] आप ने मंगवाये। वे इस बखत राजा शिवप्रसाद के [उत्तर देने से फु]रसत नहीं मिली। इस वास्ते नहीं पहुंचे। आगे ......

जो[1] भैरव कंहार हमारे साथ आया था .... [उस] ने कलमदान खोल १॥) वा २॥) रुपैये चोर लिये थे। इस [लि]ये उसको
१५ जितना मासिक चढ़ा था दिया। और म[ार्ग] [ख]रच ॥।—) आने देकर यहां से निकाल दिया। जब तक यह भ्रमोच्छेद[न]* ग्रन्थ छपके बाहर न हो तब तक किसी को मत दिखलाना। जब छप जाय तब काशीराज, राजा शिवप्रसाद, विशुद्धानन्द, बाल शास्त्री और राय शंकटाप्रसाद की लायब्रेली तथा पण्डित सुबेराव औ[र]
२० हरि पण्डित जी को भी एक पुस्तक दे देना। और जिस-जिस को योग्य जानो उस-उस को भी देना। बाकी मूल्य से देना। सब से हमारा न[मस्ते क]ह देना। हम बहुत प्रसन्न हैं। आप लोग सब प्र[सन्न रहि]ये।

संवत् १९३७ आषाढ़ कृष्ण २ गुरुवार[2] [दयानन्द सरस्वती]

:o:—

२५ **[पूर्ण संख्या ४११] रजिस्टर्ड पारसल**

[राजा शिवप्रसाद का उत्तर=भ्रमोच्छेदन पुस्तक भेजा][3]

---

१. 'जो भैरव' से आगे सारा लेख ऋषि के अपने हाथ का ही है।

* इस चिह्न से परिचिह्नित कोष्ठों को छोड़ कर शेष सब कोष्ठों के स्थान पर फटा हुआ है। हमने कोष्ठों में अपनी ओर से पूर्ति की है।

३० २. २४ जून १८८०, फर्रुखाबाद। मूलपत्र हमारे संग्रह में सुरक्षित है।

३. इस रजिस्टर्ड पारसल की सूचना ऋ० द० के पूर्व मुद्रित पूर्णसंख्या

सं० १९३७, आषाढ़ कृष्ण २ गुरुवार[1]

—:०:—

[पूर्ण संख्या ४०२] पत्र

स्वस्ति श्रीमच्छ्रेष्ठोपमार्हायै श्रुतशास्त्रविद्याभ्यासापन्नायै श्रीयुतरमायै दयानन्दसरस्वतीस्वामिन आशिषो भूयासुस्तमाम्।

शमत्रास्ति। तत्रत्यं भवदीयमेधमानं च नित्यमाशासे। ५

अभ्यस्तसंस्कृतविद्याया भवत्याः शुभां कीर्ति निशम्योत्पन्नस्वान्तानन्देन मया श्रीमतीम्प्रति लेखद्वाराभिप्रायं प्रकाश्यैवमेव भवत्या अभिप्रायं विज्ञातुमिच्छामि सद्यः स्वाभिप्रायविज्ञापनेन मामलङ्करोतु।

इदानीमग्रे च भवती किं किं कर्त्तुं चिकीर्षति। किं यथा लोक- १० श्रुतिरस्ति सा ब्रह्मचारिणी वर्त्तत इतीदमेवं विद्यते न वा। सा यत्र कुत्र जनतायां सुशोभितं शास्त्रोक्तलक्षणप्रमाणान्वितं विद्वदाह्लादकरं वक्तृत्वं करोतीत्येत्तथ्यं न वा। श्रुतं मया सा स्वयंवरविधिना विवाहाय स्वतुल्यगुणकर्म्मस्वभावसहितं कुमारं पुरुषोत्तममन्विच्छतीति सत्यमाहोस्विन्न। किमेतदकृत्वा ब्रह्मचर्य्यं स्थातुमशक्यमस्ति। १५

यथाऽऽर्य्यावर्तीयाः सत्यो विदुष्यो गार्ग्यादयः कुमार्य्यो ब्रह्मचर्य्ये स्थित्वा स्त्रीजनादिभ्यो यावान् सुखलाभः प्रापित[वत्य]स्तथा तावान् विवाहे कृतेऽनेकप्रतिबन्धकप्राप्त्या प्रापितुमशक्यः। एवं सत्यपि स्वसमानवरं पुरुषं प्राप्य विवाहं कृत्वा यथाऽनेकाः स्त्रियः २० सन्तानोत्पत्तिपालनस्वगृहकृत्यानुष्ठाने प्रवर्त्तन्ते तथैव भवत्या इच्छास्ति वा पुनरपि कन्यकाभ्योऽध्यापनस्य स्त्रीभ्यः सुशिक्षाकरणेच्छास्ति। श्रीमती बंगदेशनिवासं कृत्वाऽन्यत्र यात्रां न करोति किमत्र कारणम्। यावदुपकारः सर्वत्र गमनागमनेन जायते न तादृगेकत्र स्थिताविति निश्चयो मे। २५

यद्यत्रागमनाभिलाषास्ति चेत् तर्ह्यागम्यतां, यावानस्यां यात्रायां मार्गे धनव्ययो भविष्यति तावान् भवत्या अत्र प्राप्तेऽवश्यं लभ्येत। यद्याजिगमिषाऽत्र वर्त्तते तर्हि ततो गमनात्प्राक् पत्रद्वारा समयो विज्ञाप्यतामतोऽत्र भवत्याः स्थित्यर्थं स्थानादिप्रबन्धः

४१० से मिलती है। [1] २४ जून १८८०। ३०

स्यात् । यदि श्रीमत्युपदेशाय सर्वत्र यात्रां चिकीर्षेत् तर्ह्येतत्स्थाना-
दिनिवासिन आर्य्या भवत्या: सर्वत्रार्य्यावर्त्तयात्रार्थं योगक्षेमाय च
धनं दातुं शक्नुवन्ति नात्र काचिच्छङ्कास्ति ।

यदि भवती पत्रं प्रेषयेदथवाऽऽगच्छेत्तर्हि निम्नलिखितस्थानस्य
५ सूचनया पत्रं भवती वाऽऽगन्तुमर्हतीत्यलमतिविस्तरलेखेन विदुषीं
प्रति ।

रसरामाङ्कचन्द्रेऽब्दे आषाढस्य शुभे दले ।
षष्ठ्यां शनौ शिवं पत्रं लिखितं मान्यवर्द्धकम् ॥[1]

(मेरठ छावनी बाबू छेदीलाल गुमास्ते कमसरयट के द्वारा
१० स्वामी दयानन्द सरस्वती) जी के पास पहुंचे। परन्तु इतना
लिखना बहुत है कि (मेरठ स्वामी दयानन्द सरस्वती) बराबर
पहुंचेगा ।

॥ भाषार्थ ॥

स्वस्ति, श्रीमती श्रेष्ठोपमार्हा श्रुतशास्त्रा विद्याभ्यासापन्ना
१५ श्रीयुता रमा के प्रति दयानन्द सरस्वती स्वामी की आशीर्वादें
अतिशय करके हों। यहां कल्याण है आशा है कि आप भी वहां
सदा कल्याण से वर्द्धित हो रही होंगी ॥

संस्कृतविद्या का अभ्यास की हुई आप की कीर्ति सुनकर मन
में आनन्द हुआ श्रीमती पर पत्र द्वारा अपना अभिप्राय प्रकाश कर
२० आप का भी अभिप्राय इसी प्रकार जानना चाहता हूं। आशा है
कि आप शीघ्र अपना अभिप्राय प्रकाश कर मुझे अलंकृत कीजि-
येगा ॥

---

१. सं० १९३६ आषाढ़ सुदी ६ शनि। यह तिथि सर्वथा अशुद्ध है।
संवत् १९३७ चाहिये १९३६ नहीं। रमा ने इस पत्र का उत्तर आषाढ़
२५ शुक्ल १, भृगुवासर=शुक्रवार शक वत्सर १८०२ अर्थात् ९ जुलाई १८८०
को दिया। शुक्रवार ९ जुलाई १८८० को आषाढ़ शुक्ला द्वितीया थी।
प्रतिपद् का योग रहा होगा। अत: श्री स्वामीजी का पत्र आषाढ़, वदी
६ सोमवार अथवा २८ जून १८८० का हो सकता है। सं० १९३६ में और
सं० १९३७ में किसी भी वर्ष आषाढ़ सुदी ६ को शनिवार भी नहीं था।
३० रमा बाई ने इस पत्र का जो उत्तर आषाढ़ शु० १ सं० १९३७ को दिया,
उसे तीसरे भाग में देखें।

अब और आगे आप क्या क्या करना चाहती हैं। जैसे लोक-श्रुति है कि आप ब्रह्मचारिणी हो क्या यह ऐसा है वा नहीं ॥

आप जहां तहां सभाओं में सुशोभित, शास्त्रोक्त लक्षण और प्रमाणों से युक्त और विद्वान् जनों के आह्लाद करनेवाली वक्तृताओं को करती हैं यह ठीक है वा नहीं। ५

मैंने सुना है कि आप विवाह के लिये स्वयंवरविधि से अपने तुल्य गुण कर्म स्वभाव वाले कुमार उत्तम पुरुष को ढूंढ रही हैं यह सत्य है वा नहीं ? क्या विवाह करने के विना ब्रह्मचर्य में रहना अशक्य है ?

जैसे आर्यावर्तीय सती विदुषी गार्गी आदि कुमारियों ने ब्रह्म- १० चर्य में स्थित होकर स्त्रीजनों का जितना सुख लाभ प्राप्त कराया है वैसा उतना सुख आप विवाह करने पर अनेक प्रतिवन्धों के कारण प्राप्त नहीं करा सकेंगी। ऐसा होने पर आपकी क्या इच्छा है कि स्वसमान वर पुरुष को प्राप्त कर विवाह करें और जैसे अनेक स्त्रियें सन्तानोत्पत्ति पालन स्वगृहकृत्य के अनुष्ठान में प्रवृत्त १५ होती हैं वैसे आप भी प्रवृत्त हों वा यह इच्छा है कि कन्याओं को पढ़ावें और स्त्रियों को सुशिक्षा करें।

श्रीमती बङ्गदेश में रहकर और स्थानों पर यात्रा नहीं करतीं इसमें क्या कारण है ? मेरा निश्चय है कि जितना उपकार सर्वत्र गमन आगमन से हो सकता है उतना एक स्थान में रहने से नहीं २० हो सकता।

यदि यहां आने की इच्छा हो तो आ जाइये इस यात्रा में जितना धनव्यय रास्ते में होगा उतना आपको यहां मिल जावेगा। यदि यहां आना हो तो चलने से पूर्व पत्र द्वारा समय की सूचना दें यतः यहां आप की स्थिति के लिये स्थान आदि का प्रवन्ध हो २५ जावे ॥

यदि श्रीमती की इच्छा हो कि सर्वत्र उपदेश के लिये यात्रा करें तो आर्यावर्त्त में सर्वत्र यात्रा के अर्थ और योगक्षेम के लिये इस स्थान के निवासी आर्यपुरुष आपको धन दे सकते हैं। इसमें कुछ भी शङ्का नहीं। ३०

यदि आप पत्र भेजें अथवा आवें तो निम्नलिखित स्थान[1] की

१. स्थान का संकेत पृष्ठ ४४२, पं० ९-१२ पर देखें।

सूचना के अनुसार पत्र भेजें वा आप आवें। विदुषी के प्रति अधिक लेख से क्या ?

१९३६ वर्ष, आषाढ़मास, शुक्लपक्ष, षष्ठी तिथि, शनिवार[1] को यह मान्यवर्द्धक शिवपत्र लिखा गया ॥

—:०:—

५ [पूर्ण संख्या ४१३] पत्र

ओ३म्

पण्डित गोपालराव हरि जी आनन्दित रहो—

मैं आशा करता हूं कि जो-जो बातें करनी आपके लिए नीचे लिखता हूं, सो-सो यथावत् स्वीकार करेंगे।

१० (१) जो "मीमांसक उपसभा"[2] नियत की गई है उसके ५ सभासद् निश्चित किये गये हैं। एक आप, बाबू जी, लाला जगन्नाथप्रसाद, लाला रामचरण, लाला निर्भयराम और इनकी अनुपस्थिति में क्रमश: यथा आप के लाला नरायनदास मुख०, लाला हरनारायण, पुरोहित मन्नी लाल, लाला कालीचरन और लाला १५ निर्भयराम को कोई पुत्र अर्थात् तीनों में से एक जो उपस्थित हो नियत किये गये हैं ॥

(२) जहां तक बनें और आप यहां उपस्थित हों तो व्याख्यान भी समाज में दिया करें॥

(३) जो मासिक पुस्तक निकलता है वह भी आपके हाथ से २० बनेगा, अथवा बनने पर शुद्ध कर देंगे। तो भी अच्छा होगा। इति—

आषाढ़ कृष्ण ८, बुधवार संवत् १९३७।[3] दयानन्द सरस्वती

—:०:—

---

१. संवत् मास पक्ष तिथि वार के सम्बन्ध में संस्कृत-पत्र की टिप्पणी देखें।

२. मीमांसक उपसभा के विषय में तृतीय परिशिष्ट में विस्तार से २५ लिखा है ।

३. जून १८८०, फर्रुखाबाद। मूल पत्र पहले हमारे पास था, पश्चात् प्रो० महेशप्रसाद जी के पास रहा। महेशप्रसाद जी से श्री मामराजजी इस पत्र को २०-२-५१ को लाये। उस के अनुसार शुद्ध करके इस संस्करण में

[पूर्ण संख्या ४१४] पत्र

ओम्

[मुन्शी बख]तावर सिंहजी आनन्दित रहो।[1]

हम कल यहां[से चल] कर बुध की रात को सकूराबाद[2] स्टेशन से रेल में [सवार हो] कर मेरठ जायंगे। वेदभाष्य जहां तहां भेजा ग[या होगा] और राजा शिवप्रसाद का उत्तर छप के जहां तहां पहुंचा वा नहीं। [अब हम] को चिठी पत्री भेजना हो तो मेरठ के पते से हमारे पास भेज[ना। हम] को यहां कार्य विशेष था इसलिए वेदभाष्य [और सन्धि] विषय के पत्रे नहीं पहुंचे। मेरठ में जाके वहां [से भेज देंगे[3]..
....
....
......सो छापना और न हो तो जिस .... हो लिख भेजना और संधि-विषय का अ यहां जो पत्रे हैं लिखवा लिये हैं। शोध के भेज देंगे। संस्कृतवाक्यप्रबोध का एक फर्मा जो बाकी रह गया है छाप कर ज[हां तक हो] जलदी भेज दो जो पठन-पाठन में काम आवे। राजा शिवप्रसाद के उत्तर में तीन-चार दिन का काम थ[ा] इतनी देर क्यों लगा[ई,] जो वेदभाष्य अब तक किसी के पास नहीं भेजा। और [इस] अङ्क के साथ जिस-जिस के रुपैये आय [कर जो] बाकी [हैं] [उन सब के] पास चिठीं पहुंचाई जायंगी........
....
....
............................की लेना हो सब हिसाब कर रखना

छाप रहे हैं। पहला पाठ बहुत अशुद्ध था।

१. फटे हुए पत्र के दो टुकड़े म० मामराज जी ने ता० २४ जुलाई सन् १९४५ को लाला रामशरणदास जी मेरठ वालों के यहां से खोजे। मूल पत्र हमारे संग्रह में सुरक्षित है।

२. शुद्ध नाम 'शिकोहाबाद' है। मैनपुरी से मेरठ के लिये रेल पर सवार होने के लिये शिकोहाबाद स्टेशन ही समीपस्थ है।

३. बिन्दुओं वाला स्थान फट चुका है। कोष्ठों में हमने पूर्ति की है।

और [पहले जो चि]ठी लिख चुके हैं[1] उसी के माफिक सब काम करना।

मिति आषाढ़ वदी १३ सोमवार संवत् १९३७॥[2]

(दयानन्द सरस्वती)

—:०:—

५ **[पूर्ण संख्या ४१५] पत्र-सारांश**

[जीवाराम टीकाराम शीतलाघाट, काशी]

दोनों जने चले जाओ। [आषाढ़ वदी १३ सोमवार १९३७][3]

—:०:—

[पूर्ण संख्या ४१६] पत्र

मुंशी बखतावरसिंह जी आनन्दित रहो।

१० हम आज मेरठ में पहुंचके लालकुर्ती बाजार में रामशरणदास के बंगले में ठहरे हैं। और यहां महीना भर ठहरने का विचार भी है। जो कुछ चिट्ठी पत्रादि भेजो मेरठ में इसी पता से भेजना। तुम ने लिखा था कि पच्चीसवीं जून को दोनों वेदों [का] १४ वां [अंक] छपकर तैयार हो जायेंगे। और हमने २४ वीं जून को राजा शिव-

१५ प्रसाद का उत्तर भेजा था।[3] २६ वीं को पहुंचा होगा। और वह भी पहिली अप्रेल[4] वा पांचवीं तारीख अप्रेल[4] त[क] छप के तैयार हो ही गया होगा। सब के पास वेदभाष्य के साथ रवाना भी तुम ने कर दिया होगा जैसा कि हमने पहिले पत्रों में लिखा है वैसा करना। तुमको चाहिये कि आप जो-जो वहाँ की कारवाई २ दूसरे

२० तीसरे पत्र में जो काम किया लिख भेजा करो। भीमसेन ने पांच रुपैये माहवारी के लिये लिखा। सो आजकल इतना अन्नादि

---

१. सम्भवत: पूर्णसंख्या ४१० (पृष्ठ ४३९) पर छपी हुई चिट्ठी।

२. ता० ५ जुलाई, सन् १८८०। [आषाढ़ कृष्ण ९-१४, सं० १९३७ = १-६ जुलाई १८८० को स्वामी जी मैनपुरी में थे। अत: यह पत्र मैन-

२५ पुरी से भेजा गया था।]

३. द्र० —पूर्णसंख्या ४०९ (पृष्ठ ४३६) का प्रथम वाक्य।

४. यहां जुलाई के स्थान में भूल से अप्रेल लिखा गया प्रतीत होता है।

मंहगा नहीं है। कि जिसमें खान पानादि का निर्वाह ना हो। और मेरे आये पीछे कोई भी पुस्तक छोटा वा बड़ा जिसका आरम्भ मेरे पीछे आप ने वा भीमसेन ने किया हो नहीं पहुंचा। वेदभाष्य और राजा शिवप्रसाद का उत्तर छपकर अभी तक नहीं आया। सन्धि-विषय का अबतक आरम्भ न हुआ होगा। एक फर्मा व्यवहारभानु का छपना था ओ भी पूरा न हुआ होगा। अब भीमसेन कहता है कि मैंने बड़ा परिश्रम किया सो दो तीन महीने में क्या बना के तैयार किया। अपने लोगों की ये व्यवस्था है कि रुपैये के लिये तैयार और काम कुछ भी नहीं दिखाते। और जो हम काम देखेंगे तो आप ही बढ़ा देंगे। और वेदभाष्य और राजा शिवप्रसाद का उत्तर जल्दी भेजना चाहिये। और राजाराम शास्त्री के लिये हम ने लिख भेजा है कि पैंतीस रुपैये में मंजूर हों तो चल आवें और एक विद्यार्थी जो कि पचास श्लोक काम करके लिख सकता हो रसोई आदि के लिये पांच रुपैये माहवारी का लेते आवें। कुछ व्याकरण भी पढ़ा हो। और जो इन्कार करे तो चालीस रुपैये के बीच में दो पण्डित अच्छी तरह लिख[नि] वाले बहुत जलदी आप और भीमसेन अच्छी तरह परीक्षा करके भेज देना। वे भी व्याकरण पढ़े हों। और भीमसेन [से] कह देना कि जब छापाखाने का काम अच्छी तरह चलेगा तब पांच रुपैये हो जायेंगे। भारौलवाले ठाकर फतेसिंह के १७) रुपैये वेदभाष्य के लिये तीन वर्ष के हमारे पास जमा कर दिये हैं।

मिती आ० सुदी १ संवत् १९३७'[1]　　　　[दयानन्द सरस्वती]

—:o:—

[पूर्ण संख्या ४१७]　　　उर्दू पत्र

मुन्शी बखतावरसिंह जीव आनन्दित रहो।[2]

आजकल तुम्हारा कोई चिट्ठी पत्र नहीं आता। तुमने लिखा था कि २५ जून को वेदभाष्य तय्यार हो जावेगा। और २४ जून को राजा शिवप्रसाद का जवाब हमने फर्रुखाबाद से तुम्हारे पास भेज दिया था। और वेदभाष्य को दरुस्त हुए भी आज १९ या

१. ८ जुलाई, १८८०, मेरठ से।

२. मूल पत्र हमारे संग्रह में सुरक्षित है।

१७ दिन हुए। राजाजी के जवाब का पुस्तक हद्द के दरजह ८ दिन में छपकर तय्यार हो सकते हैं। पर न मालूम अब तक क्यों नहीं तय्यार हुए। और हम ने तुमसे कहा था कि दूसरे तीसरे दिन खत भेजते रहना। मगर अब २०-२० दिन तक आपके चिट्ठी पत्र का ५ दर्शन नहीं होता। आपको चाहिये कि हफता में दो दफा चिट्ठी भेजा करो। और सब हाल कच्चा-पक्का आमदनी खर्च का मुफसिल लिखा करा और यह भी लिखना कि राजा शिवप्रसाद का जवाब और वेदभाष्य अब तक छप कर क्यों नहीं आया। और फाऊण्डरी यानि हरफ वगैरा ढालने का सांचा और औजार १० कलकत्ता से आये या नहीं। और हरफ वगैरा ढालने शुरु हो गये या नहीं **अब हम वेदभाष्य के पत्रे तय्यार कर रहे हैं। और सन्धिविषय के पत्रे भी शोधे जाते हैं।** दो-चार दिन में वेदभाष्य और सन्धिविषय के पत्रे तुम्हारे पास पहुंचेंगे। और क्या आज तक हमारे नाम की कोई चिट्ठी काशी में ऐसी नहीं आई होगी जो हमारे १५ पास भेजने के लाइक हो जरूर आई होगी। मगर तुम भेजनी भूल गये होगे। और तुम जो अपने आर्यदर्पण निकालो तो जो वृत्तान्त मुंशी इन्द्रमन जी की बदनामी का मुसलमानों ने अपने अखबार जामे जमशेद में छापा था, और उस का जवाब और मुखतसर हाल अखबार नैय्यरे आजम मथरा मतबूआ ३० जून सन् ८० और २० अखबार दबदबा कैसरी बरेली मतबूआ ३ जुलाई सन् ८० में छपा है[1]। तुम भी अपने समाचार में छाप देना। उसमें साहब मैजिस्ट्रेट बहादुर मुरादाबाद के नाम तहकीकात का हुक्म गवर्नमेण्ट से आया है। और जो कोई काशी में और समाचार हो, तो उस में से अंग्रेजी से और भाषा बन सके तो जरूर छपवा दीजिये। और २५ कलकत्ता में भी जो समाचार या अखबार अंग्रेजी का निकलता हो, और तुम उसमें छपवा सकते हो, तो वहां भी छपवा दो, और अमृताबाजार पत्रिका के एडीटर को भी लिख के इस को छपवा देना। और अब वेदभाष्य के १० [अङ्क के] भेजने में तुम क्यों देर कर रहे हो। लोग घबरा रहे हैं। इसमें जितनी देर करोगे, उतना ३० ही महा हानि का सबब होगा। और मुंशीजी का सब हाल मुफ-

१. यह पत्र इस तिथि के ५-६ दिन पश्चात् लिखा गया है।

सिल लिख कर अमृतबाजार पत्रिका में और थ्यासोफिस्ट में छपने के लिये भेज देना । और हम यहां' एक महीने तक ठहरेंगे ।

(दयानन्द सरस्वती)

—:०:—

[पूर्ण संख्या ४१८] पत्र

स्वस्ति श्रीमच्छ्रेष्ठोपमार्हाय विद्वद्वर्य्याय वैदिकधर्ममार्गैक-निष्ठाय निगमोक्तलक्षणप्रमाणैर्धर्म्यकर्मोपदेशप्रवर्त्तितस्वान्तायैतद्वि-रुद्धस्योच्छेदने प्रोत्साहितचित्ताय सद्विद्वद्भ्योऽभ्यानन्दार्थं सूक्तसमूह-वाक्यानुवाक्यप्रयुक्तवक्तृत्वाभ्यासशालिने सर्वदा विद्यार्जनदानो-त्कृष्टस्वभावाय लब्धार्यविपश्चिन्मानायास्मत्प्रियवराय श्रीयुत-श्यामजि[कृष्ण]वर्म्मणे दयानन्दसरस्वतीस्वामिन आशिषो भूयासु-स्तमाम् । शमत्रास्म[दीयम]स्ति तत्रत्यं भवदीयं नित्यमेधमानं चाशासे ।

वहुमासाभ्यन्तरे भावत्कपत्रानागमेन चित्तानन्दाह्लासात् पुन-रानन्दप्रजननायेदानीमेतस्मिन्निम्नलिखिताभिप्रायाणां भवतः स-[का]शात् सद्यः प्रत्युत्तराभिकांक्षिणोत्साहयुक्तं ······मया पत्रं श्रीमत्सनीडं प्रेष्यते ।

तत्र कीदृग्गुणकर्मस्वभावा मानवा भूजलवायुभक्ष्यभोज्यलेह्य-चूष्याः पदार्थाश्च सन्ति । अतो गत्वाऽद्यपर्यन्तं तत्र भवदात्मशरी-रारोग्यमस्ति न वा । यदर्था यात्रा कृता तत्प्रयोजनं प्रतिदिनं सिध्यति न वा । भवत्समर्यादे तत्रत्याः कति जनाः संस्कृतमधीयते कं कं ग्रन्थं च । तत्र भवतः कियती मासिकी प्राप्तिर्व्ययश्च । कस्मिन्-कस्मिन् समये पठ्यते पाठ्यते चिन्त्यते च । ततोऽत्र कदा-ऽऽगमनाय निश्चितं कृतमस्ति । किमिदं यथात्र सद्धर्मोपदेशजन्या भवत्कीर्तिस्तूर्णं देशदेशान्तरे प्रसृता तत्र कुतो न जाता । जाता चेद् यतो दूरदेशस्थास्ति, तस्मादस्माभिर्न श्रुता किम् । किं वैतत्कारणे-ऽवकाशो न लब्धः । एवं चेद् यदा भवता पठनपाठने सम्पूर्य (?) वेदार्थोत्कर्षाभिप्रायसूचकानि वक्तृत्वानि तत्रत्येषु देशेषु कृत्वैवा-

१. यहां अर्थात् मेरठ में ।

आगमने भद्रं नान्यथेति निश्चयो मेऽस्ति। कुतः। धनलाभात् सत्-
कीर्त्तिलाभो महान् शिवकरोस्त्यतः। श्रीयुतप्रियवराध्यापकमुनि-
यरविलियंस[मो]क्षमूलराख्यानामधुना वेदादिशास्त्राणां मध्ये
कीदृङ् नि[श्चयः] प्रेभतदर्थंप्रचारा[य] चिकीर्षाऽस्त्यन्येषां च। तत्र
५ नन्दनपुर्यां काचिद् वैदिकी शा[खा]ख्या थियोसोफीकलसभाप्रेरिता
सभास्तीति श्रुतं तत्तथ्यं न वा। भवता [कदा]चिच्छ्रीमतीराजराजे-
श्वरी महाराज्ञी पारलीमेंटाख्या सभा च दृष्टा न वा। भवता
श्रीमत्प्रियवराध्यापकमुनियरविलियंसाख्यादिभ्योऽत्यादरेण मन्नि-
योगतो नमस्ते इति संश्राव्य कुशलं पृष्ट्वा ते श्रुत्वा यद्यत् प्रत्युत्तरं
१० ब्रूयुस्तत्तदन्यच्च यद्यद्युक्तं च लिखितुं तत्तस्य सर्वस्यस्त (?)
प्रत्युत्तराणि यद्यस्यानुक्तप्रश्नस्यापि लेखार्हमुत्तरं वैतत्सर्वं विस्तरेण
संलिख्याविलम्बेन पत्रं मत्सन्नि[धौ] प्रेषणीयमेवेत्यलमधिकलेखेन
विचक्षणोत्कृष्टेषु।

मुनिरामाङ्कभूम्यब्द आषाढस्य शुभे दले।
१५ षष्ठ्यां हि मङ्गले वारे पत्रमेतदलेखिषम्॥[1]

इस पते से पत्र भेजना। बनारस लक्ष्मीकुण्ड मुंशी बखतावर-
सिंह जी मैनेजर वैदिक यन्त्रालय के द्वारा स्वामी
दयानन्द सरस्वती जी के समीप पहुंचे॥

इदं वैदिकयन्त्रं स्वाधीनं नवीनस्थापितमस्मा[भि]रार्य्यैर्वेदादि-
२० शास्त्राणां मुद्राऽक्षरसंसिद्धय इति वेद्यम्॥

[दयानन्द सरस्वती][2]
(मेरठ)

---

१. संवत् १९३७, आषाढ़ सुदी ६, मङ्गलवार। १३ जुलाई १८८०।

२. पहले हमने यह पत्र आर्यभाषा में 'ऋ० द० के पत्र और विज्ञापन'
२५ के प्रथम भाग में संख्या ३० के अन्तर्गत छापा था। इसी का अंग्रेजी अनु-
वाद सन् १८८० या ८१ में इङ्गलेण्ड के '**एथिनियम**' पत्र में अध्यापक
मोनियर विलियम्स की ओर से छपा था। भारत में भी उसी अंग्रेजी के
कई अनुवाद समय-समय पर प्रकाशित हुए थे। हमने मूल अंग्रेजी की सहा-
यता से भाषा उल्थे को ठीक बनाया था। पाठक आश्चर्य करेंगे कि पत्र के
३० लिखे जाने की तिथि वाला श्लोक जो हमने बना के धरा था, उस में और
श्री स्वामीजी के रचे मूल श्लोक में एक ही अक्षर का भेद रहा था। श्लोक

॥ भाषार्थ ॥[1]

स्वस्ति श्री श्रेष्ठ उपमा योग्य विद्वद्वर वैदिक धर्म के मार्ग पर परमनिष्ठा वाले वेदों का लक्षण और प्रमाणों से धर्मयुक्त कर्मों के उपदेश में प्रवृत्त मनवाले इसके विरुद्ध कर्मों के उच्छेदन में प्रोत्साहित चित्तवाले उत्तम विद्वानों के आनन्द के लिये सूक्तिसमूह वाक्य अनुवाक्यप्रयुक्त वक्तृता के अभ्यासवाले सर्वदा विद्या के अर्जन और दानरूप उत्तम स्वभाववाले आर्यविद्वानों से मान प्राप्त हमारे प्रिय श्रीयुत श्यामजी कृष्ण वर्मा के लिये स्वामी दयानन्द सरस्वती के आशीर्वाद। यहां हम कुशलपूर्वक हैं और वहां आप नित्यबढ़ती हुई कुशलता की आशा करता हूं।

बहुत महिनों तक आपका पत्र न आने से खिन्न हुआ चित्त पुनः आनन्द के लिये इस समय निम्नलिखित अभिप्रायों का आप से अतिशीघ्र प्रत्युत्तर की आकाङ्क्षा वाला मैं उत्साहित होकर आप के समीप यह पत्र भेज रहा हूं।

वहां किस प्रकार के गुण-कर्म और स्वभाव वाले मनुष्य हैं, भूमि जल-वायु और खाने पीने के पदार्थ हैं। यहां से जाकर आज तक आपका शरीर नीरोग रहा वा नहीं? जिस प्रयोजन से यात्रा की वह प्रयोजन प्रतिदिन सिद्ध हो रहा है वा नहीं? आपके साथ वहां कितने व्यक्ति संस्कृत पढ़ रहे हैं और लिये किस-किस ग्रन्थ को? वहां आप की आय और व्यय कितना है? किस-किस समय आप पढ़ते पढ़ाते और मनन करते हैं? वहां से लौटने के लिये कब का निश्चय किया है? क्या कारण है कि जैसे यहाँ सद्धर्म के उपदेश से उत्पन्न हुई कीर्ति शीघ्र देश देशान्तर में फैली वैसी वहां

के तीसरे पाद में श्री स्वामी जी ने "हि" रखा था। उसके स्थान में हमने "च" बनाया था। ईश्वरकृपा से इस पत्र का मूल परोपकारिणी सभा के संग्रह में सुरक्षित रहा। उसी की प्रतिलिपि विलायत गई होगी। दीवान बहादुर हरविलास जी सारडा मन्त्री सभा ने मूल पत्र का चित्र दयानन्द-ग्रन्थमाला शताब्दीसंस्करण संवत् १९८१ में छापा था। उसी से अब यह मूलपत्र संस्कृत में ही छापा गया है।

१. श्री पं० भगवद्दत्त जी का उपरि निर्दिष्ट भाषानुवाद अंग्रेजी के आधार पर किया हुआ था। अतः हम उसे न देकर स्वयं भाषा बनाकर छाप रहे हैं। (यु० मी०)

क्यों नहीं फैली ? अथवा कीर्ति फैली हो पर यहां से दूर देशस्थ होने से हमने नहीं सुनी हो। अथवा क्या इसके लिये अवकाश प्राप्त नहीं हुआ। यदि ऐसा हो तो पठन-पाठन पूर्ण कर वेदार्थ के उत्कर्षसूचक व्याख्यान वहां के देशों में देकर ही यहां आने में आप
५ का कल्याण है, यह मेरा निश्चय है। क्योंकि धन के लाभ से सत्-कीर्ति का लाभ महान् कल्याण करने वाला होता है। श्रीयुत प्रिय अध्यापक मोनियर विलियम्स और मोक्षमूलर का सम्प्रति वेदादि शास्त्रों के विषय में कैसा निश्चय है ? उस के प्रचार के लिये प्रेम और इच्छा इनकी तथा अन्यों की कैसी है ? वहां लन्दन नगर में
१० कोई वैदिक शाखा रूप थियोसोफिकल से प्रेरित सभा है, ऐसा सुना है, वह सत्य है वा नहीं ? आपने कभी श्रीमती राजराजेश्वरी साम्राज्ञी और पार्लियामेण्ट नाम की सभा देखी वा नहीं। आप श्रीमान् प्रिय अध्यापक मोनियर विलियम्स आदि के लिये अत्या-दर पूर्वक मेरी ओर से नमस्ते कहकर कुशल पूछकर वे जो-जो
१५ प्रत्युत्तर देवें उस उस को तथा अन्य जो लिखने योग्य हो उस सब के प्रत्युत्तर और जो पूछा नहीं गया है उस का भी लिखने योग्य उत्तर यह सब विस्तार से लिखकर शीघ्र मेरे समीप भेजें। उत्कृष्ट विद्वान् को अधिक लिखने का।

सं० १९३७, आषाढ़ मास के शुक्ल पक्ष की छठी तिथि,
२० मङ्गलवार को मैंने यह पत्र लिखा।

........................[1]

हमने और आर्यों ने यह अपना नवीन वैदिक यन्त्रालय वेदादि शास्त्रों को छपवाने के लिये स्थापित किया है।

[दयानन्द सरस्वती]

२५ (मेरठ)

—:o:—

[पूर्ण संख्या ४१९] पत्र-सूचना

[लाला निर्भयराम फर्रुखाबाद]

प्रेस सम्बन्धी सामान के विषय में।[2]

—:o:—

१. संस्कृत पत्र में छपा पता हिन्दी में छोड़ दिया है।

३० २. इस का संकेत पूर्णसंख्या ४२१ के पत्र (पृष्ठ ४५३) में है। यह पत्र

[पूर्ण संख्या ४२०]　　　　पत्र

बाबू विश्वेश्वरसिंहजी आनन्दित रहो !

बड़े आश्चर्य की बात है कि तुमने वहां जाके एक भी पत्र न भेजा। अब जो-जो लिखने योग्य हों सब समाचार लिख भेजना। सुना है कि बाबू केशवचन्द्रसेनजी आज कल वहां हैं। तुम आनन्द　५ में होगे। हम बहुत आनन्द में हैं। एक बात तुमको आवश्यक जान के लिखी जाती है। जो वहां ब्रह्मी ओषधि मिलती हो तो उसको ले सुखा पारसल कर डाक में भेज दो, उसका महसूल वहां दे दिया जाएगा उस पर पता यह लिखो। (हरि पण्डितजी कामदार महाराजे विजयनगराधिपति बनारस भेलूपुरा)। अब छापा का काम　१० चलने लगा है। हम यहां मेरठ में बीस या पच्चीस दिन रहेंगे। जब तुम प्रयाग को आओ तो ब्रह्मी ओषधी बहुत सी लेते आना। जो आज कल न हो तो भादों और आश्विन में बहुत होती है, वहां के मनुष्यों से पूंछ कर निश्चय कर लेना, वहां रईस उस को जानते होंगे। सबसे मेरा नमस्ते कह देना।　१५

सं० १९३७ मि० आ० शु० ११ रविवार।[1]

(दयानन्द सरस्वती)

—:o—

[पूर्ण संख्या ४२१]　　　　पत्र

मुंशी बखतावरसिंहजी आनन्दित रहो।

आप ने जो पुस्तक और पत्र भेजे सब पहुंचे, हिसाब सहित······　२० चिट्ठी भी　यजुर्वेद के पत्रे तो कल वा परसों तैयार करके भेजता हूं। और ऋग्वेद के पत्रे लिख रहे हैं। तथा यजुर्वेद के भी जितने तैयार होते जायंगे भेजते जायंगे। आपने लिखा कि तीनों अङ्क बराबर निकालें उसमें फिर भी देर लगेगी। इस वास्ते [एक

आषाढ़ सुदी ११, रविवार, सं० १९३७ [१८ जुलाई १८८०] को या उस से　२५ पूर्व लिखा गया होगा।

१. आषाढ़, १८ जुलाई, सन् १८८०। यह सारा पत्र श्री स्वामी जी के हाथ से लिखा हुआ है। मूल पत्र श्री नारायण स्वामी जी के संग्रह में सुरक्षित है।

अङ्क] अभी निकाला जाय' फिर दोनों साथ निकालना ये [तो हमारी] सलाह है। और तुमारी सलाह ··· ···नाथ को दो रुपयै देके पुस्तक पूर्ण [करालो। उन] से कह देना कि **शीतलाघाट पर जो पण्डित जीवाराम [टीकारा]म रहते हैं उनके वास्ते मैनपुरी से**
५ **चिट्ठी भेजी थी सो दी** [वा नहीं], नहीं दी हो तो वहां जाके उनसे कहना कि स्वामीजी ने तुम से कहा है दोनों जने चले आवो अवश्य। हम मेरठ में हैं। जो उनके पास खर्च न हो तो तुम मेरठ का टिकट दिवादो यहां उनका काम है। उनने कहा था कि हम आपके पास आवेंगे, सो क्यों नहीं आये। हमारे पास चले आवें।
१० और गोपाल··· ····यहां अच्छी तरह से है। इसका जवाब जैसा हो वैसा उनसे निश्चय कर तुम लिखो। और उनसे कहो बहुत रोज पढ़ा, अब कुछ जीवका भी करनी चाहिये। **लाला निर्भयराम को हमने लिख दिया है।** वे कलकत्ता को चिठी लिखेंगे। तुमको जो चीज चाहती हो वहां से मंगा लेना। परन्तु तुम ऐसा कि वहां
१५ किसी······ ार जन व साहब के पास रुपैये भेजकर मंगवा लिया [करो और] भीमसेन रामप्रताप का पता अच्छी तरह जा[नता है ·········लिखा वह अच्छी चीज पहुं ·· ··रुपये निर्भयराम की दुकान से दिवा [दिया क]रेगा श्री बहुत जलदी तुमारा काम कर दिया करेगा। [तुम] बहुत हुशियारी [से] काम करते हो और
२० भूल भी जाते हो। परन्तु आगे को ऐसा न होना चाहिये। क्योंकि विरोधी लोग इसमें न जाने क्या क्या न कहेंगे। देखो सुन्दरलाल के तीन सौ रुपैये आये थे और तुम ने रसीद अढ़ाई सौ की छापी है![2] उनने हमको चिठी लिखी है सो अब तुम [अ]गले पन्द्रहवें अङ्क में तीन सौ का अङ्क लिख कर यह भी लिख देना कि हम ने
२५ पहले भूल से लिख दिया है।[3] हम भी उन को चिठी भेज देंगे। और भीमसेन से कहना कि किसी दूसरे पण्डित के पास न्यायदर्शन

---

१. इस बात का उल्लेख बख्तावरसिंह ने ऋग्वेद और यजुर्वेद दोनों के भाष्यों के १५ वें अङ्क के टाइटल पेज ३ पर निवेदन में किया है।

२. यह २५० रु० की रसीद (=प्राप्ति की सूचना) यजुर्वेदभाष्य अङ्क
३० १४ के टाइटल पेज २ पर छपी है।

३. यह शुद्धीकरण बख्तावरसिंह ने ऋग्वेद और यजुर्वेद दोनों के भाष्यों के अङ्क १५ के टाइटल पेज २ पर किया है।

लगाके पूरा करले, अधूरा न रखे। और किसी नौकर को पेशगी मत दिया करो। जो दी हो तो अगले महीने में सम्पूर्ण या आधी काट लेना। किसी से दवा मत करो। ये काशी के महा लुच्चे हैं। आपने वेदभाष्य छापा [होगा] ही परन्तु मूल से संस्कृत और भाषा के अक्षर.........इसलिये पद और संस्कृत के अ.........ये। ५

मिती आषाढ़ सुदी ११ रविवार संव[त् १९३७][1]

[2]यहां के समाज की बड़ी उन्नति है। मैं यहां बीस वा [पचीस] दिन तक रहूंगा। हरि पण्डित जी से कहना कि ब्राह्मी ओषधी के लिये हमने नैणीताल को लिखा है।[3] अनुमान है कि आप के पास पहुंच जाय[गी]।[4] १०

—:o:—

[पूर्ण संख्या ४२२] पारसल-सूचना

[ऋग्वेद यजुर्वेद भाष्यों के पृष्ठ][5]

—:o:—

[पूर्ण संख्या ४२३] पत्र

मुंशी बखतावर सिंह जी आनन्दित रहो।

कल कुछ पत्रे यजुर्वेद और ऋग्वेद के पहुंचा[6] दिये हैं पहुंचे होंगे। तैयार करते जाते हैं। जैसे तैयार होंगे तैसे ही पहुंचाते जायंगे। परन्तु तुमने तीन-तीन अङ्क का निकालना एक ही वखत अकस्मात् प्रारम्भ कर दिया है। जो हम को पहिले कहते तो पत्रे १५

---

१. १८ जुलाई सन् १८८० मेरठ से।

२. यहां से आगे की तीन पंक्तियां ऋषि ने स्वहस्त से लिखी हैं। हस्ताक्षर तथा बिन्दुओंवाला स्थान फट चुका है। कोष्ठों में हम ने पूर्ति की है। २०

३. यह नैणीताल का पत्र पूर्ण सं० ४२० (पृष्ठ ४५३) पर छपा है।

४. म० मामराजजी ने २४ जुलाई सन् १९४५ को मेरठ निवासी ला० रामशरणदासजी के सहस्रों पत्रों में से उनके पौत्र ला० परमात्माशरणजी के साथ खोजा। मूल पत्र हमारे संग्रह में सुरक्षित है। २५

५. इस पारसल की सूचना आगे निर्दिष्ट पूर्ण संख्या ४२३ से मिलती है।

६. अर्थात् भेज दिये हैं।

आगे से ही तैयार कर भेज देते। अब भी चार दिन आगे पीछे पौचा देंगे। काशी में से कोई लेखक जो कि संस्कृत की भाषा बना जाने तो पन्द्रह रुपैये माहवारी कर भेज दो। व्याकरण भी पढ़ा हो। विहारी चौबे को पुस्तक न दो। जो वह दस रुपैये सैकड़े ५ कमीसन पर ले तो दे दो परन्तु पचीस रुपैये से ले तो कमीसन देना। कम में नहीं। हां व्रजभूषण दास वाले दस रुपैये पर भी कमीसन लें [तो] उधार भी दे दो।

और जगदंबा प्रसाद बरेली के पास अबतक तुमने तीनों पुस्तक नहीं भेजें, क्योंकि उसने हमको परसों चिठी भेजी कि हमारे पास १० पुस्तक अभी नहीं आये। ऐसा क्यों करते हो कि जिसके दाम आये उसको उसी बखत पुस्तक भेज देना चाहिये। नहीं तो आगे को दाम कैसे आवेंगे कोई भी न भेजेगा। और जीवाराम टीकाराम की क्या खबर है। वे वहां हैं वा नहीं।

मिति आषाढ़ सुदी १३ मङ्गलवार संवत् १९३७।[1]

१५ (दयानन्द सरस्वती)[2]

—:o:—

[पूर्ण संख्या ४२४] पत्र

ओ३म्

लाला रूपसिंहजी आनन्दित रहो!

तारीख १९ जुलाई को एक पत्र आपका दो टिकट सहित और २० २३ जुलाई[3] को ६०) रुपैये का मनियाडर हमारे पास आया। इस बात पर जैसा कि हमने आशीर्वाद आर्यसमाज फरुखाबाद को दिया वैसा तुम को भी देते हैं। आप आगे की साल से फरुखावाद मन्त्री आर्यसमाज कालीचरण रामचरण के पास साठ-साठ रुपैये

---

१. २० जुलाई सन् १८८० को मेरठ से बनारस भेजा गया।

२५ २. म० मामराजजी ने ला० रामशरणदासजी के पुराने कागजों में से उनके पौत्र ला० परमात्माशरणजी तथा ला० श्यामलालजी प्रधान आर्य-समाज मेरठ के साथ २३ जुलाई सन् १९४५ को खोजा। मूल पत्र हमारे संग्रह में सुरक्षित है।

३. २३ जुलाई भूल से लिखा गया है। २० या २१ जुलाई चाहिये, ३० क्योंकि यह पत्र २१ जुलाई १८८० का है।

हर साल भेजना। ये रुपैये भी दो तीन दिन में फरुखाबाद में उक्त मन्त्री के पास भेजेंगे वहां से अपना हिसाब समझ लिया करो। शुक्रिया अदा करना इसका अर्थ संस्कृत में धन्यवाद देना ऐसा है।

मैं मेरठ में २० दिन तक रहूंगा।

मिति आषाढ़ सुदी १५ संवत् १९३७।[1] (दयानन्द सरस्वती)

—:०:—

[पूर्ण संख्या ४२५]   पत्र-सारांश

[कन्हैयालाल एग्जेक्टिव इञ्जिनियर]

मैं आजकल के कालिजों और स्कूलों का पढ़ा हुआ नहीं हूं जो मन में कुछ हो और प्रकट कुछ और करूं। मैं जो मन में ठीक समझता हूं उसी को प्रकट करता हूं लागलपेट की और पालिसी की बातें मुझे नहीं आतीं।[2]   १०

—:०:—

[पूर्ण संख्या ४२६]   पत्र

श्रीमदनवद्याभ्यस्तसुविद्यालङ्कारपरिशोभितायै भारतवर्षीयेदानीन्तनस्त्रीजनानां निवारितमूर्खत्वादिकलङ्कदार्ष्टान्तिस्वरूपायै सत्त्वसौजन्यार्द्रतासभ्यार्यविद्वद्वर्य्यस्वभावान्वितप्रकाशितस्वाभिप्रायलेखायै प्रियवरमनसे श्रीयुतरमायै दयानन्दसरस्वतीस्वामिनः स्वाशिषो भूयासुस्तमाम्।   १५

शिवमत्रास्ति तत्र भवदीयं च नित्यमाशासे। यद्भवत्याः प्रेमा-

---

१. २१ जुलाई १८८०। मूल पत्र हमारे संग्रह में सुरक्षित है। यह पत्र सरदार रूपसिंहजी ने हमें दिया था।   २०

२. यह पत्रसारांश पण्डित लेखरामकृत जीवनचरित हिन्दी संस्करण पृष्ठ ८२७-८२८ पर मुद्रित है। लेखरामकृत जीवनचरित पृष्ठ ८२७ के अनुसार इस पत्र का सम्बन्ध भ्रमोच्छेदन ग्रन्थ के साथ है। भ्रमोच्छेदन का मुद्रण आषाढ़ संवत् १९३७ वि० के पूर्वार्ध में हुआ होगा, अतः हम इसे यहां पर जोड़ रहे हैं। पं० लेखराम ने यह पत्रोत्तर लाला साईंदास, लाहौर के द्वारा भिजवाने का निर्देश किया है। लाहौर में स्वामी जी सं० १९३४ में ठहरे थे, अतः पं० लेखरामजीकृत जीवनचरित में लाला साईं-दास के द्वारा पत्रोत्तर भिजवाना उपपन्न नहीं होता।   २५

स्पदानन्दप्रदं पत्रमागतं[1] तत्समालोक्यातीव सन्तुष्टिं प्राप्तोऽहं पुनरपि श्रीमत्यै यत्किञ्चित् कष्टं दातुं प्रवर्ते तत्क्षन्तुमर्हति। महदाश्चर्य्यमेतद्यदानन्दवर्द्धनाय भवतीं प्रति पत्रं प्रेषितं तत्प्रत्युत्तरितमागतं सद्धर्षशोककरं कुतो जातमिति प्रतिभाति नः। कस्य श्रीमत्या आर्जवलेखं दृष्ट्वा सुखं, सनाभ्यस्य मरणं श्रुत्वा दुःखं च न जायेत। परन्त्वेवं जाते सत्यपीदानीमशक्ये सांसर्गिकसंयोगवियोगात्मकजन्ममरणस्वरूपे लोकव्यवहारे भवती शोचितुं नार्हति। श्रीमत्याः कुत्रत्यं जन्म कियदायुः किं किमधीतं श्रुतं च? किं संस्कृतादार्य्यावर्त्तीयभाषाभ्यो भिन्ना काचिदन्यद्देशभाषाभ्यस्तास्ति न वा? क्वास्ति निजं गृहमभिजनश्च मातापितरौ नो वा? मृताद् बन्धोरन्ये ज्येष्ठाः कनिष्ठा वा भ्रातरो भगिन्यश्च सन्ति न वा? यो मृतः स्वतो ज्येष्ठः कनिष्ठो वा? अधुनाऽनघायाः सन्निधौ स्वजातीयः पुरुषः स्त्री वा काचिद्वर्त्ततेऽथवैकाकिनी च? अहो कुतोऽस्मदीयं पत्रं काकतालीयन्यायवत्सुखदुःखसंयोगसूचकं जातमिति विस्मयामहे। परन्तु विद्वद्वर्य्यायां भवत्यां शोकस्य लेशोऽपि स्थातुमनर्हं इति निश्चित्य मृडयामः। यदि मार्गव्ययार्था धनापेक्षास्ति तर्हि सद्यो विज्ञाप्यतामियद्धनमत्र प्रेषणीयमिति नात्र शङ्कितुं लज्जितुं योग्या वर्त्ततेऽपूर्वपरिचये कथं धनार्थं लिखेयमिति। यदि स्वसमीपे वर्त्तते तर्हि लेखितुं न योग्यम्। यथा मया पूर्वपत्रे लिखितं तथैवात्र प्राप्तायां श्रीमत्यां लब्धव्यमित्येवानवद्यं कार्य्यमस्तु। यथा भवत्यात्र स्वशुभागमनसूचना द्विविधा कृता तत्राद्यायां प्रतिज्ञायां मासात्पर इति वचसि यदि शक्यमत्रागन्तुं तर्ह्यत्यन्तं वरमिति नियोजनम्। अहमप्यत्र पञ्चविंशतिदिनानि स्थातुमिच्छाम्येतदन्तराले समयेऽत्रागमिष्यति चेत्तर्हि मत्समागमो भविष्यति। पुनरितो यत्र गमिष्यामि तस्यापि सूचनां श्रीमतीं प्रति विज्ञापयिष्यामीत्यलमधिकलेखेन विपश्चिद्विचक्षणायाम्।

मुनिरामाङ्कचन्द्रेऽब्दे शुचौ मासे सिते दले।
पौर्णमास्यां बुधे वारे लिखित्वेदं ह्यलङ्कृतम्॥[2]

---

१. रमाबाई का यह पत्र तीसरे भाग में देखें।

२. सं० १९३७ आषाढ़ सु० १५, २१ जुलाई १८८०। ऋ० द० के इस पत्र के उत्तर में रमाबाई का १-८-८० का पत्र तीसरे भाग में देखें।

॥ भावार्थ ॥

श्रीमती अनवद्या और अभ्यास की हुई उत्तमविद्या के अलङ्कार से शोभिता, भारतवर्षीय वर्तमान समय की स्त्रीजनों के मूर्खत्व आदि कलङ्क के निवारण के लिये दार्ष्टान्तिस्वरूपा, सत्त्व सुजनता आर्द्रता और सभ्य आर्य विद्वानों से बरने योग्य स्वभाव युक्त अपने ५ अभिप्राय को लेख द्वारा प्रकाशिका, प्रिय और वर मन युक्ता श्रीयुता रमा के प्रति दयानन्दसरस्वती स्वामी के आशीर्वाद अतिशय करके हों।

यहां कल्याण है आपके कल्याण की नित्य आशा करता हूं। कि आपका प्रेमास्पद आनन्दप्रद पत्र मिला उसके देखने से अतीव १० सन्तोष हुआ, श्रीमती को थोड़ा सा कष्ट देता हूं उसे क्षमा करेंगी। हमें बड़ा आश्चर्य होता है कि आनन्दवर्द्धन के लिये आपके प्रति पत्र भेजा गया उसके प्रत्युत्तर में आया हुआ पत्र आते ही हर्ष और शोक का करने वाला क्यों हुआ। कौन है जो श्रीमती के आर्जव लेख को देखकर सुखी न हो और श्रीमती के भाई का मरण सुनकर १५ दुःखी न हो? परन्तु ऐसा होने पर भी अब आप इस अशक्य सांसर्गिक संयोगवियोगात्मक जन्ममरणस्वरूप लोकव्यवहार में श्रीमती शोक करने योग्य नहीं हैं।

श्रीमती का जन्म कहां का है? आयु कितनी है? आपका अधीत और श्रुत क्या-क्या है? संस्कृत और आर्यावर्तीय भाषाओं २० के अतिरिक्त कोई अन्य देशभाषा क्या आपने अभ्यास की है वा नहीं? आपका निज गृह कहां है और अभिजन (वंश के लोग) कहां रहते हैं? माता, पिता विद्यमान हैं वा नहीं? जो मर गया है वह आप से बड़ा था वा छोटा? अब आप निर्दोष के पास स्वजातीय पुरुष वा कोई स्त्री अथवा एकाकिनी हैं? २५

अहो हम आश्चर्य में हैं कि हमारा पत्र काकतालीय न्याय की भांति किस प्रकार सुख दुःख संयोग का सूचक हुआ! परन्तु इस विचार से हमको सन्तोष है कि आप में जो विद्वानों से सत्कार के योग्य हैं। शोक का लेश भी नहीं ठहर सकता।

यदि मार्गव्यय के लिये धन की अपेक्षा है तो शीघ्र सूचित ३० कीजिये कि कितना धन वहां भेजा जावे आपको ऐसी शङ्का वा लज्जा नहीं करनी चाहिये कि पूर्व परिचय के विना किस प्रकार

आप धन के लिये लिखें। यदि अपने पास है तो लिखना योग्य नहीं, जैसे मैंने पूर्व पत्र में लिखा है वैसे ही आपको यहां आने पर मिल जावेगा। हे निर्दोषे! इसी प्रकार कार्य हो।

यथा आपने अपने शुभ आगमन की सूचना दो प्रकार की लिखी ५ है यदि उन में से पहली प्रतिज्ञा यह है कि मास के पीछे, यदि इस वचन के अनुसार आना शक्य हो तो यह नियोजना अत्यन्त श्रेष्ठ है। मैं भी २५ दिन तक ठहरना चाहता हूं यदि आप इस समय के बीच आवेंगी तो मेरा समागम होगा इसके पीछे जहां जाऊंगा उस की सूचना श्रीमती को लिखूंगा॥

१० इति विदुषी विचक्षणा के प्रति अधिक लेख से अलम्॥

१९३७ आषाढ़ मास शुक्लपक्ष पौर्णमासी बुधवार को लिखकर अलङ्कृत किया गया॥

—:o:—

[पूर्ण संख्या ४२७] पत्र-सूचना

फर्रुखाबाद को[1]

—:o:—

१५ [पूर्ण संख्या ४२८] पत्र-सूचना

कलकत्ता को[2]

—:o:—

[पूर्ण संख्या ४२९] पत्र

ओ३म्

मुन्शी बखतावरसिंह जी आनन्दित रहो।

२० जो हमने ऋग्वेद और यजुर्वेद के पत्रे भेजे थे[3] पहुंचे होंगे। कल और भी पत्रे भेजेंगे। हमने फरुखाबाद को लिख भेजा और कल-

१. फर्रुखाबाद को पत्र भेजने की सूचना अगले पूर्णसंख्या ४२९ के पत्र के आरम्भ में मिलती है। पत्र किसको भेजा गया और किस विषय में लिखा गया, यह अज्ञात है।

२५ २. कलकत्ता को पत्र भेजने की सूचना भी अगले पूर्णसंख्या ४२९ के आरम्भ में मिलती है। पत्र किसको लिखा गया और किस विषय में लिखा गया, यह अज्ञात है।

३. इस की सूचना पूर्णसंख्या ४२३, पृष्ठ ४५५ पर छपे हुए पत्र में भी

कत्ते का पत्र भी भेज दिया। परन्तु यह काम उनसे होना कठिन है। अन्य किसी भद्र मनुष्य से कराना चाहिये। जो रुपैये हमारे सामने कलकत्ते में भेजे थे उन का हिसाब लिख भेजना। जि[स]ने १७) रुपैये दिये थे हमको, वह ठाकर फतेसिंह पहिले के गाहक हैं। उसको भीमसेन भी जानता है। वह ठाकर जाल[म]सिंह का ५
सम्बन्धी है। क्या उसका नाम रजष्टर में नहीं लिखा है। जो मुझ से पूछते हो। निम्नलिखित पुरुषों की रसीद छपा देना कि जिनोंने दो पण्डितों के लिये जितने-जितने रुपैये दिये हैं। बाबू दुर्गाप्रसाद रईस फरुखाबाद ने ५०० रुपैये अनाथों के पालन के लिये। १०)
स्वामी दयानन्द सरस्वती जी ने अनाथों के पालन। और ५००) १०
रुपैये वेदभाष्य बनवाने के लिये दिये।[1] २५०) सेठ निर्भयराम रईस फरुखाबाद ने पण्डितों के लिये दिये। १५०) लाला कालीचरण रामचरण रईस फरुखाबाद ने पण्डित वेदभाष्य के लिये दिये। २००) लाला जगन्नाथ प्रसाद रईस फरुखाबाद ने पं० वे०
के दिये। १००) लाला गणेशराम रईस फरुखाबाद ने पं० वे० के १५
लिये दिये। ५०) लाला गुरुमुखराय रईस फरुखाबाद ने पं० वे० के लिये दिये। ५०) लाला नारायणदास रईस फरुखाबाद ने पं० वे० लिये दिये। ६०) बाबू रूपसिंह त्रेजरी क्लर्क कोहाट पंजाब ने पं० वे० के लिये दिये। ४०) आर्यसमाज दानापुर ने पं० वे० के
लिये दिये। २५) आर्य्यसमाज देहरादून ने पं० वे० के लिये २०
दिये। २५) आर्यसमाज रुड़की ने पं० वे० के लिये दिये। २५) आर्य्यसमाज सहा[र]नपुर ने दिये। इस में इतना विशेष है कि पण्डितों को रख के वेदभाष्य को बनाने में १००) मावारी हम खर्च किया करेंगे। छः वर्षों तक इसमें ५० रुपैये मावारी देने में
सब लोग और ५०) रुपैये देने में अकेला फर्रुखाबाद रहेगा। यह २५
चन्दा छः वर्ष का है[2] शाय[द] और भी इकट्ठा भया होगा। अगाडी

मिलती है।

१. इस पत्र में वेदभाष्य को शीघ्र पूरा करने के लिये जिस सहायता का वर्णन है, उसके सम्बन्ध में विशेष तृतीय परिशिष्ट में देखें।

२. इस पत्र में वेदभाष्य बनाने में सहायता देने के लिये दो पण्डित ३०
रखने का जो उल्लेख है, उस के सम्बन्ध में 'मन्त्री आर्यसमाज फर्रुखाबाद' की ओर से एक विज्ञापन दिया गया था। (द्र० यजुर्वेदभाष्य अङ्क १४,

मालूम होगा।[1]

मिति श्रावण वदी १ संवत् १९३७।[2] मेरठ

[दयानन्द सरस्वती]

दो[3] पण्डितों को रखने के लिये ६-छः वर्ष पर्यन्त देंगे। प्रति
५ मास १००) रुपैये के हिसाब से दिया करेंगे। मावारी १०० रुपैया में जितना चन्दा न्यून रहेगा उतना आर्य्यसमाज फरुखाबाद दिया करेगा। और बाकी अन्य सब समाज देंगे। अर्थात् ५०) मावारी छः वर्ष तक अकेला फरुखा[बा]द आर्य्यसमाज और ५०) रुपैये मावारी अन्य सब समाज देंगे। परन्तु शोक है कि अब तक कोई
१० योग्य पण्डित नहीं मिला है बहुत ठिकानों में लिखा तो है। तुम भी जहां तहां लिखना और वेदभाष्य के टाटिलपेज पर जो विज्ञापन पण्डितों के लिये लिखा है, वह अवश्य छाप देना।[3]

[श्री स्वामी जी।[4]

यह भी लिखिये कि यह रुपया एक एक दफा दे दिया वा

---

१५ टाइटल पेज ३-४) उसके अत्यन्त महत्त्वपूर्ण होने तथा इस पत्र से संबन्ध रखने के कारण हम उसे परिशिष्ट संख्या ३ में दे रहे हैं।

१. इस पत्र की कई बातें, अर्थात् रुपयों का ब्योरा मुंशी बखतावर सिंहजी को समझ में नहीं आया। उन्होंने पत्र पर वहां-वहां चिह्न कर के स्पष्टीकरणार्थ पत्र श्री स्वामीजी को लौटा दिया। स्वामीजी महाराज ने
२० जैसा ठीक करके पत्र पुन: भेजा, वैसा हमने ऊपर छाप दिया है। तथा अगली पङ्क्तियां भी श्री स्वामीजी ने स्वहस्त से उसी पत्र की पीठ पर लिख दीं। वे आगे छापी जाती हैं।

२. २२ जुलाई १८८०।

३. यह श्री स्वामी जी के अपने हाथ का लेख है। परन्तु यह लेख
२५ श्रावण वदी १ (२२ जुलाई) के अनन्तर लौटे हुए पत्र को पुन: भेजते समय का है (देखो ऊपर टि० १)। इसमें वेदभाष्य के टाइटल पेज पर जिस विज्ञापन के छापने का उल्लेख है, वह अगले पूर्ण संख्या ४३१ के पत्र में लिखा है (पृष्ठ ४६३-४६४), अत: ये पङ्क्तियां श्रावण शुदि २ सं० १९३७ (२३ जुलाई १८८०) के पश्चात् लिखी गई हैं।

३० ४. पूर्व पत्र की पीठ पर यह लेख मुन्शी बखतावरसिंह का है। मूल पत्र हमारे संग्रह में सुरक्षित है।

वार्षिक देते हैं। सो सब वृत्तान्त स्पष्ट करके लिखिये। जो रसीद गडबड छप जावे अच्छा नहीं। इसलिये जो स्पष्ट हो जावे अच्छा है।]

—:o:—

[पूर्ण संख्या ४३०] पारसल-सूचना[1]

[मुंशी बख्तावरसिंह काशी]
ऋग्वेद और यजुर्वेद भाष्य के पत्र।
[श्रावण वदी २, सं० १९३७][2]

—:o:—

[पूर्ण संख्या ४३१] पत्र

मुन्शी बखतावरसिंह जी आनन्दित रहो।

टाटिल पेज बादामी पर अच्छा होगा, छाप दो। आज यजुर्वेद और ऋग्वेद के पत्रे शोध कर भेज दिये हैं। तेली की चिठी कोई नहीं आई। ऐसे बीमारों को इनाम देने लगोगे तो कहां पूरा पड़ेगा। पंद्रह का अब भेजोगे और सोलह सत्र[ह] का फिर ये बहुत अच्छा किया। ३२ और दो-दो पृष्ठ से अधिक मत बढ़ावो। नहीं तो हमारे वेदभाष्य के बनने में हरकत होगी। ये भी नोटिस दे दो "वेदभाष्य के टाटल पेज पर[3] कि हम को एक ऐसा पण्डित चाहता है कि जो पाणि[नीय] व्याकरण अर्थात् अष्टाध्यायी, महाभाष्य, पूर्वमीमांसा, न्याय, निरुक्त, निघण्टु, पूर्वमीमांसा[4], न्याय, वेदान्त, उपनिषद्, छन्दोग्रन्थ आदि वेदांगों का पढ़ा हुआ संस्कृत की भाषा व्याकरण की रीति से सुन्दर[4] बना सकता हो एक वेद अथवा दो वेद भी पढ़ा हो संस्कृत की शुद्धि कर सके। उस को पचास वा साठ रुपैये माहवारी देंगे। परन्तु शीघ्र शुद्ध लिखने

---

१. इस पारसल की सूचना पूर्ण संख्या ४२९ (पृष्ठ ४६०) तथा अगले पूर्ण संख्या ४३२ के पत्र से मिलती है। २. २३ जुलाई १८८०।

३. यह नोटिस 'चाहना' शीर्षक से यजुर्वेदभाष्य अङ्क १५ के टाइटल पेज ३ पर छपा था। उसे परिशिष्ट संख्या ३ में यथावत् रूप में दे रहे हैं।

४. 'पूर्वमीमांसा—सुन्द०' तक इतना लेख श्री स्वा० जी की अपनी लेखनी से है। इसमें 'पूर्वमीमांसा न्याय' दो बार लिखा गया है

वाला हो। यह तुमारे पास काशी में तुमको खबर देदे।"

मिति श्रावण वदी २ शु० संवत् १९३७।[1]

[दयानन्द सरस्वती]

—:०:—

[पूर्ण संख्या ४३२] पत्र

५ मुन्शी बखतावरसिंह जी आनन्दित रहो।

आज पत्रे वेदभाष्य अर्थात् ३०६ से ३२० तक यजुर्वेद के और ३०८ से ३२३ तक ऋग्वेद के तुमारे पास पहुंचाते हैं। एक चिट्ठी अलमोढ़ा से वेदभाष्य के ग्राहक की हमारे पास आई है। तुमारे पास पहुंचाते हैं। पच्चीस रुपैये मंगा के पीछे पोथी भेजना और १० उनको उत्तर भी भेज देना कि आपने जो स्वामी जी के पास चिठी भेजी थी उनने हमारे पास भेजी। हम आपको इतलाह देते हैं कि पच्चीस रुपैये पहुंचा देवें। पुस्तक आपके पास पहुंच जायगी। कल जो उर्दू में हमने चिठी भेजी है[2] उसी के अनुसार काम करो।

कुजरावाले[3] का जो हाल था, उसका जवाब भेज दिया है।[4] १५ अब हाल में कुछ सुनने में नहीं आता है। हमारा शरीर आनन्दित है। आप लोग आनन्दित होंगे। हम मेरठ में शायद दिन पन्द्रह तक ठहरेंगे।

मिती श्रा० वदी २ श०[5] संवत् १९३७।

[दयानन्द सरस्वती][6]

—:०:—

२० १. २३ जुलाई १८८०, शुक्रवार। मूल पत्र हमारे संग्रह में सुरक्षित है।

२. पूर्ण संख्या ४२९ की। ३. अर्थात् 'गुजरांवाले' का।

४. यह जवाब आगे पूर्ण संख्या ४३५ पर छपा है।

५. १४ जुलाई सन् १८८० को मेरठ से बनारस भेजा गया। शनिवार को श्रा० वदी ३ है। तथा पत्र में भी 'कल जो उर्दू में [हम ने] चिट्ठी २५ भेजी है' इस लेख के अनुसार भी श्रा० वदी ३ ही चाहिये।

६. म० मामराज जी ने ता० २३ जुलाई सन् १९४५ को ला० रामशरणदास जी रईस मेरठवालों के पुराने पत्रों में से उनके पौत्र ला० परमात्माशरण जी के साथ खोजा। मूल पत्र हमारे संग्रह में सुरक्षित है।

[पूर्ण संख्या ४३३] पारमल-सूचना

ऋग्वेदभाष्य के पत्रे ३०८-३२३, यजुर्वेदभाष्य के ३०६-३२०।[1]

—:o:—

[पूर्ण संख्या ४३४] पत्र

पण्डित भीमसेन जी आनन्दित रहो।

अब तुमने ८ दिन पीछे चिट्ठी भेजना बन्द क्यों कर दिया। बराबर आठ दिन पीछे चिट्ठी भेजा करो। और यह लिखा करो कि इस सप्ताह में इतनी पुस्तकें छपीं और यह-यह काम हुआ। और अब क्या होता है। आगे सप्ताह में कौन-कौन काम होनेवाला है। और जब-जब चिट्ठी लिखा करो मुंशी जी से पूछ देखा करो कि इन ८ दिनों में कितनी पुस्तकें छपीं। और जब-जब छप कर तैयार हुआ करें सब गण कर संख्या लिखा करो। और मुंशी जी तो माहवारी आमदनी बिक्री के रुपयों का हिसाब चिट्ठी [में] लिखते ही हैं। तथापि तुम भी बखत-बखत सब पूंछ लिया करो। और मुंशी जी से कहना कि तुमको कुछ भी शङ्का न करनी चाहिये। आप इस्तिफा शरकारी नौकरी का दे दीजिए जबतक तुम काम करने वाले हो, जब तक तुम्हारे शरीर में प्राण है और सामर्थ्य है तब तक आनन्द में काम किया करो और पश्चात् भी तुम्हारी सलाह से काम हुआ करेंगे और **वसीयतनामा**[2] की सभा के सभासद सब आर्य्यसमाज के हैं। किसी प्रकार की हानि उनके लिये न करेंगे। और निश्चय है कि मुंशीजी भी ऐसे नहीं हैं कि कभी धर्मविरुद्ध काम करें। और वसीयतनामे में यह अवकाश रखा है कि चाहे जिसको रजष्टरी जितने अधिकार वा धन देने आदि के लिये मैं करा दूंगा। उसका पूरा करना सभा को अवश्य होगा। और अधिक न्यून अदल बदल वा दूसरा वसीयतनामा करने का

---

१. इस पारसल की सूचना पूर्ण संख्या ४३२ के पत्र में है।

२. यह वसीयतनामा [=स्वीकार-पत्र] १३ अगस्त सन् १८८० को रजिस्ट्री कराया गया था। उसे हम आगे पूर्ण संख्या ४४७ पृष्ठ ४८८ पर छाप रहे हैं।

अधिकार मैंने अपना पूरा रखा है। चाहे किसी सभासद को निकाल दूं वा किसी अन्य सभासद को भरती करदूं। इत्यादि नियम इसीलिये रखे हैं जो चाहें हम कर सकते हैं। ये सभासद मुंशीजी के सुहृद् ही हैं। और सब विद्वान् और धार्मिक हैं। किसी
५ के लिये अन्याय की वृत्ति नहीं करते तो क्या मुंशी जी के लिये अन्यथा प्रवृत्ति करने को उद्यत हो सकते हैं। कभी नहीं। क्योंकि धार्मिक लोग सदा धर्मप्रिय और अधर्मद्वेषी ही होते हैं। क्या मैं वा वे सभासद मुंशी जी को परोपकार के लिये प्रवृत्त हुए नहीं जानते हैं। इस से यह पत्र मुंशी बखतावर सिंह जी को एकान्त में सुना
१० देना। और इस पत्र को अपने पास रखा चाहें तो दे देना। तुझको यह पत्र इसलिये लिखा है कि तू भी इस का साक्षी रहे। और यह लेख मैंने अपने हाथ से इसलिए किया है कि यह बात गुप्त रहे और समय पर काम आवे।[1]

ह० दयानन्द सरस्वती

—:०:—

१५ [पूर्ण संख्या ४३५] पत्र

ठाकरदास जी योग नमस्ते!

पत्र आपका संवत् १९३७ आषाढ़ सुदी पञ्चमी[2] पञ्जाबी का लिखा हुआ स्वामी जी के पास पहुंचा। देख कर अभिप्राय जान लिया। उस के उत्तर लिखने के लिये स्वामी जी ने मुझ को आज्ञा
२० दी है इस से आपको मैं लिखता हूं।

बड़े आश्चर्य की बात है कि जो लोग विद्वान् नहीं होते, वे ही अन्यथा बातों के लिखने में प्रवृत्त होकर अपनी हानिमात्र कर बैठते हैं क्योंकि उनको अपनी और पराई बातों की समझ तो होती ही नहीं। इस से अपने आप गढ़ा खोद उस में आप ही गिर पड़ते
२५ हैं। तुम्हारे लेख से हम को यह विदित हुआ कि आप किसी विद्या

---

१. यह पत्र आर्यदर्पण मई सन् १८८६ पृ० ११७-११८ पर छपा था। हमने इसे वहीं से लेकर यहां धरा है। प्रकरण से जुलाई १८८० में लिखा गया प्रतीत होता है।

२. १२जुलाई १८८०। ठाकरदास ओसवाल का यह पत्र और इससे
३० पूर्व का पत्र तीसरे भाग में देखें।

को न पढ़ें और न किसी विद्वान् से कभी तुमने संग किया है, नहीं तो स्वामी जी के लेख के अभिप्राय को क्यों न समझ लेते ? और अपना लेख अपने अभिप्राय के विरुद्ध क्यों लिखते ? देखिये, जब स्वामी जी ने बारहवें समुल्लास में अनेक ठिकानों में यह चाहे अर्थात् जैन लोग चाहे ऐसा कहते हैं लिखा ही था फिर आपने यह क्यों पूछा कि किस शास्त्र ग्रन्थ के अनुसार छापा है ? इस लेख से विदित होता है कि आप जिस सम्प्रदाय में हैं जब उसी का हाल ठीक नहीं जानते तो दूसरे जैनियों के सम्प्रदायों की बातों को कैसे जानने में समर्थ हो सकते हैं।

और इस से यह भी विदित होता है कि आप और आप का कोई संगी भी संस्कृत और भाषा को नहीं पढ़े हैं। जब स्वामी जी ने यह लिखा है कि जैन लोग ऐसा कहते हैं फिर क्या तुम्हारा लिखना कि किस शास्त्र और ग्रन्थ की यह बात है, मिथ्या नहीं है। और जो तुमने श्लोक लिखे हैं वे ही स्वामी जी के सब लेख में प्रमाणभूत हैं। परन्तु जो तुमने अग्निहोत्र,वेद तीन त्रिपुण्ड्र भस्म-धारण आदि बुद्धि और पुरुषार्थ से हीन मनुष्यों की जीविका, स्वभाव से जगत् की व्यवस्था, वर्ण और आश्रमों की क्रिया सब निष्फल हैं लिखा, क्या ये बातें तुम्हारा सर्वस्व नीलाम होने में थोड़ा अपराध है। मैं आप से सुहृद्ता से लिखता हूं कि इस विषय को आप झूठा कभी मत समझना। इस में सब जैन मत वालों की सम्मति ले लीजिये जैसे कि हम सब आर्यों की तुम्हारे सामने अदालत करने में तन मन धन से निश्चित है। क्योंकि तुम जैन लोगों ने परम पवित्र सब सत्य विद्याओं से युक्त, सब मनुष्यों के लिये अत्यन्त हितकारी ईश्वरोक्त वेदों और वेदानुकूल अन्य सच्छास्त्रों की निन्दा और इन परोपकारी पुस्तकों के नाश करने से इतनी हानि की और करनी चाहते हो कि जिस में सब जैनियों का तन मन और धन लग जावे तो भी नालिश की डिगरी पूरी न होगी। इस लिये तुम सब जैनियों को विज्ञापन दे दो कि वह भी सब तुम्हारे सहायक हो के इस मामला को हम लोगों से चला सकें। तुम सब इसमें तैयार हो जाओ जैसे कि हम लोग सत्य और असत्य के निश्चय करने में तत्पर हैं। यह अपने मनमें बड़ा विचार कर लीजिएगा।

हम आर्यों को वैष्णव आदि के समान कभी मत समझ लेना कि जैसे उनके रथ आदि निकालने के विषय को अदालत से जीत लेते हो वैसे हमारे साथ कभी न कर सकोगे। क्योंकि जैसे पाषाण आदिक मूर्तिपूजक तुम हो वैसे वे भी हैं। और हम हैं परमेश्वर
५ पूजक और तुम हो अनीश्वरवादी, अर्थात् स्वत:सिद्ध अनादि ईश्वर को नहीं मानते। इत्यादि हेतुओं से तुम्हारा पराजय हमारे सामने होता किसी प्रकार असम्भव और कठिन नहीं है। इस लिये तुमको नोटिस देते हैं कि तुम आपस में मिलकर इस मामला को चलाओ। और जब तुम्हारी योग्यता हमारे सामने कम दीखती है तो स्वामी
१० जी के सामने तुम्हारी क्या योग्यता हो सकती है? कभी नहीं। देखना तुम्हारे हजारों ग्रन्थों से वेदादि सच्छास्त्रों की मिथ्या निन्दा कचहरी में हम सब हाकिमों आदि के सामने ठीक-ठीक सिद्ध करदेंगे। इसमें कुछ भी सन्देह मत जानना। जितना तुम्हारा सामर्थ्य हो उतना खर्च हो जाने पर भी आप लोगों को बचना अति
१५ कठिन देख पड़ता है। और एक यह बात भी करो कि जैसे हमारे बीच में स्वामी जी बहुत से उत्तम विद्वान् हैं वैसे जो कोई एक तुम्हारे मध्य में सर्वोत्कृष्ट विद्वान् हो उस को स्वामी जी के सामने खड़ा कीजिए कि जिस से तुम और हमको वैदिक और जैन मत के चर्चा में कुछ आनन्द प्राप्त हो और अन्य मनुष्यों को भी लाभ
२० पहुंचे। हमारे इस लेख को नि:सन्देह सत्य और मूल मन्त्र तथा सूत्र के तुल्य समझना कि इतने ही लिखने से सब कुछ जानियेगा। तुम्हारे सामने इससे अधिक लिखना हमको आवश्यक नहीं, किन्तु जब-जब जहां-जहां जैसा प्रकरण आवेगा तब-तब वहां-वहां वैसा-वैसा ही हम लोग तुमको ठीक-ठीक साक्षात् करा दिया करेंगे।
२५ ऐसा निश्चित जानो। जैसे यह पत्र हम लोग वहां गुजरांवाला के आर्यसमाज के द्वारा ही भेजते हैं वैसे आप लोग वहीं के समाज द्वारा ही हमारे पास पत्र भेजा कीजिए।

मिति श्रावण वदी ५ सोमवार संवत् १९३७।'[1]

---

१. १६ जुलाई १८८०। पं० लेखरामकृत उर्दू जीवन चरित पृष्ठ
३० ६८५,६८६ (हिन्दी सं० पृष्ठ ७०५,७०६) पर यहीं तक पत्र उद्धृत है। और अन्त में "दयानन्द सरस्वती" लिखा है। वस्तुतः यह पत्र आनन्दी-

'देखो तुम को न भाषा, न संस्कृत और कोई दर्शनविद्या आती है। उस का यह दृष्टान्त है—

अशुद्ध	शुद्ध	अशुद्ध	शुद्ध
श्लोक	श्लोक:	शीतं स्पर्श |	| शीतं स्पर्श
ज्जीवसु	ज्जीवेत्सु	तथानिल: |	| स्तथानिल:
पिवेत	पिबेत्	तस्मात स्वा	तस्मात्स्या
वेदात्रि	वेदास्त्रि	फलदायक:	फलदायिका:
जौविकेति	जीविकति	त्रिदण्डमस्म	त्रिदण्डं भस्म
बृहस्पति	बृहस्पति:	धातृमिता	धातृनिर्मिता

अब आप लोगों ने अदालत करने की बात लिखी, तब हम ने इतनी लिखी नहीं तो हम कुछ भी न लिखते आनन्दीलाल[2]
मन्त्री आर्यसमाज मेरठ

—:०:—

[पूर्ण संख्या ४३६] विज्ञापन

॥ ओ३म् ॥

॥ विशिष्ट विज्ञापन ॥[3]

॥ सब सज्जनों को ॥

विदित हो कि आर्यसमाज और थियोसोफीकल सोसायटी का

लाल के हस्ताक्षरों से गुजराँवाला भेजा गया था। इस के लिखानेवाले, जैसा पत्र के आरम्भ में लिखा है, श्री स्वामी जी ही थे।

१. यहां से लेकर अन्त तक का भाग 'दयानन्द सरस्वती मुखचपेटिका' के पृष्ठ ६-७ पर मिलता है। श्री पं० लेखरामजी ने यह अंश सम्भवत: संक्षेप की दृष्टि से छोड़ा होगा। श्री पं० भगवद्दत्तजी ने इतना तो लिख दिया कि 'दयानन्द मुखचपेटिका' में आगे कुछ और पंक्तियां हैं, (द्र०—पत्र और विज्ञापन संस्क० १-२)। परन्तु उन्होंने इन्हें क्यों छोड़ दिया, यह हमारी (यु० मी०) समझ में नहीं आया।

२. दयानन्द सरस्वती मुख चपेटिका के लेखानुसार ये हस्ताक्षर अंग्रेजी में थे।

३. इस विज्ञापन के मुद्रित होने के स्थानों का निर्देश आगे पृष्ठ ४७३ की टिप्पणी १ में देखें।

जैसा सम्बन्ध है वैसा प्रकाशित कर देना मुझको अत्यन्त उचित इसलिये हुआ कि इस विषय में मुझ वा अन्य से बहुत मनुष्य पूछने लगे और इस का ठीक मतलब न जाना उलटा निश्चय कर कहने भी लगे कि आर्य्यसमाज थियोसोफीकल सोसायटी की शाखा है। ५ इत्यादि भ्रम की निवृत्ति कर देनी आवश्यक हुई। जो ऐसी-ऐसी बातों के प्रसिद्ध रीति से उत्तर न दिये जायं तो बहुत मनुष्यों को अत्यन्त भ्रम बढ़ कर विपरीत फल होने का सम्भव हो जाय। इसलिये सब आर्य्य और अनार्य्यों को इसका सत्य-सत्य वृत्तान्त विदित करता हूं कि जिससे सत्य [में] दृढ़ता और भ्रम का उच्छेद १० हो के सब को आनन्द ही सदा बढ़ता जाय॥

बाबू हरिश्चन्द्र चिन्तामणि जो किसी समय मुम्बई आर्य्यसमाज के प्रधान थे उनसे न्यूयार्क नगर एमिरिका को थियोसोफिकल सोसायटी के प्रधान एच० एस० करनेल ओलकाट साहब बहादुर और एच० पी० मेडम ब्लेवस्टिकी आदि से कुछ दिन आगे पत्र १५ द्वारा एक दूसरी सभा के नियम आदि जान के सम्वत् १९३५ चैत्र[1] में मेरे पास भी पत्र न्यूयार्क से आया था कि हम को भी आर्य्यावर्त्तीय प्राचीन वेदोक्त धर्मोपदेश विद्या दान कीजिये। मैंने उसके उत्तर में अत्यन्त प्रसन्नता से लिखा कि 'मुझसे जितना उपदेश बन सकेगा, यथावत् करूंगा'।[2] इस के पश्चात् उन्होंने एक २० डिपलोमा मेरे पास इसलिये भेजा[3] जो थियोसोफिकल सोसायटी

---

१. यह पत्र करनैल आल्काट ने १८ फरवरी १८७८ को न्यूयार्क से भेजा था। ऋ. द. को यह चैत्र सं० १९३५ में मिला। चैत्र शुक्ला १ से सं० १९३५ का आरम्भ हुआ। अत: यह चैत्र के शुक्ल पक्ष की किसी तिथि ३ अप्रेल से १७ अप्रेल १८७८ के मध्य मिला। इसका उत्तर ऋ० द० ने २५ वैशाख कृ० ५ सं० १९३५ (२१ अप्रेल १८७८) को दिया। यह उत्तर पूर्ण संख्या १५१ पृ० १९२-१९४ पर छपा है। करनैल आल्काट का १८ फरवरी १८७८ का पत्र तीसरे भाग में देखें।

२. द्र० — पूर्णसंख्या १५१, पृष्ठ १९३, पं० १६-१७। हिन्दी अनुवाद पृष्ठ १४८।

३. इस का उल्लेख पूर्णसंख्या १७६ पृष्ठ २१४, पं० १३, १४ में है। ३० इसके लिये कर्नल आल्काट का २३ मई १८७८ का पत्र भी देखें। यह तीसरे भाग में छपा है।

आर्य्यावर्तीय आर्य्यसमाज की शाखा करने के विचार का निमित्त था। जब वह डिप्लोमा यहां से फिर वहां गया, सभा करके सभासदों को सुनाया, तब बहुत से सभासदों ने इस बात में प्रसन्न हो कर इसको स्वीकार किया, और बहुतों ने कहा कि हम ठीक-ठीक जान के पश्चात् इस बात का स्वीकार करेंगे ॥ ५

जब वहां ऐसा विरुद्ध पक्ष हुआ तब फिर मेरे पास वहां से पत्र आया कि अब हम क्या करें[1] ? इस पर मैंने पत्र लिखा कि "यहां आर्य्यावर्त्त में अब तक भी बहुत मनुष्य आर्य्यसमाज के नियमों को स्वीकार नहीं करते, थोड़े से करते हैं, तो वहां वैसी बात के होने में क्या आश्चर्य है। इसलिये जो मनुष्य अपनी प्रसन्नता से आर्य्य- १० समाज के नियमों को मानें वे वेदमतानुयायी और जो न मानें वे केवल सोसाइटी के सभासद रहें, उन का अलग हो जाना अच्छा नहीं" इत्यादि विषय लिख के मैंने बाबू हरिश्चन्द्र चिन्तामणि के के पास पत्र भेजा[2] और उनको लिखा कि इस पत्र की अंग्रेजी कर के शीघ्र वहां भेज दीजिये। परन्तु उन्होंने वह पत्र न्यूयार्क में न १५ भेजा, जब समय पर पत्र का उत्तर वहां न पहुंचा तब जैसा मैंने उत्तर लिखा था वैसा ही वहां किया गया, कि जो वेदों को पवित्र सनातन ईश्वरोक्त मानें वे वैदिकी शाखा में गिने जायें, और वह आर्य्यसमाज की शाखा रहे, परन्तु वह सोसायटी की भी शाखा रही क्योंकि वह सोसायटी की भी एक अङ्गवत् है अर्थात् न आर्य्य- २० समाज थियोसोफिकल सोसायटी की शाखा और न थियोसोफिकल सोसायटी आर्य्यसमाज की शाखा है, किन्तु जो वैदिकी शाखा थियोसोफिकल में है जिसमें एच्० एस्० करनेल ओलकाट साहब बहादुर और एच्० पी० मेडम ब्लेवस्टकी आदि सभासद हैं वह आर्य्यसमाज और सोसायटी की शाखा है। ऐसा सब सज्जनों को २५ जानना उचित है। इससे बिपरीत समझना किसी को योग्य नहीं।

देखिये यह बड़े आश्चर्य की बात हुई है कि जिस समय मुम्बई में आर्य्यसमाज का स्थापन हुआ उसी समय न्यूयार्क में थियोसोफिकल सोसायटी का आरम्भ हुआ। जैसे आर्य्यसमाज के नियम[3]

१. करनैल आल्काट का यह पत्र हमें प्राप्त नहीं हुआ। ३०

२. ऋ० दयानन्द का यह पत्र हमें प्राप्त नहीं हुआ।

३. नियम अर्थात् 'उद्देश्य'।

लिखके माने गये वैसे ही नियम थियोसोफिकल सोसायटी के निश्चित हुए, और जैसा उत्तर मैंने तीसरे पत्र[1] में लिखके वैदिकी शाखा और सोसायटी के लिये भेजा था उस के पहुंचने के पूर्व ही न्यूयार्क में वैसा ही कार्य किया गया। क्या ये सब कार्य्य ईश्वरीय ५ नियमों के अनुसार नहीं हैं? क्या ऐसे कार्य्य अल्पज्ञ जीव के सामर्थ्य से वाहर नहीं हैं? कि जैसे कार्य्य पृथिवी के ऊपर जिस समय में हों वैसे ही भूमि से तले अर्थात् एमरिका में उसी समय हो जांय। ये बड़ी अद्भुत बातें जिसकी सत्ता से हुई हैं अर्थात् पांच हजार वर्षों के पश्चात् आर्य्यावर्त्तीय धार्मिक मनुष्यों और [पाता- १० लस्थ] अर्थात् एमरीका के निवासी मनुष्यों का वेदोक्त सनातन सुपरीक्षित धर्म्य व्यवहारों में बान्धवीय प्रेम प्रकट किया है, उस सर्वशक्तिमान् परमात्मा को प्रार्थना-पुरस्सर कोटि कोटि धन्यवाद देता हूं; कि हे सर्वशक्तिमन्! सर्वव्यापक! दयालो! न्याय- कारिन्! परमात्मन् जैसा आप ने कृपा से यह कृत्य १५ किया है वैसे भूगोलस्थ सब धर्मात्मा विद्वान् मनुष्यों को उसी वेदोक्त सत्य मार्ग में सुस्थिर शीघ्र कीजिये कि जिससे परस्पर विरोध छूट, मित्रता होके सब मनुष्य एक दूसरे की हानि करने से पृथक् होके अन्योन्य का उपकार सदा किया करें। वैसे ही हे प्रिय- वर मनुष्यो आप लोग भी उसी परब्रह्म की प्रार्थना पूर्वक पुरुषार्थ २० कीजिये, कि जिससे हम सब लोग एक दूसरे को दुःखों से सदा छुड़ाते और आनन्द से युक्त रहें, और दूसरों को भी सर्वसुखों से युक्त करें। हे बन्धुवर्गो! जैसा आनन्द मनुष्यों को छः हजार वर्षों के पूर्व था वैसा समय हम लोग कब देखेंगे।

धन्य हैं वे मनुष्य कि जो जैसा अपना हित चाहते और अहित २५ नहीं चाहते थे और वैसा ही वर्त्तमान सब के साथ सदा करते थे। क्या यह छोटी बात है? इसे लिखने में मेरा अभिप्राय यह है कि जो जो बातें सब मनुष्यों के सामने सत्य हैं, जिनके मिथ्या होने के लिये कोई भी मनुष्य साक्षी न दे सकता है उन उन बातों को धर्म, उन से विरुद्ध बातों को अधर्म जान मान के भूगोलस्थ मनुष्यों को ३० धर्म की बातों का ग्रहण करना, और अधर्म की बातों का छोड़

१. यह पत्र हमें प्राप्त नहीं हुआ।

देना, क्या कठिन और असम्भव है ? जिस लिये ऐसा ही वर्तमान छः हजार वर्षों से पूर्व था इसीलिये कोई दूसरा मत प्रचरित नहीं होता था, जैसे अज्ञान से आजकल मनुष्य एक एक अपनी अपनी कौम और एक एक अपने अपने मजहब की बढ़ती और अन्य सब की हानि करने में प्रवृत्त हो रहे हैं वैसे वैदिक मत के प्रचार समय में न था; किन्तु सब मनुष्य सब की बढ़ती करने में प्रवर्तमान होकर किसी की हानि करना कभी न चाहते थे सब को अपने समान समझ दुःखी किसी को न करते, और सब को सुखी किया करते थे, वैसा ही अब भी होना अवश्य चाहिये। क्या जब सब धार्मिक विद्वान् मनुष्य पुरुषार्थ से निःशङ्कित सत्य बातों में एक सम्मति और मिथ्या बातों में एक विमति कर एक मत किया चाहें तो असम्भव और कठिन है ? कभी नहीं। किन्तु सम्भव और अतिसुगम है। जितना अविद्वानों के विरोध और मेल से मनुष्यों को हानि और लाभ नहीं होता, उतने से हजार गुणा हानि और लाभ विद्वानों के विरोध और मेल से होता है। इस लिये सब सज्जन विद्वान् मनुष्यों को अत्यन्त उचित है कि शीघ्र विरुद्ध मतों को छोड़ एक अविरुद्ध मत का ग्रहण कर परस्पर आनन्दित हों। यही वेदादि शास्त्र प्राचीन सब ऋषि मुनि और मेरा भी सिद्धान्त और निश्चय है।

बुद्धिमानों के सामने अधिक लिखना आवश्यक नहीं क्योंकि वे थोड़े ही लेख में सब कुछ जान लेते हैं ॥ ओ३म् ॥

मिती श्रावण वदी ५, सोमवार सम्वत् १९३७ ॥'

हस्ताक्षर - स्वामी दयानन्द सरस्वती

- :०: -

[पूर्ण संख्या ४३७] पत्र

मुन्शी बख[तावर सिंह जी आ]नन्दित रहो

तुमने जो पारसल भेजा हमारे पास पहुंचा। जो तुमने लिखा

---

१. २३ जुलाई १८८०। यह विज्ञापन आर्य दर्पण मई १८८० के टाइटल पेज पर तथा यजुर्वेद भाष्य अङ्क १६, १७ (सम्मिलित) के टाइटल पेज ३, ४ पर छपा था। यजुर्वेदभाष्य में 'सोमवार' पद नहीं है। पं० लेखरामकृत जीवनचरित, हिन्दी सं०, पृष्ठ ८७३-८७५।

कि पन्द्रमा अङ्क एक और सोलहवां सत्रहवां इकट्ठा निकालेंगे सो बहुत अच्छी बात है। चारों वर्षों के पृथक् पृथक् चन्दा का विज्ञापन टाटल पेज पर छाप दो[1] कि जिनने जितना दिया हो उतना छोड़ बाकि सब दाम भेज दें। और आर्यसमाज –थियोसोफिकल सुसा-
५ यटी का विज्ञापन पत्र[2] लिख कर हम भेजते हैं। सो छपवा कर सब आर्यसमाजों में दश-दश और सुसायटीओं और करनेल ओल-काट साहेब को दो चार भिजवा दो और हमारे पास भी दश पांच भेज दो। और एक कार्ड हमारे पास आया है। तुमारे पास भेजते हैं चिट्ठी के साथ। एक नई बात हुई है कि मुन्शी इन्द्रमणि जी को
१० मुसलमानों ने बड़ा दिक्क किया है। यह बात किसी से कहने योग्य नहीं है। आगे इसका हम कुछ विचार करते हैं। सो आपके पास में विदित करेंगे। वेदभाष्य के [पत्रे भी तैयार] हुए हैं। दो चार दिन में भेजेंगे।

१४) रुपैये चौधरी देवीसिहजी अ वाले जिले मेरठ के और—
१५ १२) रुपैये बाबू गणेशीलाल वा विहारीलाल जी मेरठवालों के और—
२१ रुपैये ठाकर शेरसिह जी कर्णवासवाले के हमारे पा आये। इसका नाम वेदभाष्य के टाटल पेज पर छपा देना।[3]

मिती श्रावण वदी ६ मंगलवार संवत् १९३७।[4]

[दयानन्द सरस्वती]
२०

—:०:—

१. यह विज्ञापन यजुर्वेद अङ्क १६, १७ (सम्मिलित) के टाइटल पेज ४ पर छपा है। उसे परिशिष्ट संख्या ३ में दे रहे हैं।

२. देखो ऊपर पूर्णसंख्या ४३६ का विशिष्ट विज्ञापन।

३. इस रकम की सूचना यजुर्वेदभाष्य के किस अङ्क में छपी, हमें ज्ञात
२५ नहीं हो सका। हमारे यजुर्वेदभाष्य के प्रथम संस्करण के कुछ अङ्कों के टाइटल पेज नहीं हैं। इस विषय में ऋ० द० का श्रावण सुदि ६ सं० १९३७ (१२ अगस्त १८८०) का तथा श्रावण कृष्ण १३ बृहस्पतिवार सं० १९३९ (१३ जुलाई १८८२) का पत्र भी देखें।

४. २७ जुलाई सन् १८८० को मेरठ से बनारस भेजा गया। म०
३० मामराज जी ने मेरठ से जुलाई सन् १९४५ में ला० रामशरणदासजी के पुराने पत्रों में से खोजा। मूल पत्र हमारे संग्रह में सुरक्षित है।

[पूर्ण संख्या ४३८] पत्र

ता० १४ जुलाई[1] सन् १८८०

श्रीयुत प्रियवर एच् एस् करनेल ओलकाट साहेब तथा एच् पी ब्लेवस्तिकी जी आनन्दित रहो। नमस्ते। अब मेरा शरीर नीरोग हो के स्वस्थानन्द में है। आशा है कि आप लोग भी आनन्द में होंगे। सुना था कि आप लोग लंका अर्थात् सिलौन की यात्रा के लिये गए थे। वहां क्या-क्या आनन्द की बातें हुईं और कुशल क्षेम आए ही होंगे। मैं इस समय मेरठ में ठहरा हूं। एक मास भर रहूंगा।। जैसा दृढ़ता से वेदों को परम पवित्र सनातन ईश्वरोक्त सब का हितकारी आप ने अपने नागरी पत्र में लिखकर काशी को मेरे पास भेजा था[2] उस को देख मैं और समस्त विद्वान् लोग बहुत प्रसन्न हुए। सत्य है कि **अङ्गीकृतं सुकृतिनः परिपालयन्ति** जो धर्मात्मा विद्वान् पुरुष हैं वे जिस धर्म की बात को ग्रहण करते हैं उस को कभी नहीं छोड़ते। अब मैं जो थियोसोफीकल सुसायटी में वैदिकी शाखा है वह आर्य्यसमाज और थियोसोफीकल सुसायटी की भी शाखा है। न आर्य्यसमाज थियोसोफीकल सुसायटी की शाखा और न थियोसोफीकल सुसायटी आर्य्यसमाज की शाखा है; किन्तु जो इन दो समाजों के धर्म के सम्बन्धार्थ प्रेम का निमित्त वैदिकी शाखा है वही परस्पर सम्बन्ध का हेतु है। इत्यादि बातों की प्रसिद्धि जैसी आर्य्यसमाजों में मैं करूंगा वैसी प्रसिद्धि थियोसोफीकल सुसायटी में भी आप अवश्य करेंगे। इस बात का गुप्त रहना ठीक नहीं। क्योंकि आगे आर्यसमाज वैदिकी शाखा और थियोसोफीकल सुसायटी के सभासदों को, जैसा पूर्वोक्त सम्बन्ध है वैसा ही जानना, मानना, कहना और प्रसिद्धि करना सर्वदा उचित होगा, अन्यथा नहीं। ऐसी प्रसिद्धि हुए पर किसी को कुछ भ्रम न रहकर सुनिश्चय से सब को आनन्द होता जायेगा। और जो मैंने सिनट[3] साहेब से कहा था वह ठीक है। क्योंकि मैं इन तमाशे की

---

१. १४ जुलाई को लिखा गया होगा, परन्तु श्रावण वदि ६ तदनुसार २७ जुलाई १८८० को अंग्रेजी में अनुवाद करा के भेजा गया होगा। देखो पत्र के अन्त में श्रावण की तिथि।

२. यह पत्र हमें प्राप्त नहीं हुआ।

३. पायोनियर पत्र इलाहाबाद के सम्पादक सिनेट साहब ने १८ फरवरी

बातों को देखना दिखलाना उचित नहीं समझता। चाहे वे हाथ की चालाकी से हो चाहें योग की रीति से हों। क्योंकि योग के किए कराये बिना किसी को भी योग का महत्त्व वा इसमें सत्य प्रेम कभी नहीं हो सकता, वरण सन्देह और आश्चर्य्य में पड़ कर उसी
५ तमाशे दिखलाने वाले की परीक्षा और सब सुधार की बातों को छोड़ तमाशे देखने को सब दिन चाहते हैं, और उसके साधन करना स्वीकार नहीं करते। जैसे सिनट साहेब को मैंने न दिखलाया और न दिखलाना चाहता हूं, चाहे वे राजी रहैं चाहे नाराज हों क्योंकि जो मैं इस में प्रवृत्त होऊं तो सब मूर्ख और पण्डित मुझ से यही
१० कहेंगे कि हम को भी कुछ योग के आश्चर्य काम दिखलाइये, जैसा उसको आपने दिखलाया, ऐसी संसार की तमाशे की लीला मेरे साथ भी लग जाती जैसी मैडम एच् पी ब्लेवस्तिकी के पीछे लगी है। अब जो इनको विद्या धर्मात्मता की बातें हैं कि जिनसे मनुष्यों के आत्मा पवित्र हो आनन्द को प्राप्त हो सकते हैं उन का पूछना
१५ और ग्रहण करने से दूर रहते हैं। किन्तु जो आता है मेडम साहेब आप हम को भी कुछ तमाशा दिखलाइये। इत्यादि कारणों से इन बातों में प्रवृत्त नहीं करता न कराता हूं। किन्तु कोई चाहे तो उस को योग रीति सिखला सकता हूं कि जिस[1] से वह स्वयं योगाभ्यास कर सिद्धियों को देख लेवे। इस में उत्तम बात दूसरी कोई भी
२० नहीं। मैं बहुत प्रसन्नता से आप लोगों को लिखता हूं कि जो आप

१८८० को ऋ० द० को एक पत्र लिखा था (देखो तीसरे भाग में) उसमें योग के चमत्कार देखने की इच्छा प्रकट की थी। उसके उत्तर में ऋ० द० ने पूर्ण संख्या ३९१ का पत्र लिखा था। उसके अनुसार ऋ० द० जब इलाहाबाद गये होंगे तब बातचीत हुई होगी। उसी की ओर यह संकेत है।

२५ १. इस पत्र का इतना अंश हमने पहले परोपकारी पत्र से छापा था। "जिस" से आगे कुछ शब्द परोपकारी के सम्पादक ने अपनी ओर से बना कर धरे थे। महात्मा मुंशीराम जी ने पत्र व्यवहार पृष्ठ ४४८ में 'स से वह स्वयं" से लेकर पाठ छापा था। प्रतीत होता है कि परोपकारी में छापने वालों को मूल पत्र पृष्ठ ३ नहीं मिला होगा। और म० मुंशीराम
३० जी को पहले दो पृष्ठ नहीं मिले। वहीं से हमने भी पहले इस एक पत्र को दो पत्रों के रूप में छापा था। अब सङ्गति मिलाकर पढ़ने से ज्ञात हुआ कि यह एक ही पत्र है। इसी लिए अब यह यथार्थ रूप में छापा गया है।

ने ईसाई आदि आधुनिक मत छोड़, परम पवित्र सनातन ईश्वरोक्त वेदमत का स्वीकार कर, इसके प्रचार में तन मन और धन भी लगाते हो। और उस बात से अति प्रसन्नता मुझको हुई कि जो आपने यह लिखा कि कभी आप भी वेदों को छोड़ दें तो भी हम लोग उन को न छोड़ेंगे। क्या यह बात छोटी है? यह परमात्मा ५ की परम कृपा का फल है कि जिसने हम और आप लोगों को अपने वेदोक्त मार्ग में निश्चय पूर्वक प्रवृत्त किए। उस को कोटि-कोटि धन्यवाद देना भी थोड़े हैं। जैसी उस ने हम और आप लोगों पर करुणा की है, वैसी ही कृपा सब पर शीघ्र करे कि जिससे सब लोग सत्य में चलें और झूठ मतों को छोड़ देवें। कि जैसा अपने आत्मा १० अत्यन्त आनन्दित है वैसे सब के आत्मा हों। और एक आनन्द की बात सूचना की करता हूं कि जिस को सुन आप लोग बहुत आनन्दित होंगे। सो यह है कि एक वसीयतनामा १—अठारह पुरुष जिन में अर्थात् एक आप और दूसरी ब्लेवस्तिकी और शोलह पुरुष आर्यावर्त्तीय आर्यसमाज के प्रतिष्ठित पुरुष हैं। इन आप सब दो १५ लोगों के नाम पर पत्र और नियम लिख रजिष्टरी कराके आप और सब लोगों के पास शीघ्र पत्र भेजूंगा[१] कि जिससे पश्चात् किसी प्रकार की गड़बड़ न होकर मेरे सर्वस्व पदार्थ परोपकार में आप लोग लगाया करें और मेरी प्रतिनिधि यह सभा समझी जावेगी। २०

इस लिए उस पत्र को आप लोग बहुत अच्छी प्रकार रखियेगा कि वह पत्र आगे बड़े बड़े कामों में आवेगा। किमधिलेखेन प्रियवरविद्वद्विचक्षणेषु।[२]

सं० १९३७ मि० श्रावण वदी ६ मंगलवार। ता० १४ जुलाई[३] सन् १८८०।[४]　　　　(दयानन्द सरस्वती)　२५

---

१. यह वसीयतनामा १६ अगस्त सन् १८८० को रजिस्ट्री कराया था। हम उसे आगे पूर्णसंख्या ४४७ पर छाप रहे हैं।

२. इस पर महात्मा मुंशीराम जी ने पत्र व्यवहार पृष्ठ ४४९ पर जो [टिप्पणी] दी है, उसके अनुसार यह पत्र पैंसिल से लिखा हुआ है।

३. २७ जुलाई १८८०। १४ जुलाई के विषय में पृष्ठ ४७५ टि० १ ३० देखो।

४. "इस पंक्ति से बहुत नीचे बाईं ओर "स्वामी जी" पैंसिल से लिखा

[पूर्ण संख्या ४३६] पत्र

Meerut
27th July 1880.[1]

My Dear Babu Mulrajji, M. A.

५ It is a long time since I have heard nothing from you, still I hope you are quite well and wish you to give me, in future, occassional, if not often, intimation, of your destination &c.

I am at Meerut for a fortnight last and intend staying १० here for about 20 days more.

I have a mind to address our Government on a subject which is unquestionably a matter of public good now wished for by hundreds of men who have attended to my lectures, &c. It is that Government may be moved to pass a regulation १५ by which children of widows be entitled to claim and obtain their rights of the property, both movable and immovable of their parents, anq that any one trying to injure the widow in any way be made liable to punishment by Government.

The results which I anticipate from the above are, that २० lives of thousands of children will be saved, miscarriages shall be minimised or not all, Niyog or remarriage of widows will thus be introduced at last &c. &c. &c. (sic) But this is a work not to be dealt with by men of ordinary abilities. I, therefore, leave the matter to you and ask you to frame regu- २५ lations worthy of the subject, giving everything requisite in detail. I hope you will agree with me and do the needful. I have given you only the hints, you have to think upon and frame what is called a law, complete in all respects, having sections, clause, &c. for every part of the point in view. This ३० draft regulation may be sent to me as soon as ready in a complete state for submission of Government under my

---

हुआ है, जो बतलाता है कि श्री स्वामी जी महाराज की ओर से जो पत्र कर्नल आलकाट साहब को लिखा गया, उस की यह कापी है" यह टिप्पणी भी महात्मा मुंशीराम जी की है। द्र० —उनका छपवाया पत्र-व्यवहार, ३५ पृष्ठ, ४४६।

१. श्रावण कृष्ण ६, मंगल, सं० १९३७।

signature but the sooner it is done so much the better.

There is a piece of bad news too which requires your advice and considerable efforts which it may be worthy of. I think you know well Munshi Indra Man of Muradabad. He is now president of the Arya Samaj there, and a personage of unri- ५ valled excellence. No, he is universally known and it is useless to enter into detail as regards him. The Mohammadans are his great enemies and have always been playing tricks to injure him but in vain. They have succeeded this time to mortify him to the very soul, and that injury is not to him १० alone, but for all the Aryas.

History of the case stands thus that a newspaper, called jam-i-jamshed of Muradabad published an article on 16th May last stating that Munshi Indra Man, enemy of Islam had published some books in these days against Mohammadanism १५ which will give rise to a general disturbance in the Mohammadan community, and that he will lose his life by similar acts one day or other. It is not known how the Magistrate and Collector of the city allowed him this liberty. Now I solicit the Government to order destruction of the books he २० has published and abolition of the Press.

The said newspaper was laid before Government (I mean H. E. the Lieutenant Governor) and enquiry made through District authorities, which unfortunately resulted on 24th instant in the inlliction of a fine of Rs. 500 on Munshi Indra २५ Man and the confiscation of all his books wiihout any due enquiry into the matter. As the matter is of great concern not only to Munshi Indra Man, but to our country and to all of us, I. therefore ask your advice in the matter how to proceed. In the meantime, arrangements will be made to pre- ३० fer an appeal in the case. Early answer with full directions to go in this critical matter is requested.

I have yesterday received a letter from a gentleman of Germany accepting instructions of our countryman in any act they like. (sic) This is a good chance indeed, and if you ३५ like to allow your brother to try his fortune, it is all that I

want. Any other Aryan worthy of the task, will also be welcome. Full particulars as to expense, voyage, &c. &c., will be communicated to you at leisure time.

All is well here and hope the same so be with you.

५ Hoping to hear from you soon.

I am.

Yours, & c.

(Sd.) Daya Nand Saraswati.

P. S.—After all. I again ask you to interest yourself in
१० this matter and expedite your advice & c.

[भाषानुवाद]

मेरठ

२७ जुलाई १८८०[1]

मेरे प्यारे बाबू मूलराज जी एम० ए०

१५ चिर काल से आप का कोई पत्र नहीं आया, फिर भी मैं आशा करता हूं कि आप सर्वथा अच्छे हैं और चाहता हूं कि भविष्य में यदि अधिक नहीं तो कभी-कभी अपने स्थानादि की सूचना देंगे।

मैं पिछले पक्ष से मेरठ में हूं और लगभग २० दिन और यहां ठहरने की इच्छा है।

२० मेरा विचार अपनी सरकार को एक ऐसे विषय पर लिखने का है जो निस्सन्देह जनता का हितकारी है जिसे अब मेरे व्याख्यानों आदि के सुनने वाले सैकड़ों पुरुष चाहते हैं। वह यह है कि सरकार को एक ऐसा नियम पास करने के लिये कहना चाहिये जिस से कि विधवाओं की सन्तान अपने पिताओं की स्थावर और जंगम सम्पत्ति के अधिकार को प्राप्त करे और
२५ उसे ले सके। और जो कोई विधवा को किसी प्रकार भी कष्ट दे वह सरकार का दण्ड भागी बने।

पूर्वोक्त बात से मैं इन फलों का विचार करता हूं कि हजारों बालकों के जीवन बचाये जांयगे गर्भपातन बन्द या कम हो जायगा, इस प्रकार नियोग या विधवाओं का पुनर्विवाह अन्ततः प्रचलित होगा··· । परन्तु इस काम
३० को साधारण योग्यता के पुरुष नहीं कर सकते, इस लिये मैं यह विषय आप पर छोड़ता हूं और चाहता हूं कि आप यथायोग्य नियम बनायें जिन में सब

१. श्रावण कृष्ण ६, मंगलवार, सं० १९३७।

आवश्यक बातें विस्तार से आजायें। मैं आशा करता हूं कि आप मेरे से सहमत होंगे और अवश्य काम करेंगे। मैंने आप को संकेत मात्र दिये हैं, आपने ही विचार कर नियम बनाना है, जो सब प्रकार से पूर्ण हो और जिस में प्रकृत बात के प्रत्येक भाग के लिये दफा आदि बनें। जब यह मसौदा पूर्णतया तय्यार हो जाये तो मुझे भेज दें। मैं इसे अपने हस्ताक्षर ५ सहित सरकार के पास भेजूंगा, और यह जितना शीघ्र हो उतना ही अच्छा है।

एक अशुभ समाचार भी है, जिस में आप की सम्मति और यथायोग्य बहुत परिश्रम की आवश्यकता है। मेरा विचार है आप मुंशी इन्द्रमण मुरादाबादी को भले प्रकार जानते हैं। वह अब वहां की आर्य्यसमाज के प्रधान १० हैं, और अद्वितीय योग्यता के पुरुष हैं। नहीं, वह सर्वत्र प्रसिद्ध हैं। अतः उनके विषय में अधिक कहना निरर्थक है। मुसलमान उनके बड़े शत्रु हैं और सदा निष्फल ही उन्हें कष्ट देने के उपाय घड़ते रहे हैं, अब वे उन्हें अत्यन्त बांध लेने में सफल हुए हैं, और यह हानि उन्हीं की नहीं, प्रत्युत सब आर्य्यों के लिये है। १५

मुकदमे का वृत्तान्त ऐसे है कि मुरादाबाद के एक पत्र जामेजमशेद ने गत १६ मई को एक लेख इस विषय का प्रकाशित किया है "कि इसलाम के शत्रु मुन्शी इन्द्रमण ने इन दिनों महम्मदी मत के विरुद्ध कुछ ग्रन्थ प्रकाशित किये हैं। इन से महम्मदी श्रेणी में एक सामान्य विप्लव हो जायगा, और वह एक न एक दिन अपने जीवन को खो बैठेगा। यह ज्ञात नहीं २० होता कि नगर के मजिस्ट्रेट और कलेक्टर ने उन्हें कैसे यह स्वतन्त्रता दे दी। अब मैं सरकार से प्रार्थना करता हूं कि वे उसके प्रकाशित ग्रन्थों को नष्ट न कर दे और प्रेस को तोड़ दे"।

पूर्वोक्त पत्र सरकार (मेरा अभिप्राय लाट साहब से है) के सामने रखा गया और जिला अफसरों द्वारा पड़ताल हुई। उसका दुर्दैव से २४ तारीख[1] २५ को यह फल निकला कि बिना किसी उचित पड़ताल के मुन्शी इन्द्रमन पर ५०० रुपये दण्ड हुआ और उनके सारे ग्रन्थ जब्त हुए। क्योंकि यह बात केवल मुन्शी इन्द्रमन के लिये ही बड़ी नहीं, प्रत्युत हमारे देश और

१. २४ जुलाई, १८८०। ३०

हम सब के लिये भी है, इस लिये मैं आप की सम्मति चाहता हूं कि इस विषय में क्या किया जाय ? इस अन्तर में मुकदमे की अपील दायर किये जाने का प्रबन्ध किया जायगा। इस सूक्ष्म विषय में पूर्णनिर्देशयुक्त उत्तर शीघ्र चाहिये।

५ मुझे कल जर्मनी से एक महाशय[1] का पत्र आया है। उस ने स्वीकार किया है कि वह हमारे देशीय लोगों को किसी भी विषय में शिक्षा देगा। यह निश्चय ही अच्छा अवसर है, और यदि आप अपने भ्राता को दैविक परीक्षा में डालना चाहते हैं, तो बस मैं यही चाहता हूं। कोई अन्य आर्य्य सज्जन जो इस काम के योग्य हैं, बड़ी प्रसन्नता से लिये जायेंगे।

१० व्यय, यात्रादि का पूर्ण ब्योरा अवकाश मिलने पर आप को लिखा जायगा।

यहां सब आनन्द है और आपका आनन्द चाहते हैं।

आशा है आप शीघ्र उत्तर देंगे।

मैं हूं आप का

ह० दयानन्द सरस्वती

१५ पुनः अन्ततः मैं पुनः कहता हूं कि आप इस विषय में ध्यान दें और अपनी सम्मति आदि से सूचित करें।

—:o:—

[पूर्ण संख्या ४४०] पत्र

मुंशी बखतावरसिंह जी आनन्दित रहो।

पत्र आपके बहुत से आये। वेदभाष्य का पुस्तक भी पहुंचा।

२० हिसाब तुमने नहीं भेजा। सो पिछले महीने [के] आर्यदर्पण का और अब का भेजो। मेला चांदापुर का जैसा हमने कहा था कि उर्दू और नागरी पृथक् पृथक् छापो सो क्यों नहीं छापा। तुमारे लेख से हम को कुछ सन्देह होता है। क्या तुमने अपने नाम से छापने का विचार किया है ? हमारी तो आज्ञा थी नहीं। अभी

---

२५ १. प्रो० जी वाईज एलक्ट्रंस् स्ट्रीट वेंडन जर्मनी के साथ श्री स्वामी जी महाराज का पत्रव्यवहार भारतीयों को कलाकौशल सिखाने के विषय में हुआ था। प्रो० जी० वाईज के ९ पत्र मास्टर लक्ष्मण जी द्वारा सम्पादित उर्दू जीवन चरित के परिशिष्ट में छपे हैं। प्रो० जी वाईज के पत्र यथास्थान तीसरे भाग में देखें। ऋ० द० ने जिस पत्र की ओर संकेत किया है,

३० वह प्रो० जी० वाईज का २९ जून १८८० का दूसरा पत्र है।

तो वहुत खर्च है। कुछ ठहर जाओ पीछे छापना। ये दो फरमे [के] पत्रे वेदभाष्य के दो दिन पीछे हम भेजते हैं। और वर्ष के अन्त में यह छाप दिया करो कि जिस जिस का जितना जितना बाकी हो वे भेज देवें। और यह भी छाप दो सतरहवें अङ्क के अन्त में कि जिसका रुपैया आज तक नहीं आया है उस के पास अठारहवां ५ अङ्क नहीं आवेगा। और लेने के लिये जैसा होगा उपाय किया जायगा।

मिती श्रावण वदी ३० गुरु० संवत् १९३७।[1]

हम कई वखत लिख चुके।[2] आप समझते क्यों नहीं। शायत् घबरा के देखते होंगे। अनाथ के पालन अर्थात् लावारस के लिये वे १० पांच सौ रुपैये बाबू दुर्गाप्रसाद जी के दिये हैं। (१०) रु० हमने। हम ये बात तीन वखत लिख चुके हैं।[3] दयानन्द सरस्वती

मेरठ

—:o:—

[पूर्ण संख्या ४४१] पत्र-सारांश

[मुंशी बखतावरसिंह] १५

ठाकुर बलवन्तसिंह जिला बुलन्दशहर, परगणे शिकारपुर ग्राम चन्दोख वाले के २५) रु० बाबत वेदभाष्य के हमारे पास जमा हुए।[4]

—:o:—

[पूर्ण संख्या ४४२] पत्र-सूचना

[लाला मूलराज जी] २०

---

१. ५ अगस्त सन् १८८०। गुरुवार को श्रावण वदी १४ है।

२. इस बात का उल्लेख पूर्णसंख्या ४२९ के पृष्ठ ४६० पर मिलता है। इसके अतिरिक्त किसी पत्र में इस का उल्लेख नहीं है। सम्भव है बीच के १-२ पत्र उपलब्ध न हुए हों

३. ता० २४ जुलाई सन् १९४५ को म० मामराज जी ने मेरठ निवासी २५ ला० रामशरणदास तथा उनके पुत्र ला० बनारसीदास जी रईस कोर्टवालों के सहस्रों पत्रों में से खोजा। मूल पत्र हमारे संग्रह में सुरक्षित है।

४. इस आशय का कोई पत्र लिखने का उल्लेख पूर्णसंख्या ४४४ के पत्र में मिलता है।

मुंशी इन्द्रमणि से सम्बद्ध उर्दू पत्र अंग्रेजी अनुवाद के लिये।[1]

—:०:—

[पूर्ण संख्या ४४३] गश्तीपत्र-सारांश

लाहौर अमृतसर आदि सब समाजों को[2]

मुंशी [इन्द्रमणि] जी पर जो अपराध भारतीय दण्ड विधान
५ धारा १९४ के आधीन मिस्टर मूल साहब बहादुर मैजिस्ट्रेट मुरादाबाद के न्यायालय में कायम किया गया है उस का उत्तर देने और सफाई पेश करने के लिये मुंशी जी को उनकी निर्दोषता का विचार करते हुए सहायता के रूप में रुपया देना कर्त्तव्य है।

[८ अगस्त १८८०]

—:०:—

१० [पूर्ण संख्या ४४४] पत्र

ओम्

मुंशी बखतावरसिंह जी आनन्दित रहो।

वेदभाष्य के ग्राहक पण्डित पुरुषोत्तमदास निवासी दिल्ली, घासीराम का कूचा, मकान वट्टामल नारिये के में इनका १२)
१५ रुपैये बावत वेदभाष्य के हमारे पास जमा हुए, मिती भाद्रपद कृष्ण[3] प्रतिपदा १, शनिवार को, यहां का नम्बर ६११। भूमिका

---

१. इस पत्र की सूचना पूर्णसंख्या ४४५ के (पृष्ठ ४८५) पत्र में मिलती है।

२. यह पत्र का सारांश पं० लेखरामकृत जीवन चरित हिन्दी सं० पृष्ठ
२० ८४२ पर निर्दिष्ट है। वहां लिखा है—'८ अगस्त १८८० को जब कि स्वामी दयानन्द सरस्वती जी महाराज के आर्यसमाज मेरठ के गश्ती (घूमने वाले) पत्र नं० ७९ द्वारा लाहौर अमृतसर आदि की आर्य समाजों को प्रेरणा दी गई थी ...... ।'

मुंशी इन्द्रमणि इस समय आर्यसमाज मुरादाबाद के प्रधान थे। उन्होंने
२५ मेरठ में स्वामी जी की सेवा में आकर उपर्युक्त सहायता की अत्यन्त नम्रता पूर्ण शब्दों में प्रार्थना की थी कि 'यह झगड़ा समस्त वैदिक धर्मवालों का है, मुझ अकेले का नहीं।' वही जी० च० पृष्ठ ८४२-८४३।

३. पत्र श्रावण सुदी ३ सोमवार को लिखा गया है, उस में भाद्रपद कृष्ण प्रतिपदा का उल्लेख नहीं हो सकता। अत: 'श्रावण शुक्ल प्रतिपदा'

का पुस्तक उनके पास है। यजुर्वेद, ऋग्वेदों के अङ्क भेज देना। और उनसे चौथे वर्ष का दाम लिखकर मगा लेना। शायत् नम्बर ६१० ठाकर बलवन्त सिंह जिला बुलन्दशहर परगणे शिकारपुर ग्राम चांदोख वाले के २५) बाबत वेदभाष्य के हमारे पास जमा हुए। इसका हाल पिछले पत्र में लिख चुके हैं। आपने अपने रजस्टर में जमा कर लिया होगा। १०) रुपैये चौबे गोपीनाथ जी शिमले वाले के बाबत धर्मदाय के हमारे पास आये हैं। वेदभाष्य के टाटल पेज पर छपा देना। यह भी छपवा देना कि हाल में स्वामी जी मेरठ में हैं। इतना ही और नहीं। आर्य्यदर्पण में यह भी छाप देना कि रमावाई के दो व्याख्यान मेरठ में बहुत ही अच्छे हुए।[1] सब लोगों ने सुन के प्रशंसा की। आशा है कि स्त्री लोगों में उपदेश करेंगी तो बड़ी उन्नति की बात है। इस का हाल आगे लिखा जायगा। हम आनन्दित हैं। आप लोग आनन्दित होंगे।

मिती श्रावण सुदी ३ सोमवार संवत् १९३७।[2]

[दयानन्द सरस्वती]

—:०:—

[पूर्ण संख्या ४८५]　　　　पत्र

लाला मूलराज जी आनन्दित रहो।

मुन्शी इन्द्रमन सम्बन्धी जो पत्र हम ने उर्दू में भेजा है उसका अंग्रेजी में अनुवाद होना है। जो पत्र जर्मनी से आये हैं[3] वह आपके देखने के लिये ला० आनन्दीलाल द्वारा भेज दिये हैं। कृपया हमें बताना कि क्या उत्तर दिया जाय? मेरा विचार है **कुछ पुरुष कला कौशल सीखने के लिये जर्मनी भेज दिये जायें**। परन्तु यदि यहीं आर्य्यावर्त में ऐसा सिखाने वाले पुरुष मिल जायें तो बाहर

पाठ चाहिये, उस दिन शनिवार भी था। श्रावण कृष्ण प्रतिपदा को बृहस्पतिवार था।

१. रमाबाई के सम्बन्ध में श्रावण शु० १३ सं० १९३७ (= १८अगस्त १८८०), भाद्र सुदी ४ सं० १९३७ (= ८ सित० १८८०) तथा भाद्र सुदी ८ सं० १९३७ (= २२ सित० १८८०) के अगले पत्र भी देखें।

२. ९ अगस्त सन् १८८०।

३. देखो पृष्ठ ४८२ की टिप्पणी १।

जर्मनी को आदमी भेजने की कोई आवश्यकता नहीं।

यहां मुंशी इन्द्रमन के लिये ३०० रु० चन्दा हो गया है। इस विषय में किसी निश्चित परिणाम पर पहुंचने के लिये हमने आप को सब आवश्यक पत्र भेज दिये हैं। कृपया बहुत सोच विचार के
५ पश्चात् अपील के हेतु तय्यार करें, क्योंकि इसे बहुत बड़े पुरुषों के पास भेजना है। इस अपील के मुकद्दमे सम्बन्धी खर्च के लिये १,५०० रुपये पंजाब से चन्दा करना है और १,५०० रुपैये दूसरे प्रान्तों से। यह अच्छा है कि पंजाब से १,५०० रुपये एकत्र करने का आप प्रबन्ध करें।

१० जो पत्र हमने आपत्काल के धर्म्म नियोग सम्बन्धी लिखवाया था,[1] मैंने शोक से जाना है कि लेखक वह अभिप्राय नहीं प्रकट कर सका जो मैं आपको जताना चाहता था, और इसलिये आप इसे न समझ सके।

आप का संकेत नियम के सम्बन्ध में कि यह पुनर्विवाह को
१५ बताता है और नियोग को नहीं, इस के लिये मैंने अब एक कानूनी मसौदा[2] एक विधवा की दु:खित अवस्था को दूर करने के लिये बनाया है। 'मैं वही एक या दो दिन में आप को आवश्यक शुद्धियों के लिये भेज दूंगा। १. इसका प्रयोजन नियोग होगा। २. विधवा की सन्तान मृत पति की सम्पत्ति की दायभागी होगी। ३. उन्हें
२० हरामी या जाति से बाहर न समझा जाय। ४. विधवा की जाति के लोग उसे किसी प्रकार तंग न करें। ५. कानून भी इसे दु:ख न दे। ऐसे नियम के पास होने से गर्भ-पातन बन्द हो जायगा, और सैकड़ों बालकों के जीवन बच जायंगे, और आज कल की तरह किसी के दायभाग में आयी सम्पत्ति या जागीर, अथवा कुल की
२५ वृद्धि बन्द वा नष्ट न होगी, क्योंकि उस अवस्था में नियोगज सन्तान विवाह से उत्पन्न होनेवालों के समान अधिकार रखेगी, उस में कोई भी भेद न होगा। चाहे नियम जनता के सामने किया जाता है या और रूप से, यह एक ही है। मसौदा पूर्वोक्त नियमानुसार होगा। जब हम आपको फिर इसी विषय पर लिखें, तो आप

---

३० १. द्र० —पूर्णसंख्या ४३९ पृष्ठ ४७८, भाषार्थ ४८०।

२. यह हम पूर्ण सं० ४५२ पृष्ठ ५०० पर छाप रहे हैं।

को ऐसे ही समझना होगा।[1]

श्रावण सुदी ४ सं० १९३७।[2] ह० दयानन्द सरस्वती

—:o:—

[पूर्ण संख्या ४४६] कार्ड

[ठाकुर] शेरसिंह जी आनन्दित रहो।

[पत्र] आपका आया वर्त्तमान विदित हुआ। लेखक तो हमको चाहिये। विहारी को यहां भेज दो। जो वह हमारा सब काम कर सकेगा, अपने पास रख लेंगे। अथवा समाज के योग्य होगा, समाज में रखदेंगे। २१) रुपये जो तुम दे गये थे उनमें से २०) की रसीद तो तुमारे पास पहुंच गई है। और एक रुपैया लिखने में भूल गये हैं। उसकी यही रसीद समझो। हमने अपने रजस्टर में २१) ही रुपैये जमा किये हैं।

मिती श्रावण सुदी ६ संवत् १९३७।[3] मु० (मेरठ)

पं० भीमसेन शर्मा —

नमस्ते आपके पास स्वामी जी की रसीद भेजता हूं। बारह मुद्रा की जगह २१) की रसीद छाप दो। इसको मुझे वापिस दो। आगे की ऐसी भूल न करो।

[दयानन्द सरस्वती][5]

—:o:—

---

१. यह और अगले ४ मूलपत्र हमें नहीं मिल सके। ला० मूलराजजी ने कहा था कि उन्हें चूहे काट गये हैं। हम ने अंग्रेजी से इसका अनुवाद किया है। अंग्रेजी न देने का प्रयोजन यह है कि वस्तुत: ये पत्र आर्यभाषा में थे।

२. १० अगस्त १८८० मेरठ। वैदिक मैगजीन, गुजरांवाला, अक्टूबर-दिसम्बर सन् १९०८ पृ० २४९ से अनूदित।

३. १२ अगस्त सन् १८८०।

४. तिथि और हस्ताक्षर के मध्य के रिक्त स्थान पर का लेख उसी कार्ड पर पं० भीमसेन के नाम ठा० शेरसिंह ने लिखा और पं० भीमसेन के पास लिफाफे में रखकर वैदिक यन्त्रालय काशी को भेजा था। इस विषय में पूर्ण संख्या ४३७ का पत्र, पृष्ठ ४७३ पर देखें तथा दूसरे भाग में श्रावण कृष्ण १३ सं० १९३९ (१३ जुलाई १८८२) को मुंशी समर्थदान को लिखा पत्र भी देखें।

५. कार्ड पर पता इस प्रकार श्री स्वामी जी ने स्वहस्त से लिखा है--

पूर्ण संख्या ४४७] **स्वीकारपत्र[1]**

ओ३म्

(१) मैं स्वामी दयानन्द सरस्वती निम्नलिखित नियमानुसार वक्ष्यमाण अष्टादश सज्जन आर्यपुरुषों की सभा को - वस्त्र, पुस्तक,
५ धन और यन्त्रालय आदि अपने सर्वस्व का अधिकार देता हूं। और उस को परोपकार और सत्कार्य में लगाने के लिये अधिष्ठाता करके यह पत्र लिखे देता हूं कि समय पर कार्यकारी हो। जो यह एक सभा जिसका नाम **परोपकारिणी सभा है**,उसके निम्नलिखित अष्टादश सज्जन सभासद हैं। और उन में से इस सभा के प्रधान
१० लाला मूलराज एम० ए० एक्स्ट्रा असिस्टैन्ट कमिश्नर—प्रधान आर्यसमाज लाहौर। और मन्त्री लाला रामशरणदास उपप्रधान आर्यसमाज मेरठ हैं।

नाम सभासद	निवास स्थान
१—लाला मूलराज एम० ए० एक्स्ट्रा असिस्टैन्ट कमिश्नर लाहौर	लुधियाना
२—पण्डित सुन्दरलाल इन्स्पैक्टर डिपार्टमैंट इलाहाबाद	आगरा

१५

ठाकुर शेरसिंह कर्णवास परगणे डिभाई (जिले बलन्दशहर)। मेरठ की मुहर में १३ अगस्त छपा है। ठा० शेरसिंह ऋ० द० के अनन्य भक्त थे। इन के नाम ऋ० द० का वै० शु० ७, सं० १९४० (=१३ मई १८८३) का पत्र
२० भी दूसरे भाग में देखें।

म० मामराज जी ने जुलाई सन् १९४५ में मेरठ निवासी लाला रामशरणदास जी के पत्रों में से खोजा, जो उनके पास वैदिक यन्त्रालय बनारस से दूसरे पत्रों के साथ आया था। मूल कार्ड हमारे संग्रह में सुरक्षित है।

२५ १. यह **स्वीकारपत्र** ऋषिदयानन्द ने अपनी किन शारीरिक परिस्थितियों के कारण लिखकर रजिस्ट्री कराया था, उसका कुछ परिचय पूर्व पूर्णसंख्या ३२२ के मुख्त्यारनामे के अन्त में पृष्ठ ३५७-३५८ पर छपे **'इबारत-तस्दीक'** से होगा। विशेष जानकारी के लिये ऋग्वेद और यजुर्वेद भाष्य के १४वें अङ्क के टाइटल पेज ३ पर कालीचरण मन्त्री आर्यसमाज फर्रुखाबाद
३० के हस्ताक्षर से छपा विज्ञापन देखना चाहिये। हम इसे अत्यन्त आवश्यक समझकर तीसरे परिशिष्ट में छाप रहे हैं।

३ - राजा जैकृष्णदास सी० एस० आई०
डिप्टी कलक्टर ... मुरादाबाद
४ - मुन्शी इन्द्रमणि प्रधान आर्यसमाज मुरादाबाद
... मुरादाबाद
५ - बाबू दुर्गाप्रसाद कोशाध्यक्ष आर्यसमाज ५
फर्रुखाबाद फर्रुखाबाद
६ - लाला जगन्नाथ प्रसाद फर्रुखाबाद ,,
७ - सेठ निर्भयराम प्रधान आर्यसमाज फर्रुखाबाद
विसाऊ(राजपू०)
८ लाला कालीचरण रामचरण मन्त्री १०
आर्यसमाज फर्रुखाबाद ... फर्रुखाबाद
९ - लाला रामशरणदास उपप्रधान आर्य-
समाज मेरठ ... मेरठ
१० - बाबू छेदीलाल गुमाश्ता कमसरयट मेरठ
... कानपुर १५
११ लाला साईंदास मन्त्री आर्यसमाज लाहौर
लाहौर
१२ लाला डाक्टर विहारीलाल असिस्टैंट
सिविल सर्जन ... ,,
१३—बाबू माधोलाल मन्त्री आर्यसमाज दानापुर २०
... दानापुर
१४—लाला पण्डित गोपालराव हरि देशमुख
प्रधान आर्यसमाज बम्बई ... पूना
१५ लाला जजमहादेव गोविन्द रानाडे ,,
१६—एस० एच० कर्नल आलकाट साहब बहादुर २५
प्रधान थियोसोफीकल सोसायटी अमरीका
अमरीका
१७—एच० पी० मेडम ब्लेवट्स्की मन्त्री थियो-
सोफीकल सोसायटी अमरीका ... ,,
१८—पण्डित श्यामजी कृष्ण वर्म्मा प्रोफेसर संस्कृत यूनि- ३०
वर्सिटी औक्सफोर्ड लण्डन ... बम्बई

(१) उक्त सभा जैसे कि वर्तमानकाल में सभा के नियमानु-

सार व आपत्काल में मेरी और मेरे समस्त पदार्थों की नियम [से] यथावत् रक्षा करके सर्व हितकारी कार्यों में लगाती है, वैसे मेरे (पश्चात्) अर्थात् मेरी मृत्यु से पीछे भी लगाया करें।

प्रथम—वेद और वेदाङ्ग वा सत्य शास्त्रों के प्रचार अर्थात् ५ उनकी व्याख्या करने कराने, पढ़ने पढ़ाने, सुनने सुनाने, छापने छपवाने आदि में।

द्वितीय—वेदोक्त धर्म के उपदेश और शिक्षा में अर्थात् उपदेशक मण्डली नियत करके देश देशान्तर वा द्वीप द्वीपान्तर में भेज कर सत्य के ग्रहण और असत्य के त्याग कराने आदि में।

१० तृतीय—आर्य्यावर्तीय अनाथ और दीन मनुष्यों के संरक्षण पोषण और शिक्षा में व्यय करे और करावे।

(२) जैसी मेरी विद्यमानता में यह सभा सब प्रबन्ध करती है वैसे मेरे पश्चात् भी तीसरे वा छठे महीने किसी सभासद् को वैदिक यन्त्रालय का हिसाब किताब समझने और पड़तालने के १५ लिये भेजा करे। और वह सभासद् जाकर समस्त आय व्यय और सञ्चय आदि की जांच पड़ताल कर और उन के तले अपने हस्ताक्षर लिख दें, और उस विषय का एक एक पत्र प्रति सभासद् के पास भेजे। और जो उस के प्रबन्ध में कुछ हानि लाभ देखे उसकी सूचना भी अपने परामर्श सहित प्रत्येक सभासद् के पास लिख भेजे। पश्चात् प्रत्येक सभासद् को उचित है कि अपनी-अपनी २० सम्मति प्रधान के पास भेजदे और प्रधान सब की सम्मति से यथोचित प्रबन्ध करे और कोई सभासद इस विषय में आलस्य अथवा अन्यथा व्यवहार न करे।

(३) इस सभा को उचित है किन्तु आवश्यक है कि जैसा परम धर्म और परमार्थ का कार्य है उस को वैसे ही उत्साह पुरु- २५ षार्थ गम्भीरता और उदारता से करे।

(४) मेरे पीछे उक्त अष्टादश आर्यजनों की सभा सर्वथा मेरे स्थानापन्न समझी जाय, अर्थात् जो अधिकार मुझे अपने सर्वस्व का है वही अधिकार सभा को है और रहे। यदि उक्त सभासदों में से कोई इन नियमों से विरुद्ध स्वार्थ के वश होकर वा कोई अन्य ३० जन अपना अधिकार जमावे तो वह सर्वथा मिथ्या समझा जाये।

(५) जैसे इस सभा को अपने सामर्थ्य के अनुसार वर्तमान

समय में मेरी और मेरे समस्त पदार्थों की रक्षा और उन्नति का अधिकार है, वैसे ही मेरे मृतक शरीर का भी अधिकार है अर्थात् जब मेरा देह छूटे तो न उसको गाड़ें न जल में बहावें, न जङ्गल में फेंकने दें, केवल चन्दन की चिता बनावें। और जो यह सम्भव न हो तो दो मन चन्दन, चार मन घी, पांच सेर कर्पूर, ढाई सेर अगर तगर और दश मन काष्ठ लेकर वेदानुकूल जैसे कि संस्कार-विधि में लिखा है वेदी बनाकर तदुक्त वेद मन्त्रों से होम कर के भस्म करें। इस से भिन्न तथा कुछ भी वेदविरुद्ध क्रिया न करें। और जो सभाजन उपस्थित न हों तो जो कोई समय पर उपस्थित हो वही पूर्वोक्त क्रिया करदे। और जितना धन उस में लगे उतना सभा उसको दे दे।

(६) अपनी विद्यमानता में मैं और मेरे पश्चात् यह सभा चाहे जिस सभासद् को पृथक् करके उसका प्रतिनिधि किसी अन्य योग्य सामाजिक आर्य पुरुष को नियत कर सकती है परन्तु [कोई सभासद् सभा से तब तक पृथक् न किया जाय, जब तक उस के कार्य में अन्यथा व्यवहार] न पाया जाये।

(७) मेरे सदृश यह सभा सदैव इस स्वीकार पत्र की व्याख्या वा उस के नियम और प्रतिज्ञाओं के पालने वा किसी सभासद् के पृथक् और उस के स्थान में अन्य सभासद् के नियत करने वा मेरे विपत् और आपत्काल के निवारण करने के उपाय और यत्न में वह उद्योग करे, जो समस्त सभासदों की सम्मति से निश्चय और निर्णय पाया वा पावे। और जो सम्मति में परस्पर विरोध हो तो बहुपक्षानुसार प्रबन्ध करे और प्रधान की सम्मति को सदैव द्विगुण जाने।

(८) किसी समय भी यह सभा तीन से अधिक सभासदों को अपराध की परीक्षा करके पृथक् न कर सके, जब तक पहिले तीन के प्रतिनिधि नियत न करले।

(९) यदि सभा में से कोई पुरुष मर जावे वा पूर्वोक्त नियमों और वेदोक्त धर्म को त्याग कर विरुद्ध चलने लगे, तो इस सभा के प्रधान को उचित है कि सब सभासदों की सम्मति से पृथक् कर के उस के स्थान में किसी अन्य योग्य वेदोक्त धर्मयुक्त आर्यपुरुष को नियत कर दे, परन्तु जब तक नित्य कार्य के अनन्तर नवीन कार्य

का आरम्भ न हो।

(१०) इस सभा को सर्वथा प्रबन्ध करने और नवीन युक्ति निकालने का अधिकार है। परन्तु जो सभा को अपने परामर्श और विचार पर पूरा-पूरा निश्चय और विश्वास न हो तो पत्र द्वारा समय नियत करके सम्पूर्ण आर्यसमाजों से सम्मति ले ले और बहुपक्षानुसार उचित प्रबन्ध कर ले।

(११) प्रबन्ध न्यूनाधिक करना वा स्वीकार वा अस्वीकार करना वा किसी सभासद् को पृथक् वा नियत करना वा आय व्यय और सञ्चय का जांच पड़ताल करना आदि लाभ हानि सब सभासदों को वार्षिक वा षाण्मासिक पत्र द्वारा प्रधान छपवा कर विदित कर दे।

(१२) इस स्वीकार पत्र सम्बन्धी कोई झगड़ा टंटा सामयिक राज्याधिकारियों की कचहड़ी में निवेदन न किया जाय। यह सभा अपने आप न्यायव्यवस्था कर ले। परन्तु जो अपनी सामर्थ्य से बाहर हो तो राज्यगृह में निवेदन करके अपना कार्य सिद्ध करले।

(१३) यदि मैं अपने जीते जी किसी योग्य आर्यजन को पारितोषिक अर्थात् पैंशन देना चाहूं और उसकी लिखित पढ़त कराकर रजिस्ट्री करादूं तो सभा को उचित है कि उसको मानैं और दे।

(१४) विशेष लाभ, उन्नति, परोपकार और सर्वहितकारी कार्य के वश मुझे और मेरे पीछे सभा को पूर्वोक्त नियमों के न्यूनाधिक करने का सर्वथा सदैव अधिकार है, वैसे ही किया करे।

हस्ताक्षर दयानन्द सरस्वती व खत शास्त्री[1]

गवाह—मुन्नालाल खलफ लाला किशनसहाय साकिन मेरठ बकलम खुद उर्दू।

गवाह—मुन्शीसिंह वल्द बंशीधर साकिन मेरठ अंग्रेजी

गवाह—सुजानसिंह वल्द रामसुखदास कौम सरावगी साकिन मेरठ व खत-हिन्दी।

यह वसीयत नामा है। १६ अगस्त १८८०[2] ई० द० नागरी

---

१. 'शास्त्री' अर्थात् नागरी लिपि। इस स्वीकारपत्र (वसीयतनामे) के लिये पूर्णसंख्या ४३४ (पृष्ठ ४६५) तथा ४३८ (४७५) के पत्र भी देखें।

२. मिति श्रावण सुदी ११, सोमवार, संवत् १९३७। मेरठ शहर।

वसीयतनाम हाजा, यह कागज सादा है।

presented for registration in the office of the Sub-Registrar of meerut or Monday the 16th August 1880 between the hours af 3 and 4 p. m.

(Sd.) MUKAND LAL,   ह० दयानन्द सरस्वती   ५

Sub-Registrar.

Execution admitted by Swami Dayanand Saraswati who is personally known to the registering officer.

16 August 1880.

(Sd.) MUKAND LAL,   ह० दयानन्द सरस्वती[3]   १०
Sub-Registrar.

—:o:—

[पूर्ण संख्या ४४८]   पत्र

मुंशी बखतावरसिंहजी आनन्दित रहो![2]

१६ अगस्त का लिखा पत्र तुम्हारा आया। वर्तमान विदित हुआ। जिन तीन के पास सत्यार्थप्रकाश भेजने को लिखा था भेज   १५
दिये। और कल इन दोनों के पास भेजेंगे। एक-एक पाकट पर =)॥ पर अढ़ाई-अढ़ाई आने के टिक[ट] डाक महसूल के लगे हैं।

जो संस्कृतवाक्यप्रबोध पर पुस्तक छपाया है[3] सो बहुत ठिकानों

---

१. इस स्वीकारपत्र की प्रतिलिपि के लिए के ता० १६।५।४५ को सवा   २०
रु० का स्टाम्प लेकर बाबू हरवंशसिंह वकील मन्त्री आर्यसमाज मेरठ ने दफतर रजिस्ट्री में पेश किया। नकल ता० ७ जून १९४५ की मिली। उसे म० मामराज जी ने बाबू श्यामलाल अग्रवाल प्रधान आर्यसमाज से ता० २२ जुलाई १९४५ को प्राप्त किया। देखो दफतर रजिस्ट्री मेरठ शहर में तितम्मा नं० ५, सफे ४० जिल्द – आलिफ-रजिस्टर नं० ३ [सन् १८८०]   २५
में।

२. यह सारा पत्र ऋषि के अपने हाथ का लिखा हुआ है। मूलपत्र हमारे संग्रह में सुरक्षित है।

३. संस्कृतवाक्यप्रबोध की अशुद्धियां दर्शाने के लिये पं० अम्बिकादत्त

में उनका लेख अशुद्ध है। और के एक ठिकानों में **संस्कृतवाक्य-प्रबोध में अशुद्ध भी छपा है।**[1] **इस अशुद्धि के कारण तीन हैं।** एक शीघ्र बनना, मेरा चित्त स्वस्थ न होना[2]। दूसरा भीमसेन के आधीन शोधने का होना[3] और मेरा न देखना न प्रूफ को शोधना।

---

५ व्यास ('शिवराजविजय' के लेखक) ने **अबोधनिवारण** नाम की एक पुस्तक छपवाई थी। उसका उत्तर किसी आर्यविद्वान् ने नहीं दिया। उस से कुछ आर्य जनों में भ्रान्ति फैली। सं० २०२६ (सन् १९६९) में रामलाल कपूर ट्रस्ट की ओर से संस्कृतवाक्यप्रबोध प्रकाशित करते समय परिशिष्ट में पं० अम्बिकादत्त व्यास के सभी आक्षेपों का खण्डन लिखकर छपवाया है। ऋ०
१० द० के लिखे 'भागवत-खण्डन' के विरोध में देहली से एक पुस्तक छपी थी, (रालाकट्र० के पुस्तकालय में है) उस का खण्डन आज तक किसी ने नहीं किया। यह उपेक्षा बहुत हानिकर है।

१. कहां ऋषि दयानन्द का यह लेख, जिसमें वे मुक्तकण्ठ से स्वग्रन्थ में छपी हुई अशुद्धियों को स्वीकार करते हैं और कहां आजकल के पण्डित जो
१५ ऋ० द० के ग्रन्थों में विद्यमान स्पष्ट अशुद्धियों को भी स्वीकार नहीं करते। यही है ऋषि और अनृषि का भेद।

२. यह एक महत्त्वपूर्ण निर्देश है, जो यह बताता है कि अस्वस्थता वा अन्यमनस्कता के समय ऋ० द० के द्वारा लिखे गये ग्रन्थों के अंशों में भूल हो सकती है। उन को स्वीकार करना ही ऋषि दयानन्द के प्रति अनुकूल
२० आचरण है।

३. पं० भीमसेन ने अपने दोष से बचने के लिये 'आर्य-सिद्धान्त' (मासिक पत्र) के भाग १ अङ्क ५ के पृष्ठ ७७ पर इस प्रकार लिखा है—

"यह सब को मालूम है कि श्री स्वामी जी ने जो संस्कृतवाक्यप्रबोध शिक्षाप्रणाली के सुधारने के लिये बनाया था, उसमें कई कारणों से छपने में
२५ अशुद्धि रह गई थी। इसमें **बड़ा कारण एक ब्राह्मण लेखक था, जो सर्वथा विरुद्धबुद्धि होकर भी जीविका के लिये बनारस में स्वामी जी के पास लेखक था।** स्वामीजी महाराज का स्वभाव था कि अपनी बुद्धि धर्म सम्बन्धी बड़े बड़े विचारों में अधिक कर रखते थे। उक्त ब्राह्मण कुछ-कुछ संस्कृत भी जानता था। बनाते समय अधिक कर **संस्कृत-वाक्य-प्रबोध उसने बनवाया;**
३० **उसने अशुद्ध किया।"**

इस लेख में 'बनवाया' शब्द भ्रामक है। यदि इसका अर्थ 'लिखवाना'

तीसरा छापेखाने में उस समय कोई कम्पोजीटर बुद्धिमान् न होना, लैंपों की न्यूनता होनी ॥ इसके उत्तर में जो-जो **उनकी सच्ची बात है सो-सो शोधक और छापा का दोष रहेगा।** इसके खंडन पर भीमसेन का नाम मत लिखना, किन्तु पंडित ज्वालादत्त के नाम से छापना।[1] इस पर आगे के आर्य्यदर्पण में छापने के लिये पं० ज्वा० भी लिखेगा। भीमसेन भी लिखो, परन्तु उसका नाम उस पर छपवाने से उसके पढ़ने में वहां के लोग बहुत विरोध करेंगे।

मोहनलाल विष्णुलाल आदि का हिसाब वहीं जो मुंशी समर्थदान ने वही दी थी उसमें और भूमिका तथा वेदभाष्य के टायटिल पेज और ग्राहकों के रजष्टर में है। देखके भेज दो। हमने सब रजष्टर अन्य सत्यार्थ आदि पुस्तकों के भी वहीं रखे हैं। फिर हम से हिसाब उनका कैसे माँगते हो। देख कर भेज दो। यहां हमारे पास सिवाय एक रजष्ट[र] के दूसरा कागजात कुछ भी नहीं है। नवीन हाल ये हैं। एक मुंशी[2] जी का दूसरा मेरे ठहरने का भी ठिकाना मेरठ का ही नोटिस छापना। तीसरा आजकल रमाबाई यहां कलकत्ते से आके ठहरी है। आज उसका व्याख्यान समाज में स्त्रियों के कर्त्तव्याकर्त्तव्य विषय में है, दूसरा आगामी शनि को भी होगा। यह संस्कृत पढ़ी है। बहुत अच्छा संस्कृत भाषण भी करती है। इसका विशेष आगे लिखेंगे। चौथा जो मैं कह आया था कि जो धन आवे वह वहां न रखना चाहिये, किन्तु जिसका नाम फुरुखावाद से लिख भेजा था उसी की दुकान में जमा रक्खा करो, अपने पास मत रक्खो। पांचवां असरफियों का हिसाब लिख भेजना। छठा वसीयतनामा रजष्टरी करा लिया है। जब तहसील की कचहरी से नकल मिलेगी तब वहां भी एक नकल भेजेंगे छापेखाने [में] रख लेना। सातवां यह जो तुमने लिखा कि दुकान में ४००) रुपैये रह गये, कलकत्ते चले गये। इस के लिखने का क्या

मात्र है तो ठीक है और यदि इसका अर्थ 'निर्माण करवाना' से है, तो अशुद्ध है। क्योंकि यह ग्रन्थ ऋषिदयानन्द ने स्वयं बनाया था। इसकी अन्त:साक्ष्य के रूप में वे अनेक विशिष्ट प्रयोग हैं, जिन्हें साधारण संस्कृत पढ़ा व्यक्ति नहीं लिख सकता।

१. यही खण्डन अगली पूर्णसंख्या ४४९ पर मुद्रित किया गया है।

२. अर्थात् मुन्शी इन्द्रमणि के सम्बन्ध में।

मतलब है। तुम्हारे पास मासिक खरचे से आमदनी अधिक होती है। इसमें कलकत्ते का भी मावारी हिसाब में खरच आ जाता है। फिर वे दुकान के रुपये सिवाय २००) के किस लिये उठाये। आठवां जो आपने लिखा था वह सब क्षमा किया गया। नवमा ५ वेदभाष्य का प्रूफ और छापना संस्कृतवाक्यप्रबोध के तुल्य न हो जाय। दशवां मैं यहां मेरठ में १५ दिनों से कम न रहूंगा। हमलोग सब आनन्द में हैं। आप लोग भी आनन्द होंगे। कल परसों और भी पत्रे दोनों वेदों के भेजेंगे। सब से हमारा नमस्ते कहना।

तेली आदि के मासिक बढ़ाने के लिये जब १६ वां और १७वां १० अङ्क छपके आवेंगे। १४ वें अङ्क से लेके १७ अङ्क तक जो काशी में छपे हैं देखके जिसकी जैसी योग्यता होगी, वैसा बढ़ाया जायगा। और १४ वें अङ्क से ले १७ वें अङ्क तक दोनों वेदों के अङ्क भेजके आगे बराबर फिरोजपुर आर्य्यसमाज के नाम प्रति मास भेजा करो। इस समाज में क्यों नहीं पहुंचा। क्या यह आपकी भूल है वा १५ डाक वालों की गड़बड़ है। यह अच्छा होगा कि जब-जब डाक की गड़बड़ हो तब-तब पोष्ट इन्स्पेक्टर को लिख के जवाब लेना। नहीं [तो] बहुत गड़बड़ करेंगे। शमस्तु।

मि० श्रा० शु० १३ बुध सं० १९३७।[1] [दयानन्द सरस्वती]

—:o:—

[पूर्ण संख्या ४४९] **लेख**

२० **पुस्तक 'अबोधनिवारण' की अशुद्धियां**

१. येन शरीराच्छ्रमो न क्रियते स नैव शरीरसुखमवाप्नोति। पृ० ६ पं० २०॥[2]

यहाँ पण्डित अम्बिकादत्त जी लिखते हैं कि (शरीरात्) इस पद में पञ्चमी विभक्ति अशुद्ध है किन्तु (शरीरेण) ऐसा चाहिये। सो २५ यह सन्देह कारक व्यवस्था को ठीक-ठीक नहीं विचारने से हुआ है। देखो श्रम कहते हैं पुरुषार्थ करने को। उसका कर्त्ता जीवात्मा और शरीर आश्रय रहता है। क्योंकि **चेष्टेन्द्रियार्थाश्रयः शरीरम्**।[3]

---

१. १८ अगस्त, १८८० ।

२. यह पृष्ठ और पंक्ति संख्या संस्कृतवाक्यप्रबोध प्रथम संस्करण ३० (फाल्गुन सं० १९३६) के अनुसार है। ३. न्यायदर्शन १।१।११॥

चेष्टा अर्थात् क्रिया का जो आश्रय है उस को शरीर कहते हैं। सो यहां **पञ्चमीविधाने ल्यब्लोपे कर्मण्युपसंख्यानम्** अ० २।३।२७॥ इस वार्तिक से (आश्रित्य) इस ल्यबन्त क्रिया के लोप में पञ्चमी विभक्ति हुई है। देखो ऐसा वाक्यार्थ होगा। **येन पुरुषेण शरीरमाश्रित्य श्रमो न क्रियते**—इत्यादि। जो कहो कि ऐसा अर्थ भाषा में ५ क्यों-क्यों न किया तो संस्कृत के एक वाक्य का व्याख्यान भाषा में कई प्रकार से कर सकते हैं इस में कुछ विवाद नहीं है। परन्तु यहां तो प्रयोजन यही है कि भाषा सुगम और थोड़ी हो ऐसा उल्था करना चाहिये! अब पण्डित जी के कहने से तो **प्रासादात्प्रेक्षते** इत्यादि महाभाष्यकार[1] के प्रयोगों में भी पञ्चमी विभक्ति नहीं १० होनी चाहिये। और भी पण्डित जी क्या लिखते हैं कि **विभाषा गुणेऽस्त्रियाम्**[2] भला इसका यहां क्या प्रसङ्ग था। सो जब स्वामी जी के मुख्य अभिप्राय को पण्डित जी न समझे तो जो सूत्र सामने आया, लिख बैठे। भला शरीर शब्द को कोई थोड़ी विद्या वाला भी गुणवाचक कह सकता है कि जिस से गुणवाची मानके पञ्चमी १५ विभक्ति हो जावे। और कारक विषय में ऐसा भी नियम है कि **कारकं चेद्विजानीयाद्यां यां मन्येत् सा भवेत्**[3]। अर्थात् यह शब्द क्रिया के किस अंश को सिद्ध करता है ऐसे क्रिया साधक कारक को जान के जिस-जिस विभक्ति से वह अर्थ प्रतीत हो सके वह-वह विभक्ति हो सकती है। इन गूढ़ बातों को समझना सब का काम २० नहीं है॥१॥

२. **चक्रवर्तिशब्दस्य कः पदार्थः**।१०।९।

यहां पं० जी लिखते हैं कि चक्रवर्ति शब्द का क्या अर्थ है इस की संस्कृत यही होगी। इन को भाषा का भी बोध है जैसा विदित हो गया। भला संस्कृत शब्द को स्त्रीलिंग पण्डित जी ने किस २५ व्याकरण से किया। यह संस्कृत प्राचीन ऋषि मुनियों के अनुकूल है इस में कुछ दोष नहीं। देखो महाभाष्य में लिखा है कि **अथ सिद्धशब्दस्य कः पदार्थः**। आह्निक १। इसका क्या यह अर्थ नहीं

१. महाभाष्य २।३।२८॥
२. अष्टा० २।३।२५॥　　　　३. महाभाष्य १।४।५१॥　　　　०३

है कि सिद्ध शब्द का क्या अर्थ है। बड़े आश्चर्य की बात है कि प्राचीन ग्रन्थों को विना देखे दोष देने लगते हैं। अब पं० जी का लगाया दोष कुछ स्वामी जी को ही लगा हो सो नहीं, किन्तु इन्हों ने तो सब ऋषि मुनियों को दोष लगा दिया और **सापेक्षमसमर्थं**
५ **भवति**। यह दोष यहां कभी नहीं आता क्योंकि यहां एक देश के साथ अन्वय नहीं है। और इसी प्रकार **सभाशब्दस्य कः पदार्थः**। इसको शुद्ध समझ लेना ॥२॥

३. **अस्मिन् समये तु मम सामर्थ्यं नास्ति षण्मासानन्तरं दास्यामि**।[१] १८।८।

१० यहां षण्मास शब्द में पण्डित जी को सन्देह हुआ है कि यहां **द्विगोः**[२] इस सूत्र से ङीप् होके षण्मासी शुद्ध होता है। इस भ्रम का मूल यही है कि उन को व्याकरण के सब सूत्र विदित नहीं हैं। पं० जी के कथनानुसार यदि स्वामी जी का लेख अशुद्ध भी माना जावे तो फिर पाणिनि मुनि का सूत्र भी अशुद्ध मानना चाहिये। सू०
१५ **षण्मासाण्ण्यच्च** अ० ५।१।८३॥ यहां पण्डित जी के मतानुसार **षण्मास्या ण्यच्च** — इस प्रकार का सूत्र होना चाहिये। अब देखिये इस पाणिनीय सूत्र को यदि पं० जी जानते होते तो स्वामी जी के लेख को मिथ्या दोष क्यों लगाते और छोटे छोटे बालक कि जो अष्टाध्यायी के सूत्र भी घोखते हैं वे भी जानते हैं कि यह सूत्र ऐसा
२० है। इस प्रकार के बहुत से प्रयोग व्याकरण आदि शिष्ट जनों के ग्रन्थों में आते हैं तो क्या सब अशुद्ध है? अब रहा कि ङीप् क्यों नहीं होता, तो **पात्रादिभ्यः प्रतिषेधः**।[३] यह वार्तिक इसीलिये है। पात्रादि आकृतिगण है। इस का परिगणन कहीं नहीं किया कि इतने ही पात्रादि शब्द हैं। महाभाष्यकार ने तो इस वार्तिक पर
२५ उदाहरणमात्र दिया है। अब इसी प्रकार **'द्विवर्षानन्तरम्'** इस को भी शुद्ध समझ लेना चाहिये। पाणिनि जी महाराज ने अपने सूत्र में षण्मास शब्द को पढ़ा है। इससे यह भी उनका उपदेश प्रसिद्ध विदित होता है कि षण्मास आदि शब्दो में ङीष् कदापि नहीं होता

---

१. महाभाष्य २।१।१॥ २. अष्टा० ४।१।२१॥

३० ३. महाभाष्य २।४।१७॥

और कोई किया चाहे तो अशुद्ध ही है ॥३॥[1]

एक पण्डित[2]

—:o:—

[पूर्ण संख्या ४५०]　　　　पत्र

मुंशी इन्द्रमन जी आनन्दित रहो।[3]

आप के दो तीन पत्र आये हाल मालूम हुआ। पञ्जाब के ५ अढ़ाई सौ या तीन सौ रुपया आप के पास शायद पहुंचे होंगे। आज हम यहां के सभासदों से दर्याफ्त करेंगे कि रुपया भेजे या नहीं। अगर न भेजे होंगे तो हम भिजवाते हैं। चार दिन हुए कि उसी वक्त हम ने उनसे कह दिया था कि रुपया भेज दो। अढ़ाई सौ रुपया वहां है और १००) रुपया लाला श्यामलाल के और पंजाब १० और फर्रुखाबाद से भी आते हैं सब मिलकर सात सौ रुपया इकट्ठे होंगे। खूब होश्यारी से काम करना।

मिति भाद्रपद कृष्ण ६ गुरुवार संवत् १९३७, स्थान मेरठ।[4]

दयानन्द सरस्वती

—:o:—

[पूर्ण संख्या ४५१]　　　　पत्र-सारांश　　　　१५

सेवकलाल कृष्णदास मन्त्री आ० स० बम्बई

वेदभाष्य की सहायता के लिये रुपया भेजा वा नहीं ?

---

१. 'षण्मास' शब्द का प्रयोग सर्वथा साधु है। इसके अनेक उदाहरण हमने (यु० मी० ने) स्वसम्पादित 'संस्कृतवाक्यप्रबोध' के अन्त में पं० अम्बिकादत्त के आक्षेपों के उत्तर में पृष्ठ ६७ पर दिये हैं। २०

२. इस उत्तर में श्री स्वामीजी की ही अनुमति थी। देखो पूर्णसंख्या ४४८ का पत्र (पृष्ठ ४६५, पं० ४-५)। आर्यदर्पण मई १८८० पृ० १२० पर छपा। यह अङ्क अगस्त के अन्त या सितम्बर के आरम्भ में छपा होगा। देखो श्रावण शु० १३ सं० १९३७ (१८ अगस्त १८८०) का पत्र पूर्णसंख्या ४४८ पृष्ठ ४६३। २५

३. लाला जगन्नाथदास की पुस्तक मुं० इन्द्रमन का इल्तमास और स्वामी दयानन्द का संन्यास, पृ० १६ पर उद्धृत।

४. २६ अगस्त, १८८०।

मेरठ[1] दयानन्द सरस्वती

—:०:—

[पूर्ण संख्या ४५२] नियोग का मसव्विदा[2]

मैं स्वामी दयानन्द सरस्वती निहायत अदब से उस एजाज और ताजीम कानूने शादी के तसलीम करने के बाद कि जिस का ५ तसलीम करना हम सब पर फर्ज है, निस्बत एक्ट नम्बर १५ सन् ५६ ई० (कानून दरबार शादी बेवगान की, कि जिसकी यह मन्शा है कि हिन्दू बेवा के विवाह करने के बारे किसी तरह से कानूनन् मुमानिअत न हो और जो औलाद कि दूसरे विवाह से पैदा हो वह हरामी मुतसव्वर न होकर तकरीबन् मालिक हो सके, और जो १० बाज हिन्दू अपने ईमा से इस रसमोरिवाज विवाह सानी को खिलाफ रसमोरिवाज साबक के जारी करना मनजूर करें, उनको अदम तालीम कानूनी की पाबन्दी से जिससे वह शाकी है रिहा किया जावे) अपनी आदिल और कदरदान गवर्नमेण्ट के हजूर में चन्द बावइस जरूरी गुजारिश करना चाहता हूं और चूंकि १५ रिआया की फरयादरसी गवर्नमेण्ट से और गवर्नमेण्ट की दादबख्शी

---

१. यह पत्र सारांश सेवकलाल कृष्णदास के आश्विन शुक्लपक्ष सोमवार सं० १९३६ (गुजराती संवत्, उत्तरभारतीय १९३७) १२ अक्टूबर १८९० (१८८० चाहिये) के पत्रानुसार बनाया है (यह पत्र तीसरे भाग में देखें)। इस पत्र में ऋ० द० के मेरठ से पत्र लिखने का निर्देश है और पत्र पहुंच के २० पते में 'मुजफ्फरनगर' का उल्लेख है। ऋषि दयानन्द मेरठ ८ जुलाई से १५ सितम्बर तक रहे थे। तत्पश्चात् मुजफ्फरनगर गये थे। भाद्र सुदी ८ रविवार १९३७ (=१२ सितम्बर १८८०) को बा० दुर्गाप्रसाद को लिखे गये पत्र में पूछा है कि 'मुम्बई से रुपये आ गये वा नहीं?' इससे विदित होता है कि यह पत्र निश्चय ही अगस्त के अन्त में लिखा होगा। बम्बई २५ पत्र जाने और रुपये पहुंचने में १०-१२ दिन का समय तो अपेक्षित ही है।

२. यह नियोग का मसव्विदा विधवा स्त्रियों के नियोग तथा पुनर्विवाह से उत्पन्न सन्तानों को कानूनी हक दिलाने के लिये ऋ० द० ने तैयार किया था। इसे भारत सरकार को कानून बनाने के लिये भेजना चाहते थे। इस के विषय में मूलराज के नाम लिखे पूर्ण संख्या ४३९ (पृष्ठ ४७८) ४४५ ३० (पृष्ठ ४८५) का पत्र भी देखें।

रिआया पर एक ऐसा फर्ज लाजिम मलजूम है कि जैसा मां बाप का बच्चों पर, या बच्चों का अपने मां बाप पर। लिहाजा बावजूद मलहूज रखने तमामतर एजाज और आदाब कानून मजकूर हसबजैल इलतमसा करता हूं, कि अगरचे एक्ट मजकूर का असली मनशास रीह इन्साफ और मसलिहत आमा कायिम करना और हिन्दुओं के असली और इन्साफी कानून को बमुकाबला जायिज रस्मो रिवाज बे बुनियादी के तरजीह देता है और उस की तासीर से बेवगान हनूद को झूंठे रस्मोरिवाज की पाबन्दी से बचा कर आदिल गवर्नमैण्ट ने कानूनी हक उन का बहाल फरमाया है। लिहाजा इस हकपसन्दी गवर्नमैण्ट आलीजाह का तहे दिल से शुक्रिया अदा किया जाता है मगर अफसोस है, कि उन हिन्दू साहिबों ने जो मुहर्रक उसकारे खैर के हुए थे इस मसला के मतालब और तासीरात और क्वाइद की तौजीह में मुगालता खाया। इसलिए ऐक्ट मजकूर के नफाद से गरज मकसूद हासिल न होसकी और न पूरे-पूरे क्वाइद उसकी बाबत मिन्जब्त हुए। बल्कि एक गलत लफ्ज विवाह बेवा हनुद के मुस्तअमल होने से कि गालिबन् सहीह नाम यानी नियोग से मुराद है। बाज असली मकासद और उसकी तमामतर तासीर बिलअक्स हो गये। यह ही वजह है कि ऐक्ट मजकूर के नफाज को अरसा वईद २५ साल गुजर गया, मगर जो कवाईद कि उस के जरिये से हासिल होने चाहिये वह हनूज मुरत्तब नहीं हुए और न आइन्द को किसी ऐसे फाइदा मकसूदा के पैदा होने की उमीद है कि जिसका पैदा होना वक्त नफाज ऐक्ट मजकूर तहरीक कुनन्दा हिन्दू साहिबों के जेहननशीन और गवर्नमैण्ट को ख्याल दिलाया होगा। पस निहायत अदब से गुजारिश है कि ऐक्ट मजकूर की तौजीह व एतबार इलफाज और उसकी तरमीम बाएतबार अदालत व ऐहकाम ऐसे तौर पर फरमाई जावे कि जिस से उसका मन्शा इस बारे में हिन्दुओं के असली कानून के मवाफिक हो जावे।

मरव्फी न रहे कि आर्य्य लोगों (जिनको उरफन गलत नाम हिन्दू के लफ्ज से बोलते हैं) के असली कानून वेद वगैरा में तीन आला फिरकों ब्राह्मण, क्षत्रिय, वैश्य में औरत और नीज मरद के वास्ते दूसरा विवाह करने की कतअई मुमानियत है।

सिरफ एक सूरत है कि जिस में दूसरा विवाह करने की औरत और मरद दोनों के वास्ते इजाजत है और वह यह है कि जब कोई औरत ऐसे वक्त बेवा हो जाय कि उसकी हमबिस्तरी की नौबत अपने शौहर के साथ न पहुंची हो, या किसी मरद की जौजह ऐसे वक्त मर गई हो कि वह उस अपनी जौजह के साथ हमबिस्तर न हुआ हो तो ऐसा मरद या औरत हरसे आया फिरकों मजकूरा बाला में दूसरी शादी कर सकता है, मगर ऐसी औरत या ऐसे मरद के साथ (यानी जैसे कि सूरत हो) जो बजरिया नियोग पैदा हुआ या हुई हो।

अलबत्ता वे औलादी कबाहितें रफा करने के वास्ते आर्य्य लोगों की सच्ची किताब वेद बगैरा में नियोग करने की इजाजत मरद और औरत दोनों के वास्ते पाई जाती है। ताकि औलाद मजकूर अपने वालदैन के वास्ते फ़र्ज दुनयावी का जरिया हो और मालिक मुतरद्दका होकर खानदान का नामोनिशान कायिम रख सके और जिस रसम नियोग से जो खास-खास हालत में महदूद किया गया है, मसलन् जबकि कोई मरद बगैर छोड़े किसी औलाद के मर जावे या नामरदी से कोई नाकाबलियत ऐसी लाहक हो कि जिसकी वजह से वह औलाद पैदा करने के लाइक न रहा हो, तो बेवा बा इजाजत विरसाए शौहर या शौहर या खुद अपनी मरजी से ऐसे शख्स के साथ जो उसकी शौहरी निसबत की रू से भाई के सिलसला करावत में नियोग कर सकती है और उस नियोग के जरिया से अपने शौहरी खानदान को फवाइद मजकूरावाला पहुं-चाने के लिये दो और हिलकायिम पैदा कर लेने की मजाज होती है मसलन् चित्रांगद विचित्रवीर्य्य के मरने पर व्यास जी उन के बड़े भाई ने उन की औरतों से नियोग करके दो लड़के पैदा किये। एक धृतराष्ट्र, दूसरा पाण्डु। और एक कनीजक से एक लड़का पैदा किया। जिसका नाम विदुर था। इसी तरह पाण्डु की हय्यात में उनकी जीजा कुन्ती ने पांच पुत्र उसी रिशता नियोग के जरिया से बवजह नाकाबल होने अपने शौहर के पैदा किये।

इस रिशता नियोग की वजह से मुसम्मात या मर्द या उस औलाद पैदाशुद: का कोई तअल्लुक या फर्ज या हकतौरीस या हक-नान वा नुफक: खानेदाने शौहरी से मुनकतअ या जायल और

नियोग करनेवाले शख्स के खानदान में पैदा वा कायम नहीं होता है। बल्कि औलाद मजकूर का तअल्लुक मिस्ल औलाद सहीह उल-नस्ब के बेवा और उस के खानदान शौहरी से या अगर मर्द ने अपने वास्ते नियोग किया हो तो औलाद का तअल्लुक उस मर्द और उस के खानदान से इस तरह पर होता है कि गोया वह उस शौहर या मनकूहः जौजः से (व जैसी कि सूरत हो) पैदा हुई। ५

लेकिन अगर ववजेह मिन उलवजह मुअय्यनः धर्मशास्त्र जौजीन का तअल्लुक जनाशवी कतअ हो जावे और बाद कतअ जाने तअल्लुक मजकूर के जौज या जौजः अपने वास्ते नियोग करे तो उस औलाद का जो ऐसी हालत में पैदा हो सिर्फ नियोग करने १० वाले शख्स की जात से उस तेदाद तक कि जो आइन्दः बयान की जावेगी तअल्लुक होता है, नियोग करनेवाले शख्स को अपने वास्ते दो औलाद तक जो हिलकायिमः हों और जिसके साथ नियोग किया जावे दो औलाद तक उसके वास्ते भी, अगर नाम्बरवः की ख्वाहिश और जरूरत हो, पैदा करने का इखतयार वेद वगैरः १५ आर्य्य लोगों की मुकद्दस किताबों में पाया जाता है। और जो ज्यादः औलाद इस तेदाद से उसी नियोग के जरिया से की जावे, वह हरामी ख्याल की जाती है।

एक औरत या एक मर्द को जब कि वह अपने वास्ते भी दो औलाद तक पैदा करना चाहता हो, चार नियोग तक करने की २० इजाजत है। और अगर नाम्बरवः अपने वास्ते औलाद पैदा करने की जरूरत समझे तो पांच नियोग कर सकता है। इस का असली मन्शा बहुत साफ है कि एक खानदान के नाम को कायिम रखने के वास्ते दो औलाद और एक शख्स के जरीयअ से दस औलाद तक पैदा करना जाइज है। और जो औलाद जिस खानदान के २५ वास्ते इस रिशता नियोग के जरियअ से पैदा हो वह उसी खान-दान में मिस्ल सही उलनस्ब औलाद के दाखल और शामल समझी जाती है।

चूंकि इस कारेखैर के मुहर्रक हिन्दू साहिबों ने इस मसअला के असूल और तासीरात के समझने और समझाने में गलती की ३० थी, बल्कि विवाह बेवा हनूद का गलत लफ्ज इस्तेमाल करके उस कि तासीर को बिल्कुल मुन्कलब कर दिया था। लिहाजा वह

तमाम फवायद जो इस के जरीया से हासिल होने चाहिये थे, बिल्कुल रुक गये।

अब मैं स्वामी दयानन्द सरस्वती धर्म्मशास्त्र की सही और असली मकासद तर-बाब जिस मसअला की आदिल और कदरदान ५ गवर्नमैण्ट की आखरी राय पर जाहर करके एक मसव्विदा बाबत इजराय रस्म मजकूर गवनमैण्ट के हजूर में निहायत अदब से पेश करता हूं और उम्मीद रखता हूं कि मसव्विदा मजकूर की मनजूरी से इस आर्य्यावर्त देश की रिआया को फैज बख्शी और गवर्नमैण्ट की हकपसन्दी बजरिया इमदाद अदालतहाए दीवानी वाकिअ १० बृटिश इण्डिया बमुआम्लात नफाज हक तौरीस वगैरः उन क्वाइद और शराइत के मवाफिक जो मसव्विदा में अर्ज की गई हैं जाहिर फरमाई जावे।

चूंकि इस एक्ट के जरिया से कोई जदीद मसअला कानून का पैदा नहीं होता बल्कि सिर्फ धर्मशास्त्र के कदीम मसअला की तजदीद होती है, लिहाजा कव्वी उम्मीद है कि जो फव्वाइद ऐक्ट १५ १५ सन् ५६ के नकाद से ख्याल किये गए होंगे, मगर पैदा नहीं हुए, वह बल्कि उस से ज्यादः कायम और मुकम्मिल हो जावेंगे। मस्लन्

(१) बेवगान का फस्क फजूर से बचना और जुरायम शदीद २० मिस्ल इस्कात हमल और जना बगैरः का मसदूद हो जाना।

(२) मसकीन बेवगान के दिल से बेऔलादी की हालत में मुफारकते शौहर का गम सहब जाना।

(३) बे औलादी के रञ्ज और तकालीफ से मसकीन बेवगान का निजात पा जाना।

२५ (४) किसी आर्य्य यानी हिन्दू की मौरूसी या मकसोयः तर्क का बवजः न होने औलाद के तल्फ न होना।

(५) किसी फैज दुनियावी से बवजः बेऔलादी किसी आर्य्य का महरूम न होना।

(६) इन्सानी की अफजायश और उसके आम नतायज नेक का जहूर व कस अलहजा।

३० फैज बख्शी गवर्नमैण्ट के तरहम अंगेज मादलत से दाद खाही की उम्मीद करके दस्तबस्ता गुजारिश करता हूं कि मेरे पेश किये

हुए मसव्विदा पर गौर फरमा कर इसकी मनजूरी से मतला फर-
माया जावे ।*

—:०:—

[पूर्ण संख्या ४५३]　　　　पत्र

[मुं० बखतावरसिंह ·· ······]

··· ············ · ··· ··· ···

········· ·········· ······ ·· व लिखा और ऋ[ग्वेद के
टाइटल पर मुं]शीजी का हाल छपवा दिया सो क्यों। ऐसे छ[प-
वाने से] फसाद होने का संभव होता है।

················· ·· ार नहीं है। आगे ऐसा काम कभी न
करना। और जो मैंने कहा था कि··· ····· ··· से दाम उधार
है उन सब का हिसाब छा[प दो सो तो] कुछ भी न किया किन्तु
विज्ञापन ही वि[ज्ञापन] छपवा डाले। नहीं छापने के योग्य बातें
छापीं।[1]

मुन्शीजी का वृथा छापा।[2] अब जिन लो[गों ने] दाम नहीं दिया
है और एक महीने तक न दें उन के पा[स अगले अं]क न भेजो।
और उन को उनके हिसाब [का] नोटिस देओ तथा आ[गे से] एक
वेद के ६४ पृष्ठ अर्थात् दो-दो अङ्क एक-एक ··· ·· ···
पहले महीने ऋग्वेद और दूसरे में यजुर्वेद ···· वा दो मैंने
·· ·· ······ ··

मि० भा० क० १४ सं० [१९३७]।[3]

---

*शेष आगे छपेगा। [पं० भगवद्दत्तजी के जीवन काल में छपे पत्र और विज्ञापन के प्रथम तथा द्वितीय संस्करण में इतना ही संकेत है। 'यह नियोग का मसव्विदा' पं० भगवद्दत्तजी ने कहां से लेकर छापा, यह हमें ज्ञात नहीं है। यु० मी०]

१. इस सम्बन्ध में द्वितीय भाग के द्वितीय परिशिष्ट की टिप्पणी देखें।

२. "मुंशी इन्द्रमणिजी के मुकदमे का वृत्तान्त"—ऋग्वेदभाष्य अङ्क १६-१७ के टाइटल पर देखें। तथा इसके सम्बन्ध में आगे मुद्रित भाद्र सुदी ६ सं० १९३७ (१० सितम्बर १८८०) का पत्र भी देखें। इस मुकदमे का पूरा वृत्तान्त तृतीय परिशिष्ट में छपा है।

३. ३ सितम्बर १८८०, शुक्रवार।

[चन्द्रा]लोक वा कोई काव्यालङ्कार सूत्र ग्रंथ हो तो भेज देना।[1]

[दयानन्द सरस्वती]

[2]सत्यार्थप्रकाश भेजने के लिये तुमने कागद छप-
५ वा कर भेजे थे वे लगाकर हमने पुस्तक स[त्यार्थ-]
प्रकाश के भेजवा दिये।[3] अब तुम्हीं पूछ[ते हो]
कि क्या नाम थे। बड़े शोक का विषय है [कि तु-]
म्हें इस का उत्तर क्या दें। क्या तुमने नाम[ठिका-]
ना आदि हिसाब रजस्टर में विना ही लिखे [भेजे]
१० थे। ऐसी अचेतनता से क्या काम [चलेगा]।

—:०:—

[पूर्ण संख्या ४५४] पत्र-सूचना

[स्वामी कृपाराम के नाम पत्र][4]

—:०:—

[पूर्ण संख्या ४५५] पत्र-सूचना

[बलदेवसिंह के नाम पत्र, स्वामी कृपाराम के पत्र के साथ][5]

—:०:—

१५ [पूर्ण संख्या ४५६] पत्र कार्ड

स्वामी कृपाराम जी आनन्दित रहो।

---

१. यह पत्र बहुत फट चुका है। कुछ स्थानों में हमने [ ] कोष्ठक में पाठ पूरा किया है। विषय से मु० बखतावरसिंह के नाम का ही निश्चित होता है। तिथि और हस्ताक्षर का टुकड़ा सर्वथा पृथक् है,
२० परन्तु लेख आदि से इसी पत्र का अंश प्रतीत होता है।

२. उक्त पत्र की पीठ पर ही हस्ताक्षर के नीचे वाला लेख है। पत्र के टुकड़े म० मामराज जी जुलाई सन् १९४५ में लाला रामशरणदास जी मेरठ वालों के यहां से खोजकर लाये। ये टुकड़े अब हमारे संग्रह में सुरक्षित हैं।

३. द्र०—पूर्ण सख्या ४४८ (पृष्ठ ४९३) के पत्र का आरम्भिक भाग।

२५ ४. इस पत्र की सूचना अगले पूर्णसंख्या ४५६ के पत्र से मिलती है।

५. इस पत्र की सूचना भी अगले पूर्ण संख्या ४५६ के पत्र में विद्यमान है।

इस पत्र का उत्तर हम लिख चुके हैं। हम यहां छः सात दिन रहेंगे। जो तुम शनिवार को आओगे तो मिल जायंगे। और एक चिट्ठी बलदेवसिंह[1] के विषय में हमने भेजी है। तुम्हारे पास जो पहुंची होगी उसी में। बाकी जब तुम यहां आके मिलो तब सब निश्चय होगा। और हम पहिले लिख चुके हैं कि मनुष्यों का ५ आत्मा कपटी। पहले कहते हैं कि हम ऐसा ऐसा करेंगे। पीछे वक्त परे पर कुछ भी नहीं।

मिति भाद्र सुदी ४ मङ्गलवार संवत् १९३७।[2]

दयानन्द सरस्वती

—:o—

[पूर्ण संख्या ४५७] पत्र १०

मुंशी बखतावरसिंह जी आनन्दित रहो।

दो एक दिन में तुम्हारे पास वसियतनामा की नकल भी भेज देंगे। अब हम पत्र भेजते हैं। इस महीने में ६३ पत्रे ऋग्वेद के अङ्क में भेजो। और अगले महीने में ६४ पत्रे यजुर्वेद के अङ्क में भेजना। और जब पत्रों की दरकार हो तब दो तीन महीना पहिले १५ से कहना कि हम तैयार करके भेज दिया करें। भीमसेन से कहो वही इस बात की याद रक्खेगा।

मेला चांदापुर का वहां क्या प्रचार होगा। हमने कहा है कि जिस-जिस जगह सौ-सौ और जितनी-जितनी पुस्तकें जहां-जहां जाती हैं वहां-वहां भेज दो। अभी तक क्यों नहीं भेजी। चिठी के २० देखते ही १० वेदभाष्य और ५ भूमिका उन्हींके साथ १०० पुस्तक चांदापुर की मेरठ आर्यसमाज में भेज दो। हमने कहा था समर्थ-दान से सब हिसाब[3] समझ लो और तुमने कहा था कि हमने समझ

---

१. बलदेवसिंह शर्मा के नाम एक चिट्ठी पूर्ण संख्या ४२, पृष्ठ ५९ पर छपी है। २५

२. ८ सितम्बर १८८० मेरठ। मूल पत्र पं० बुद्धदेवजी विद्यालंकार की भगिनी के पास है।

३. मुंशी समर्थदान का लिखा हुआ मुम्बई के वेदभाष्य के हिसाब का एक परचा मिति चैत्र वदी ६ सं० १९३६ से मिति ज्येष्ठ सुदी २ सं० १९३६ तक का है, जिस में ६२२)रु० की आय, तथा ५७५ ॥—)॥ ३०

लिया, अब कहते हो कि हमको ठीक-ठीक मालूम नहीं होता है। [य]ह क्या बात है, पहिले से क्यों नहीं समझ रक्खा। अब जैसे हो वैसे ठीक ठीक करो। वह समय तो गया अब कहने से क्या होता है कि गड़बड़ है, ठिकाना नहीं लगता है। जो हमने पहिले लिखा ५ है कि आर्यदर्पण में कितने कागज लगे हैं और उसका हिसाब तथा एक रीम में कितने रुपैये लगते हैं कितने उस में कागज होते हैं। और यन्त्रालय का सब हिसाब एक नकशे में लिखो। जितना रुपैया वहां जमा हो, जितना खर्च भया हो जितना कागज लगता हो उस का दाम और भाव सब लिखो। वेदभाष्य के दाम का रुपैया १० कितना जमा हुआ और कितना बाकी है। और सब पुस्तकों का दाम जमा और बाकी।

सब यन्त्रालय की कुर्सी आदि जितनी चीजें हैं, उन सब ठीक-ठीक जांच परताल कर साफ लिखो। क्योंकि इस वसियतनामे के जो सभासद हैं उनके सुपुर्द हमने अ[पना] सब हिसाब किताब कर १५ दिया है। वे कहते हैं कि हम ठीक ठीक विना जाने क्या हिसाब करें। इस्से तुमको लिखा जाता है कि सब यन्त्रालय का हिसाब ठीक ठीक करके भेज दो।

यजुर्वेद का सातवां अध्याय बनता है। हम यहां शायत ७ दिन रहेंगे। फि[र] जहां जायेंगे वहां से खबर दी जायेगी। हम २० आनन्दित हैं। आप लोग आनन्दित होंगे।

मिती भाद्र सुदी ४ बुधवार संवत् १९३७।[1]

[दयानन्द सरस्वती][2]

—:०:—

व्यय और ४६।=)॥ रोकड़ बाकी लिखी है। इस परचे में मोहनलाल विष्णुलाल का हिसाब भी है। देखो पूर्णसंख्या ४४८ का पत्र (पृष्ठ ४९५, पं० २५ ८-९)। पत्रों के साथ ही वह परचा म० मामराज जी को मेरठ से मिला है।

१. ता० ८ सितम्बर सन् १८८० मेरठ से। मूल पत्र चार स्थान से फटा हुआ है।

२. म० मामराज जी जुलाई सन् १९४५ में लाला रामशरणदास जी ३० रईस मेरठ वालों के पुराने कागजों में से खोज कर लाये। मूल पत्र हमारे संग्रह में सुरक्षित है।

[पूर्ण संख्या ४५८] पत्र

बाबू दुर्गाप्रसाद जी आनन्दित रहो।

हम यहां हद्द आठ दिन रहेंगे। और करनेल ओलकाट साहिब और मेडम भी कल यहां से चले गये। रमा भी कल यहां से जावेगी। लेखक को आप जल्दी मेरठ में हमारे पास भेज दीजिये जब तक हम यहां हैं। १००) जो आप ने मुंशी इन्द्रमणी जी के विषय में इकट्ठे किये हैं वे मेरठ आर्य्यसमाज के उपप्रधान लाला रामशरणदास जी के पास भेज दीजिये उन्हीं के नाम से। क्योंकि सब जगह का यहां जमा होता है। और यहां से खर्च होता है। रमाबाई अपने घर को जाने को कहती है। यहां समाज से १२५) रुपये और एक थान मलमल का देकर सत्कार किया। कल यहां से दिल्ली और दिल्ली से इलाहाबाद, वहां से घर जायगी। अभी किसी समाज में नहीं जाने कहती है। शायत वहां से आवे तो जाय। इसके भाई के मरने से इसकी "कुछ कुचाली हो गई है" ऐसा लोग संशय करते हैं। चित्त भी चञ्चल है। शरीर पतला निर्बल और रोगी है, गुस्सा भी बहुत है। इसकी "कुचाली" में जो लोग "शङ्का करते हैं" वह लिखने "योग्य नहीं है"। हमने इसको वैशेषिक और न्याय दर्शन के कुछ सूत्र पढ़ाये हैं। समझाई भी बहुत है। आशा है "कि कुचाली" को छोड़कर उपदेश मार्ग में प्रवृत्त हो जावेगी। इस के साथ में बंगाली लोग हैं। वे ही इस की कुमति का कारण हैं, कहती है कि मैं देश में जाकर वहां से अपने किसी कुटुम्बी एक पुरुष और एक औरत रोटी करनेवाली साथ में लेकर आऊंगी। इसकी बुद्धि बहुत अच्छी और सुबोध है। काव्यालङ्कार, कुछ व्याकरण, वाल्मीकि रामायण, महाभारत इतना पढ़ी है। संस्कृत बहुत अच्छा बोलती है। व्याख्यान बहुत अच्छा देती है। "परसों रविवार को" गोपालाव हरि ने इस के बुलाने के लिये चिठी भेजी थी। सो यह कहती है कि अभी तो हम देश को जायंगे। फिर वहां से [आ]वेंगे तव देखी जायगी। जादा क्या लिखना। और तो सब प्रकार से अच्छी है परन्तु जैसे "चन्द्रमा में ग्रहण लग जाय" ऐसी हाल है। रमा के इस हाल को प्रसिद्ध हर जगह न होना चाहिये। उन के भाई का शोक तो निवृत्त हो गया

है।[1]

मुंशी इन्द्रमणीजी के विषय में ३००) रु० मेरठ से, ३००) रु० मुरादाबाद से इकट्ठे हुए हैं। और भी मुरादाबाद और चंदोसी चन्दा होगा। इन में से ६००) रु० बालिष्टर को दिये गये और ५ बाकी मिती पर फिर काम पड़ेगा तब भेजे जायंगे। ये सब रुपैये यहां ही जमा होते हैं। उन के पास एक ही वखत भेजना अच्छा नहीं है, जो ऐसा होता तो इतनी जगह मामला क्यों बढ़ता। उन में बालिष्टर को पहले पांच सौ रुपैये दिये थे। फिर १ सौ रु० पीछे से पहुंचाये गये। इस तरह का हाल है। मुकदमा ता० १८ १० को जारी होगा। यहां से दो एक दिन पहिले लाला रामशरणदास जायंगे। और बाकी रुपैये भी लेते जायंगे। आप मुंशीजी को लिख भेजिये कि ऊपर लिखे मुताबिक मेरठ में रुपैये भेज दिये। रामनाथ लेखक को ७ दिन के भीतर मेरठ में भेज दीजिये। सब से हमारा नमस्ते कह देना। हम आनन्दित हैं। आप लोग आनन्दित होंगे।

१५ मिति भाद्र सुदी ४ बुधवार संवत् १९३७।[2]

[दयानन्द सरस्वती]

:o:

[पूर्ण संख्या ४५९] पत्रांश कार्ड[3]

[प्रो० जी० वाईज ऐल वर्ट्स् स्ट्रीट बैडन जर्मनी]

कमेटी और कई विद्वानों की सम्मति है कि नवजवान आर्यों

---

२० १. स्वामी जी का अनुमान सत्य निकला। रमा ने इस बंगाली विपिन-बिहारी के साथ ता० १३ अक्टूबर सन् १८८० को ईसाई मत स्वीकार करके विवाह कर लिया। देखो पं० ज्वालादत्त का मिति मार्ग वदि ५ सं० १९३७ (११ नवम्बर १८८०) का पत्र [यह पत्र पं० भगवद्दत्तजी के संग्रह में लाहौर में था, जो देशविभाजन के समय नष्ट हो गया। यु० मी०]" " कोमों में २५ छपा पाठ श्री स्वामी जी ने काटा हुआ है।

२. ८ सित० १८८०, मेरठ। मूलपत्र हमारे संग्रह में सुरक्षित है।

३. प्रो० जी वाईज ऐल्वर्ट्स् स्ट्रीट बैडन जर्मनी के ९ पत्र मास्टर लक्ष्मण जी सम्पादित उर्दू जी० च० के परिशिष्ट ८ में छपे हैं। उनके आठवें पत्र के आरम्भ में उक्त अंश उद्धृत है। प्रो० जी वाईज का यह पत्र ३० तीसरे भाग में देखें।

को योरूप में कला कौशल सीखने के लिये भेजना आवश्यक नहीं है।

९[1] [१८८०]

—:०:—

[पूर्ण संख्या ४६०] पत्र

ओ३म् ५

मुन्शी बखतावरसिंहजी आनन्दित रहो।

पत्र आप का आया हाल मालूम हुआ। **मुंशी इन्द्रमणिजी का विषय जो हमने वेदभाष्य के टाईटिल पेज पर छापने को लिखा वह हमारा दोष है।**[2] परन्तु आर्य्यदर्पण और मेला चांदापुर प्रत्यक्षर एकसा ही छाप दिया है वह दोष तो दुर्निवार्य्य है। क्योंकि १० इसमें वृथा ही कागज खराब करना है। इस को कौन लेगा। अब ऐसा न होना चाहिये। सिवाय अच्छे समाचार और नोटिस आदि छापना उचित है। देवीदत्त और शंकरलाल हम से नहीं मिले। और वेदभाष्य के पत्रों की व्यवस्था भीमसेन लिखा करेगा। उसी से कह दो जिस वेद के जिस पृष्ठ से जिस पृष्ठ तक दरकार हो दो १५

---

१. प्रो० जी० वाईज ने अपने अक्टूबर १८८० के पत्र में केवल ९ ता० का उल्लेख किया है, महिना अज्ञात है। प्रो० जी० वाईज के ८वें पत्र पर भी अक्टूबर की तारीख नहीं है। उनका अगला ९ वां पत्र १० अक्टूबर का है। हमने अधिक से अधिक इसे सितम्बर मास का मानकर यहां जोड़ा है। २०

२. श्री स्वामी जी ने इन्द्रमणि का समाचार आर्यदर्पण में छापने को लिखा था। देखो पूर्ण संख्या ४१७ का पत्र पृष्ठ ४४८, पं० १६। जब स्वामीजी ने पूर्णसंख्या ४५३ पृष्ठ ५०५ के पत्र में 'वेदभाष्य के टाइटल पर उक्त समाचार छापने के विषय में' बखतावरसिंह को लिखा, तो उसने उत्तर में लिखा कि 'आपने लिखा था' और स्वामी जी ने उसे सरलता से मान २५ लिया। ऋ० द० ने पूर्ण संख्या ४४८ (पृष्ठ ४९३) के पत्र में 'एक मुन्शी जी का दूसरा मेरे ठहरने का ठिकाना मेरठ का नोटिस छापना' लिखा था। ऋ० द० के ठहरने का नोटिस सदा वेदभाष्य के टाइटल पर ही छपता रहा। अतः उसी के साथ मुंशी इन्द्रमणि का वृत्तान्त भी वेदभाष्य के टाइटल पेज पर छाप दिया। ३०

तीन महीने पहिले से लिख भेजेगा। पहिले पत्र में हिसाब के लिये जो नकशा की व्यवस्था लिखी है। सब यन्त्रालय का हिसाब समझ कर जलदी लिख कर भेज दो। हम अब यहां थोड़े ही दिन तक रहेंगे। दो दिन पीछे लिखेंगे जहां जाना होगा। और १ रीम का
५ कितना रुपया, कितना दस्ता, कितने ताव, कितने पृष्ठ होते हैं, यह भी लिखो। और हमारे कह सुने विना वेदभाष्य के अङ्क का दाम बढ़ाया मत करो। और वहां यह भी कह देना सब जनों से कि सत्यनामसिंह मथुरा में हैं। हम आनन्दित हैं। आप लोग आनन्दित होंगे।

१० मिती भाद्र सुदी ६ शु० संवत् १६३७।[1]

[दयानन्द सरस्वती]

जैन मत के ग्रन्थ जिस किसी छापेखाने बनारस वा कलकत्ते में संस्कृत वा भाषा के जितने जहां मिलें भेज दो। और अलङ्कार के पत्रे जो हमने चन्द्रालोप[2] नामक लिखे हैं भीमसेन के पास होंगे।
१५ भेज देना जलदी।

—:०:—

[पूर्ण संख्या ४६१] पत्र

ओ३म्

भाई ठाकुरदास जी योग्य नमस्ते।

पत्र आप का मिति भाद्र वदी १० सोमवार [सं० १६३७
२० पंजाबी][3] का लिखा[4] स्वामी जी के पास पहुंचा। स्वामीजी ने हमको दे दिया। उक्त पत्र को देख अभिप्राय जानकर मुझ को आश्चर्य होता है कि आप पुनः पुनः पिष्टपेषणवत् श्रम क्यों करते हैं। मैंने प्रथम पत्र[5] में सब बातों के प्रत्युत्तर लिखे फिर भी तुम न समझे तो मेरा क्या दोष है। क्या मैंने यह बात न लिखी जो

---

२५ १. १० सितम्बर १८८०, मेरठ। मूल पत्र हमारे संग्रह में सुरक्षित है।

२. यहां 'चन्द्रालोक' नाम होना चाहिये।

३. ३० अगस्त १८८०।

४. इस पत्र को तथा इस से पूर्व भेजे गये ठाकर दास के पत्र तीसरे भाग में छाप रहे हैं। वहां देखें।

३० ५. यह पूर्ण संख्या ४३५, पृष्ठ ४६६ पर छपा है।

स्वामीजी से मत विषयक शास्त्रार्थ किया चाहो तो अपने मत के सर्वोत्कृष्ट विद्वान् को स्वामी जी के सम्मुख करो। अथवा जो ऐसा न कर सको तो जो इस समय गुजराँवला में आत्माराम जी उपस्थित हैं उन्हीं को शास्त्रार्थ के वास्ते नियुक्त करो। जिस में आप लोगों के मत की सत्यता सर्वत्र प्रसिद्ध हो के सबको विचार ५ करने का समय प्राप्त हो और जो आप लोगों पर (मत और स्व-ग्रन्थों को गुप्त रखने से) मिथ्यात्वरूप कलंक प्रसिद्ध हो रहा है वह दूर हो कर स्वमत का तत्त्व यथार्थ प्रकाशित हो जाये। लोग ऐसा अपवाद तुम्हारे पर धरते हैं कि जैसे वेदादिक शास्त्रों को आर्य लोग, बायबल आदि को ईसाई लोग और कुरान आदि को मुसल- १० मान लोग व्याख्या और देश भाषान्तर में तरजुमा कर के प्रचार कर रहे हैं वैसे जैन लोग क्यों नहीं करते। यदि जैनों के मत विष-यक पुस्तक ठीक-ठीक सत्य और विद्या पुस्तकों के अनुकूल होते तो वाममार्गियों के सदृश कौल पद्धति के समान अपने पुस्तकों को गुप्त क्यों रखते। इत्यादि बुद्धिमानों के अपवाद का निवारण १५ करना आप लोगों को अत्यन्त उचित है। सो इस के निवारण के उपाय दो ही हैं। एक स्वामी जी के साथ तुम्हारे मत के सर्वोत्तम विद्वान् का शास्त्रार्थ होना और द्वितीय अपने सब पुस्तकों को अनेक देश भाषाओं में छपवा के प्रसिद्ध करना। जब तक ऐसा न करोगे तब तक पूर्वोक्त कलंक दूर कभी न होगा। प्रथम यत्न का उपाय २० जो किया चाहो तो शीघ्र ही हो सकता है। स्वामी जी और आत्माराम जी का संवाद हम और तुम मिल कर करावें। जो स्वामी जी का पक्ष खण्डित होकर आप लोगों का पक्ष सिद्ध रहे तो आत्माराम जी आदि आठ जनों का रेल वा खाने-पीने का जितना खर्च उठे उतना हम दें और जो आत्माराम जी का [पक्ष] निराकृत २५ हो के स्वामी जी का पक्ष सिद्ध रहे तो आठ पुरुषों का पूर्वोक्त व्यव-हार में यावत् व्यय हो तावत् आप लोग देवें। कोई उत्तम स्थान मध्यवर्ती हो वहां दोनों महात्मा उपस्थित हो के शास्त्रार्थ करें। हम लोगों ने स्वामी जी से इस विषय में पूछा था। स्वामी जी ने कहा है कि ऐसा हो तो हमको स्वीकार है। ३०

अब तुम लोग आत्माराम जी से पूछो कि वे इस बात में प्रसन्न हैं वा नहीं। जो वे शास्त्रार्थ करने को उद्यत हों तो शीघ्र लिखें क्योंकि स्वामी जी यहां से अन्यत्र जाने वाले हैं। इस से यह कार्य अति शीघ्र होना चाहिये अर्थात् दोनों महात्माओं के समागम से ५ सब सिद्धान्त प्रकाशित हो जा सकेंगे और दूसरे पत्र का उत्तर इस वास्ते नहीं भेजा कि उस में कुछ विशेष न था। अब जो तीसरे उत्तर में तुमने लिखा है सो भी पिष्टपेषणवत् है। क्योंकि इनका उत्तर प्रथम पत्र के उत्तर में हम लिख चुके हैं और इस पत्र में तुम को ऐसा असभ्य लेख करना योग्य न था। तथा स्वामी जी के नाम १० पत्र भेजना भी अनुचित था। यह निश्चय जानो कि स्वामी जी और उनका सर्वस्व हमारा और हम तथा हमारा सर्वस्व स्वामी जी का है। जैसा तुमने लिखा वैसा तुम पर भी आ गिरता है कि तुम कौन कहने और लिखने वाले और जो हो तो हम क्यों नहीं ? यह सब बातें लिखने से कभी नहीं निपट सकती हैं, विना दोनों १५ विद्वानों के समागम के वार-वार विना समझे लिखते हो कि सत्यार्थप्रकाश आपने क्यों छपवाया इतना भी बोध तुमको नहीं है कि यह ग्रन्थ स्वामीजी ने छपवाया है वा राजा जयकृष्णदास सी० ऐस० आई० रईस मुरादाबाद ने छपवाया है। जब ऐसी छोटी-छोटी बातों को नहीं समझ सकते हो तो गूढ़ बातों को क्या समझ २० सकोगे। यह तुम और हमको अत्यन्त योग्य है कि अपने और दूसरे के मत का सत्यासत्य निर्णय के लिये सभ्यता, विद्या, प्रमाण और शास्त्रोक्त व्यवहार के सहित प्रीतिपूर्वक शास्त्रार्थ करके असत्य का निरोध और सत्य प्रचार करें। यह शास्त्रार्थ प्रथम प्रकृत विषय जो सत्यार्थप्रकाश में स्वामी जी ने लिखा है उसी विषय में हो, २५ पश्चात् अन्य विषयों में। जो इस शास्त्रार्थ में तुम्हारा पण्डित सत्यार्थप्रकाश के द्वादश समुल्लासोक्त विषय को तुम्हारे मत से विरुद्ध ठहरा देगा तो स्वामीजी उस विषय को दूसरी बार सत्यार्थ-प्रकाश में छपवाने न देंगे और माफी भी मांगेंगे और जो वह विषय स्वामी जी ने तुम्हारे मत के अनुसार सिद्ध कर दिया तो जितनी ३० तुमने वेदादिविषयक निन्दा लिखी है इस को छोड़ना और स्वामी जी से माफी मांगना होगा। जो तुम शीघ्र शास्त्रार्थ करना न चाहो तो कब तक करोगे इसका निश्चित समय लिखो। परन्तु

जितना बने उतना शीघ्रता से करो। स्वामी जी और हमारी ओर से कुछ भी विलम्ब नहीं। इस का प्रत्युत्तर पत्र देखते ही दीजिये और इस बात में तुमको विलम्ब करना उचित नहीं, क्योंकि तुम्हीं [ने] यह बात उठाई है। इस वास्ते आप को योग्य है कि कल शास्त्रार्थ करने में प्रवृत्त हुआ चाहो तो आज ही तत्पर हूजिये। ५
देखो हमारे साथ पत्रव्यवहार करने से तुमको कितना लाभ हुआ। कि जो प्रथम और दूसरा पत्र तुमने हमारे पास भेजे थे वे कैसे अशुद्ध थे और जो तीसरा पत्र तुमने भेजा सो भाषा के कायदे से कुछ अच्छा है। और अभिप्राय अर्थ से तो यह भी शुद्ध नहीं है। अब मैं अपनी लेखनी को अधिक लिखने से रोककर आप लोगों को १०
जताता हूं कि आप लोग पूर्वोक्त बातों पर ध्यान अवश्य देवें। यह बात बहुत उत्तम और लाभकारी है।

मिती भाद्रपद शुदी ८ रविवार सं० १९३७।'

आनन्दीलाल मन्त्री आर्यसमाज मेरठ

—:०:—

[पूर्ण संख्या ४६२] पत्र १५

॥ ओं ॥

बाबू दुर्गाप्रसाद जी आनन्दित रहो।

लेखक रामनाथ[2] कल सप्तमी शनिवार को हमारे पास पहुंचा। और आज लिखने का भी प्रारम्भ करा दिया है। जैसा होगा वैसा पीछे लिखा जायगा। अब हम यहां से १२ गुरुवार[3] को चार ४ २०
बजे की रेल में मुजफ्फरनगर जायंगे। मुन्शी इन्द्रमणिजी के विषय में जो आपने १००) रुपैये चन्दा किये हैं वे क्या अपने ही पास रखनी की इच्छा है। हमने कई वखत लिखा[4] है कि मेरठ आर्य्य-

---

१. १२ सितम्बर १८८०। पं० लेखरामकृत उर्दू जीवनचरित पृ० ६८७, ६८८ (हिन्दी सं० पृष्ठ ७०७ ७०८) पर छपा है। २५

२. यह कुछ दिन ही रहकर लौट गया। द्र० पूर्णसंख्या ४७१ का पत्र।

३. अर्थात् भाद्र शु० १२। गुरुवार को त्रयोदशी है। ९ मी १० मी के हो जाने से भेद पड़ा है। १६ सितम्बर १८८०। इस संबंध में द्वितीय भाग के अन्त में द्वितीय परिशिष्ट की टिप्पणी देखें।

४. यह विषय पूर्ण संख्या ४५८ के पत्र में मिलता है। इस के अति- ३०

समाज के उपप्रधान लाला रामशरणदास के पास भेज दो। क्यों नहीं भेजते हो। मुन्शी इन्द्रमणि जी [के] पास नहीं भेजना। वहां जाने से व्यर्थ ही खर्च कर देंगे। हम ने यह कहा है कि मुकदमे में यथोचित खर्च होकर जो बाकी बचेगा वह इकट्ठा जमा रहेगा कि
५ जब फिर भी कभी इसी तरह समय [पर] काम आवे। इस मुकदमे के हुए पीछे जिन्होंने जितना रुपया दिया है छपाकर सब प्रकाश किया जायगा। और सितम्बर को १८ वीं तारीख को मु[क]दमा जारी होगा।

मुम्बई में पण्डित के विषय में हमने पत्र लिखा। वहां से रुपैये
१० आगये वा नहीं।

मथुरा से दूसरा पण्डित बुलाया है।[1] आशा है कि उसके आने से वेदभाष्य का अच्छी तरह से काम चलेगा। अभी **यजुर्वेद के ७ वें अध्याय २३ वें मन्त्र का भाष्य हो रहा है।**

सब से हमारा नमस्ते कह देना। हम आनन्दित हैं आप लोग
१५ आनन्दित होंगे।

मिती भाद्र सुदी ८ रविवार सम्वत् १९३७।[2]

२०) रुपैये फिरोजपुर से जो विष्णुसहाय मन्त्री आर्य्यसमाज फिरोजपुर ने पण्डितों के विषय में भेजे हैं, जमा कर लिये जायं।

[दयानन्द सरस्वती][3]

२० बाबू जी दुर्गाप्रसाद जी से रामनाथ की नमस्ते। बहोत्त राजी खुशी साथ पहोंचा। लाला हर नारायण जी योग्य रामनाथ की नमस्ते।

—:०:—

[पूर्ण संख्या ४६३] पत्र

ओ३म्

२५ मुन्शी बखतावरसिंह जी आनन्दित रहो।

रिक्त दुर्गाप्रसाद को भेजा कोई पत्र उपलब्ध नहीं हुआ। इस संकेत से १-२ पत्र और भी भेजे गये होंगे, ऐसा प्रतीत होता है।

१. इस सम्बन्ध में द्वितीय भाग के अन्त में द्वितीय परिशिष्ट की टिप्पणी देखें।

३० २. १२ सितम्बर, १८८० मेरठ।

३. मूल पत्र हमारे संग्रह में सुरक्षित है।

कल [पत्र] आप का आया हिसाब देखा गया। परन्तु तु[मने लि]खा कि इस महीने में ४८॥) रुपैये का टि[कट] आ[या] यह तो सम्भव नहीं होता। हमारा ······ भेजा है कागज आदि का हिसाब क्यों नहीं लि[खा]। सेठ निर्भयराम की दुकान पर जो २००) रुपैये भेजे [थे], उनका क्या हुआ। बड़े आश्चर्य की बात है ५ कि पुस्तकों की बिक्री बहुत कम होती है। हम पहले लिख चुके हैं[1] कि जो-जो पुस्तकें छपती जायं वे जहां-जहां जितनी-जितनी भेजी जाती हैं उसी वखत भेज दिया करो। मैं जानता हूं कि मेला चांदापुर अभी तक न भेजा गया होगा और तुमने जो उत्तर लिखा वह अकिंचन है। इस का ठीक उत्तर यही है कि आगे को ऐसा न १० करना [चा]हिये। और श्यामजी कृष्ण वर्म्मा के पास [उनका] ठीक-ठीक पता लिखकर सब अङ्क दोनों वेद[ों के] तथा वर्णोच्चारणशिक्षा, संस्कृतवाक्यप्रबोध [और] व्यवहारभानु ये पत्र के देखते ही भेज दो। हम मेरठ से १२ गुरुवार[2] को चार बजे की रेल में मुजफ्फरनगर जायंगे। तुम भी अपने मामा को चिठी लिखना हो १५ लिखो, उनको जो शङ्का हो निवृत्त कर जायं। वहां हम को जाना कुछ आवश्यक तो न था, परन्तु मेरठ से डिप्टी कलक्टर राय बद्रीप्रसाद वहां गये हैं। उन्होंने बुलाया है। उनके सबब से वहां के [और] लोगों की भी प्रीति है क्योंकि वे वहां के हाकिम [हैं] और रमाबाई का हाल इतना ही है व्याकरण [काव्यालं]कार पढ़ी है २० संस्कृत भी अ[च्छा बोलती है, व्याख्या]न भी अच्छा देती है और बड़ी बुद्धिमती है। [परन्तु कुछ] अकथनीय अनुचित दोष है। इस से वहां के स[भास]दों की उपेक्षा हुई है। हमने तो उस को बहुत समझाया है। जो उसका भाग्य होगा और सुधर जायगी तो इसमें उसकी बड़ी प्रतिष्ठा होगी और उसके उपदेश से स्त्री उपकार भी २५ बड़ा होगा। यह रमा का हाल कहीं छपवा न देना। नहीं तो उस की दुर्दशा हो[गी]। हम आनन्दित हैं। आप लोग आनन्दित होंगे।

मिती भाद्र सुदी ८ रवि संवत् १९३७।[3]

फिरोजपुर के आर्य्यसमाज में १४ और १५ अङ्क दोनों वेद-

---

१. देखो पूर्ण संख्या ४५७, पृष्ठ ५०७, पं० १८-२०। ३०

२. देखो पृष्ठ ५१५ टि० ३। पूर्णसंख्या ४६५ में '१२ बुधवार' है।

३. १२ सितम्बर १८८० मेरठ से बनारस को।

भाष्यों के उनके पास नहीं पहुंचे हैं। जलदी भेज दो। और फिरो-
जपुर के कांतचन्त के ८) बाबत वेदभाष्य के हमारे पास आगये।
और ८) रु० फीरोजपुर समाज के भी आ गये। और रजष्टर
अच्छी तरह दरुस्त कर रक्खो। और ग्राहकों के नम्बर भी हमारे
५ पास लिख भेजो। हम अपने रजस्टर से मिला लेंगे।[1]

[दयानन्द सरस्वती]

—:०:—

[पूर्ण संख्या ४६४] **पारसल**

[मुंशी बखतावरसिंह]

वसियतनामा भेजा।[2]

—:०:—

१० [पूर्ण संख्या ४६५] **पत्र**

मुंशी बखतावरसिंह जी आनन्दित रहो।

आज वसियतनामा रमाना कर दिया। और ८) रुपैये पण्डित
अंबाशंकर के बावत वेदभाष्य के चौथे वर्ष के। और ८) रुपैये
लाला रामशरणदास के बाबत वेदभाष्य के चौथे वर्ष के। और
१५ १४) रुपैये बाबू छेदीलाल के बावत वेदभाष्य के चौथे वर्ष के।
और १२) रुपैये मुंशी रामशरणदास के बावत वेदभाष्य के तीन
वर्ष तक के। इन चारों का एक ही मिती में रुपया जमा हुआ।
और एक ही मुकाम मेरठ है। मिती भाद्र सुदी १२ बुध वा० संवत्
१९३७ जानो इन का नाम भी अगले वेदभाष्य में चाहो तो छपा
२० देना। और ५४॥=)॥ रुपैया आर्य्यसमाज मेरठ से वर्णोच्चारण-
शिक्षा आदि पुस्तकों का मूल्य जमा हुआ मिती भाद्र सुदी १२
बुधवार संवत् १९३७ को **हम कल ४ बजे की रेल में बैठ कर
मुजफ्फरनगर जायेंगे**[3]। चिठी पत्र वहीं भेजना होगा। हमने तुम

---

१. म० मामराज जी ने ला० श्यामलाल जी अग्रवाल प्रधान आर्य-
२५ समाज के साथ ला० रामशरणदास जी रईस मेरठवालों के सहस्रों पत्रों में से
२३ जुलाई सन् १९४५ को खोजा। फटा हुआ मूल पत्र हमारे संग्रह में
सुरक्षित है। कोष्ठों में हमने पूर्ति की है।

२. इस की सूचना पूर्णसख्या ४६५ के आरम्भ के वाक्य से मिलती है।

३. पं० लेखरामकृत जीवनचरित में भाद्र सुदी १२ (१५ सितम्बर

को कई वखत लिख कर भेजा है कि जो पुस्तक जिस वखत छपकर तैयार हो उस को उसी वखत जहां-जहां जितनी पुस्तकें जाती हैं भेज दो। क्यों नहीं भेजते हो। हम को मालूम होता है कि जिस तरह मेला चांदापुर अभीतक यहां नहीं आया निश्चय है कि दूसरी जगह भी न पहुंचा होगा। यह बड़े अन्धेर की बात है। न जाने ५ क्या होता है। हमने कह दिया है कि वेदभाष्य के साथ ही पहुंचा दिया करो। और पांच व छः वेदभाष्य तो यहां से भेजे गये और व्रजभूषणदास के यहां से भी आये थे। उनका दाम चिठी में क्यों नहीं लिखा। क्या तुमने अपना ही पास हिसाव लिख कर बैठ रहे। इससे हमको क्या मालूम है कितना बिका और कितना रहा। हम १० से यहां के पांच सात मनुष्य कह चुके कि हम ने भ्रमोच्छेदन का पुस्तक मंगाया है। अभी तक हमारे पास नहीं भेजा। हम कहते हैं कि यन्त्रालय की आमदनी और बिक्री जितनी हो तिल भर का हिसाब साफ लिख कर भेजा करो। और अगले महीने से हिसाब हमारे पास मत भेजा करो। किन्तु **परोपकारिणी सभा के मन्त्री** १५ **जो लाला रामशरणदास** हैं,उन्हींके पास एक नकशे में सब हिसाब यथावत् लिख कर भेजा करो। अभी से अपना हिसाब ठीक-ठीक कर रक्खो।[1] बहुत बार हम लिख चुके हैं कि जिसने वेदभाष्य का चन्दा आज तक कुछ भी नहीं आया है उनके पास वेदभाष्य चौथे वर्ष के आरम्भ से मत भेजना। ऐसा ही करना और उन के पास २० पत्र भी भेजो कि जब तक तुम चार वर्ष का चन्दा न भेजोगे तब तक तुम्हारे पास वेदभाष्य न भेजा जायगा। और उनके नाम छांट के हमारे पास भेजो कि जिनको हम अपने रजष्ट[र] के साथ मिला के ठीक करें और जितनी सामग्री हमारे सामने और जितनी हमारे पीछे छापेखाने में आयी है और जितना दाम लगा है जितना तोल २५ वा गिनती जितने पुस्तकादि पदार्थ जमा व खर्च तथा धन का भी हिसाब यथावत् लिख कर लाला रामशरण उपप्रधान आर्य्यसमाज मेरठ के पास भेज दीजिये। क्योंकि परोपकारिणी सभा के मन्त्री

१८८०) को वहां पहुँचना लिखा है। पहुंचे वस्तुतः भाद्र सुदि १३ (१६ सितम्बर) को। ३०

१. इस विराम के पश्चात् से लेकर अन्त की दो पंक्तियों से पहले तक का सारा लेख ऋषि के अपने हाथ का लिखो हुआ है।

उक्त लाला ही हैं। उनने मुझ से हिसाब मांगा था। मैंने कहा कि मुंशी जी देंगे। मेरे पास पूरा हिसाब नहीं है। शायद वे भी आप को इस वास्ते लिखेंगे और आप उन के पास भेज भी देंगे।[1] हम आनन्द में हैं। आप लोग आनन्द में होंगे।

५ मिती भाद्र सुदी १२ बुधवार संवत् १९३७ मु० (मेरठ)[2]

[दयानन्द सरस्वती]

—:o:—

[पूर्ण संख्या ४६६, ४६७] पत्र-सूचना

[गोपालराव हरि देशमुख][3]

[गोविन्द रानडे][3]

—:o:—

१० ## [पूर्ण संख्या ४६८] पत्र-सूचना

[मुंशी बख्तावरसिंह]

पं० श्याम जी कृष्णवर्मा के पास आक्सफोर्ड विश्वविद्यालय इङ्गलैण्ड पुस्तकें भेजने के सम्बन्ध में।[4]

—:o:—

[पूर्ण संख्या ४६९] पारसल-सूचना

१५ [लाला मूलराज]

वसीयतनामा भेजा।[5]

—:o:—

---

१. ऋषि का निज लेख यहां समाप्त हो जाता है।

२. १५ सितम्बर १८८०। मूल पत्र हमारे संग्रह में सुरक्षित है।

३. इन दोनों को पत्र लिखने की सूचना सेवकलाल कृष्णदास बम्बई

२० के १२ अक्टूबर १८८० के पत्र में मिलती है। ये सम्भवत: स्वीकारपत्र (वसीयतनामे)के सम्बन्ध में रहे होंगे। पूर्व पूर्ण संख्या ४४७ (पृष्ठ ४८८-४९३) पर छपे स्वीकारपत्र में इन दोनों व्यक्तियों के नाम भी हैं। सेवक लाल कृष्णदास का पत्र तीसरे भाग में देखें।

४. इस पत्र की सूचना पूर्ण संख्या ४७० के अन्त में है।

२५ ५. इस वसीयतनामा को भेजने की सूचना पूर्ण संख्या ४७२ के पत्र में है।

[पूर्ण संख्या ४७०]　　　पत्र

ओ३म्

स्वस्ति श्रीश्रौतमार्गप्रकृतपरिचयस्वान्तसिद्धान्तधर्मा
नानातर्कप्रयासैर्विविधगुणभरश्रान्तिशर्मा ।
देशे-देशे प्रवादोत्पथजनमथितोत्कर्षसद्धर्षकर्म्मा　　५
भूयो भूयस्समीयाद् बुधकृतिजनितं सत्फलं कृष्णवर्म्मा ॥१॥
पत्रमत्र त्वदीयस्योदन्तस्य च मदन्तिकम् ।
आगतं येन नः स्वान्तेऽत्यन्तं सुखमजायत ॥२॥
वेदभेदपरिध्वंसतर्कसद्धर्षकृद्वरम् ।
व्याख्यानमतिसौहित्यमाख्यातुस्तव दैशिकम् ॥३॥　　१०
समीरितं पत्रमनेकमञ्जसा क्रियावरैर्जर्मनदेशजैर्जनैः*।
समीपमस्माकमवाप्तमत्र तत्तदाशयं विद्धि महाशयैर्मुदा ।४।
विदेशजैर्देशसुखाय[1] शिल्पक्रियानिदेशाय सदाशयात्किल ।
नरेभ्य एभ्यो[2]लिखितं निरन्तरं करण्डमेतैस्त्वमतस्समाचर ५
गन्तव्यमत्रागमनात्स्वदेशे त्वया च तत्राढ्यपुरे[1] पुरैव ।　　१५
व्याख्यानमाख्यानमनस्सु देयं श्रुतीरितं श्रौतसुधान्वितं च ६
तदीयभाषाविरहा[1]न्न मत्तः प्रयाति पत्रोत्तरमाशुतेभ्यः ।
वक्तव्यमेतल्लिखितं न धीमस्त्वया च मोनिर्विलयस्य वृत्तम् ७
नमस्त इत्येष मदुक्तशब्दस्तस्मै[1] प्रयुक्तोऽथ न वा प्रयुक्तः ।
प्रस्थातुकामो मतिमंश्च देहरादूनं पुरं नूनमितोऽहमस्मि ।८।　　२०
गत्वा पारलिमेन्टसज्जनसभां व्याख्यानमाख्यावरम्[1] ।
दत्वा भारतवर्षपूर्वनियमप्रेक्षावत[2]स्तान् कुरु ।

---

*यह संकेत प्रो० जी० वाईज के पत्रों की ओर है । प्रो० जी० वाईज के पत्र तीसरे भाग में छापे हैं ।

५ - १. (देशसुखाय) भारतवर्षीयजनसुखाय ।
　२. (एभ्यः) भारतवर्षनिवासिभ्यः　　　२५
६ - १. (तत्राढ्यपुरे) धनसमृद्धे युरोपाख्ये ।
{ ये सब संस्कृत टिप्पणियां स्वामी जी की लिखी हुई हैं । सम्पादक }
७ - १. (तदीयभाषाविरहात्) तेषां युरोपदेशवासिनां भाषाविरहात् ।
८ - १. मोनिर्विलिमाख्याय ।
९ - १. (आख्यावरम्) सौजनाभियुक्तश्रौतसिद्धान्तानुकूलम् ।　　३०
　२. (भारतवर्षपूर्वनियमप्रेक्षावतः) भारतवर्षस्य पूर्वेषां जनानां सौजन्य-

पश्येयुर्यत ईदृशं निजदशादुःखं°द्रुतं दुःखिनां
म्लेच्छा म्लेच्छतया च भारतजनान् संपीडयन्तीति यत् ।९।

यवनजनमतं हि स्वीयधर्मानुकूलः
सकलजनगरिष्ठः श्रेष्ठकर्मैव नान्यः ।
५ इति मनसि निधायोत्कण्ठिताः कण्ठतेल ।।°°
श्रुतिपथनिरतानां च्छेदमिच्छन्ति नित्यम् ।।१०।।

(अत्रांशे प्रकृतविवादो यथा)

मुरादाबादीयश्श्रुतिपथगमुंशीन्द्रमणिकः
श्रुतः श्रौताचाराद्यवनमतविच्छे[द]नरतः ।
१० तदुक्तौ द्वौ ग्रन्थौ यवनकृतसम्मानवशान्
मजस्ट्रेटः सम्प्रत्यनिशमवदार्षीत्[1] तदपरम् ।।११।।

मुद्रापञ्चशतं दण्डं कृतवाञ्छीघ्रमेव सः ।
तस्य प्रत्यर्जनं[1] तत्र यातं जजगृहे यदा ।।१२।।

त्यक्त्वा शतानि चत्वारि जजेनापि स्वयत्नतः ।
१५ मजस्ट्रेटकृतो न्यायः स्वीकृतोऽनेकधा तदा ।।१३।।

सदालसा राज्यनिबन्धकर्मसु प्रभावतः स्वार्थरता विशेषतः ।
भवन्ति केचिच्च परार्थतत्परा जना नियुक्ता इह राज्य-
कर्मसु ।।१४।।

भवन्ति ये म्लेच्छजनाश्च तेषु तत्कथाप्यलं दुःखतमाय
२० दृश्यते ।

सौहार्द्धाजिलत्वसर्वशास्त्रसिद्धान्तानुकूलेषु नियमेषु विचारत: (तान्) युरोपदेशनिवासिनो महाशयान् पारलिमेण्टसभासद: । (दुखिनां) भारतवर्षनिवासिनां दु:खाकुलचेतसाम् ।

° अत्र 'निजदशा दु:खं' इत्येवं शोधनीयम् (यु० मी०) ।

°° अत्र 'कण्ठतले' इत्येवं शोधनीयम्, यद्वा 'कण्ठमूले' (यु० मी०)।

२५ ११—१. (अवदार्षीत्) भिन्नवान् ।

१२—१. (प्रत्यर्जनम्) प्रतिविवादपत्रमपीलाख्यमिति यावत् ।

१३—त्यक्त्वा शतानि चत्वारि इत्यत्र अयं निर्धनी नापरोधे न्यूनत्वमस्येति कथयित्वेति शेष: ।

न यावदेतेषु मनूक्तदण्डकृन्नयोऽस्ति तावन्न सुनीति-
तत्पराः ॥१५॥
भवन्ति ते प्रत्युत धर्मकर्मणि प्रकाशयन्ति स्वमतिभ्रमं यतः ।
अहो महोपद्रवकर्मकारिणः समत्सराः स्वल्पधियोऽति-
लोभिनः ॥१६॥　　५
सर्वमेतत् समाख्याहि पारलिमेण्टसंसदि ।
आख्यातुस्तव दृष्टान्ते सिद्धान्ते न*यथा भवेत् ॥१७॥
सुसायटी सोफिकलप्रधानः ख्यातश्च यो डाक्टर-
मासिनाम्ना ।°
न तस्य पत्रोत्तरमाशु मत्तस्तदीयभाषाविरहाद्धि याति ।१८।　　१०
न च तावद्धनं व्येतुमवकाशो ममाधुना ।
रक्षेयं यावता कञ्चिद् द्विभाषिणमिहान्तिके ॥१९॥
करनेल ओलकाटाख्यं प्रयुक्तं°° च मयाधुना ।
पत्रमिच्छस्तदा रक्ष मत्समीपे तथाविधम् ॥२०॥
यदि त्वां स मिलेत्तत्र सुसायटिपतिस्तदा ।　　१५
कथ्यतां सर्वमेवैतद्वृत्तं मत्पत्रकांक्षिणे ॥२१॥

त्वदभिलषितानि पुस्तकानि मया तदानीमेव प्रेषितुमाज्ञप्तानि काशीनगरादागमिष्यन्त्यागतानि न वेत्यलं विस्तरेण । अत्रैका परोपकारिणी सभा स्थापिता, यत्र भवानपि सभासदस्ति । तस्या व्यवस्था नियमान्वितं राजमुद्राङ्कितं भवत्सनीडे प्रेषयामीदं स्वात्मवत्सदा रक्ष्यमुत्तरस्मिन् समयेऽत्यन्तं कार्यकारि वर्तते । तत्रत्यो-　　२०

१५—(मनूक्तः) कार्षापणं भवेद्यत्र दण्ड्योऽन्यप्राकृतो जनः । तत्र राजा भवेद् दण्डयः सहस्रमिति धारणा ॥ इत्यादिवत् । अत्र राजशब्देन सामान्यतो राज्यकर्मणि नियुक्ता ग्राह्याः ॥

१९　(द्विभाषिणम्) देवभाषागौरण्डभाषाविदम् ।　　२५

२०　(तथाविधम्) उक्तद्विभाषाविदम् ।

* अत्र कदाचित् 'दृष्टान्तः सिद्धान्तेन' इति पाठो युक्तः स्यात् ॥

° इस सम्बन्ध में द्वितीय भाग के अन्त में द्वितीय परिशिष्ट की टिप्पणी देखें ।

°° अत्र 'प्रत्युक्तं' इति पठनीयम् ।　　३०

२१—(सः) सुसायटीप्रधानो डाक्टर मासीतिनामा ।

दन्तः पत्रद्वारा मह्यं निवेदनीय इति ।

नगगुणनवचन्द्रे विक्रमादित्यवर्षे
रसतिथिशनिवारे चाश्विने कृष्णपक्षे ।[1]
बुधजनसुखदात्रे कृष्णवर्माभिधाय
५ **प्रथितविबुधवाण्या प्रेषितं पत्रमेतत् ।।[2]**

दयानन्द सरस्वती

।।भाषार्थ।।

स्वस्ति श्री वेदपथ के विशिष्ट परिचय से मन में सिद्धान्त का अङ्गीकार करने वाले, अनेक तर्कपूर्ण प्रयत्नों से विविध गुणों को १० अर्जित करने वाले, विभिन्न देशों में प्रवादों से उन्मार्गगामी लोगों के उत्कर्ष को अभिभूत करने वाले कृष्णवर्मा विद्वानों के यत्न से उत्पन्न सुफल को पुनः पुनः प्राप्त करें ।।१।।

आप का वृत्तान्त का पत्र यहां मेरे पास आया, जिस से हमारे मन में अत्यन्त सुख उत्पन्न हुआ ।।२।।

१५ व्याख्याता आप के, वेदविरुद्ध मत का प्रत्याख्यान करनेवाले, विभिन्न स्थानों में होने वाले उत्तम व्याख्यान अत्यन्त सुखद हैं ।।३।।

क्रिया-कुशल जर्मन लोगों के द्वारा हमारे पास भेजे गये अनेक पत्र यहां प्राप्त हो गये, उन सज्जनों से उनके अभिप्राय को २० समझो ।।४।।

अपने (भारत) देश के सुख के लिए इन विदेशियों ने सदाशय से कला-कौशल सिखाने के उद्देश्य से इन (भारतीय) लोगों को निरन्तर लिखा है, अतः तुम इन के साथ उत्तम व्यवहार करो ।।५।।

२५ यहां स्वदेश लौटने से पूर्व तुम्हें उस समृद्ध भूमि (यूरोप) में जाना चाहिये और व्याख्यान प्रिय जनों में वेदोक्त एवं वेदामृत से

---

१ २५ सितम्बर १८८० । उस दिन तिथि ७ हो गई थी । संवत् १९३७ आश्विन कृष्ण ६ शनिवार ।

२. मूल पत्र प्रो० धीरेन्द्रवर्मा जी के पास सुरक्षित है । इसकी जो ३० प्रतिलिपि हमारे पास आई थी, वह अशुद्धप्राय थी । हम ने बहुत यत्न से उसे शोधा है । फिर भी कई अशुद्धियां रह गई हैं ।

युक्त व्याख्यान देने चाहिये ॥६॥

उन की भाषा को न जानने के कारण मेरी ओर से उन के पत्रों का उत्तर नहीं जा पाता है, यह बात उनसे बतानी चाहिये। हे बुद्धिमन्! तुम ने मोनियर विलियम्स का समाचार नहीं लिखा ॥७॥ ५

मेरा कहा हुआ 'नमस्ते' शब्द तुम ने उन (मोनियर विलियम्स) से कहा या नहीं ? मैं यहां से अब देहरादून नगर को प्रस्थान करने का इच्छुक हूं ॥८॥

सज्जन सभा पार्लियामेण्ट में जाकर वैदिकसिद्धान्तानुकूल व्याख्यान देकर उन्हें (सभासदों को) भारतवर्षीय प्राचीन लोगों के १० शास्त्रानुकूल नियमों से परिचित कराओ। जिस से वे अपनी आखों से दुःखियों के इस प्रकार के दुःख को देखें। म्लेच्छ लोग निकृष्ट आचरण से भारतीय जनों को पीड़ित कर रहे हैं ॥९॥

यवन लोगों का मत है कि अपने धर्मानुकूल व्यक्ति ही सब लोगों में श्रेष्ठ तथा उत्तम कर्म करनेवाला है, अन्य नहीं। इस मत १५ को मन में रखकर अत्यन्त उत्कण्ठित वे सदा वेदपथगामी जनों का उच्छेद चाहते हैं ॥१०॥

(इस अंश पर चालू विवाद, जैसे)

मुरादाबाद निवासी वेदपथानुयायी मुंशी इन्द्रमणि वैदिक आचार से प्रसिद्ध है तथा यवन मत के खण्डन में व्यस्त है। यवन- २० कृत सम्मान के कारण मजिस्ट्रेट ने उस (इन्द्रमणि) के दो ग्रन्थों पर प्रतिबन्ध लगा दिया ॥११॥

और पांच सौ रुपये जुर्माना कर दिया। जब उस की अपील जज के न्यायालय में पहुंची ॥१२॥

तो जज ने अपने यत्न से चार सौ छोड़ कर मजिस्ट्रेट के द्वारा २५ किये गये न्याय को अनेक प्रकार स्वीकार कर लिया ॥१३॥

यहां राज्यकार्यों में नियुक्त लोग राज्यप्रबन्ध के कार्यों में सदा प्रमादी और प्रभाव के कारण विशेष रूप से स्वार्थ में संलग्न रहते हैं। कुछ लोग परोपकार में भी तत्पर हैं ॥१४॥

जो म्लेच्छ लोग हैं, उनके विषय में कुछ कहने से भी दुःख का ३० अनुभव होता है। जब तक इनमें मनु द्वारा उक्त दण्डविधान लागू नहीं होगा, तब तक ये उत्तम न्याय में तत्पर नहीं होंगे ॥१५॥

अपितु धर्म कार्यों में अपनी भ्रान्त मति को प्रकट करते हैं। ये अल्प बुद्धि वाले, ईर्ष्यालु, अत्यन्त लोभी तथा बड़े उपद्रव कर्म करने वाले हैं ॥१६॥

पार्लियामेण्ट संसद में यह सब इस प्रकार कहो कि जिस से ५ तुम व्याख्याता के दृष्टान्त तथा सिद्धान्त में कोई वैपरीत्य न हो ॥१७॥

थियोसोफिकल सुसायटी के प्रधान, जो डाक्टर मासि नाम से प्रसिद्ध हैं, उनके पत्रों के उत्तर उनकी भाषा को न जानने के कारण मेरी ओर से शीघ्र नहीं जाते हैं ॥१८॥

१० और इस समय इतना धन व्यय करने का मेरा सामर्थ्य भी नहीं है, जिससे अपने पास किसी दुभाषिये को रख सकूं ॥१९॥

मैंने कर्नल ओलकाट से कहा है कि यदि पत्र के इच्छुक हों तो मेरे पास वैसे (दुभाषिये) व्यक्ति को रखें ॥२०॥

यदि तुम्हें वहां वे सुसायटी के अध्यक्ष मिलें, तो मेरे पत्र के १५ इच्छुक उनसे यह सब वृत्तान्त कह दिया जाय ॥२१॥

तुम्हारी अभिलषित पुस्तकें मैंने उसी समय भेजने के लिये आज्ञा दे दी थी। काशी से आजायेंगी, आ गई या नहीं? अलं अतिविस्तरेण। यहां एक 'परोपकारिणी सभा' स्थापित हुई है, जिसमें आप भी सभासद हैं। उस की व्यवस्था नियमावली, जो २० राजमुद्रा से युक्त है, को आप के पास भेज रहा हूं। इस को सदा आत्मवत् रखें, कालान्तर में बड़ी काम देनेवाली होगी। वहां का वृत्तान्त पत्र द्वारा मुझे भेजें।

संवत् १९३७ आश्विन कृष्ण ६ शनिवार को विद्वानों को सुख देनेवाले कृष्णवर्मा के प्रति संस्कृत भाषा में यह पत्र भेजा गया।

२५ दयानन्द सरस्वती

—:०:—

[पूर्ण संख्या ४७१] **उर्दू पत्र**

ओं तत्सत्

बाबू दुर्गाप्रसाद जी आनन्द रहो।

पत्र आपका आया। समाचार मालूम हुआ। रामनाथ पहुंच ३० गया। सो विदित हुआ। हम यहां ८ दिन और रहेंगे। और ३

अक्तूबर को [मिरठ] के वार्षिक उत्सव पर जायेंगे।[1] बाद इसके शायद देहरादून को जायें। मुंशी इन्द्रमन का मुआमला साहब जज ने भी कुछ अच्छा कुछ बुरा किया है। अर्थात् ५०० पांच सौ रुपया जुर्माना में से ४०० रुपया वापिस किये और १०० रुपया रखे। और बाकी साहब मैजिस्ट्रेट की राय बहाल रखी। और उस से अधिक बुरी राय ऐसी दी कि उसने ३ तीन बात फोहश लिखी हैं। इसने यानी जज ने सब किताब को फोहश बतला दिया। इसमें भी कुछ पक्षपात हुआ। अब यह मुआमला शायद हाईकोर्ट को जायेगा। देखा जाय कि वहां से क्या होता है। और भी जज साहब ने लिखा है कि यह मुआमला सब हिन्दुओं का नहीं है खास मुन्शी इन्द्रमन का है। उसकी यह बड़ी भूल है। लेकिन हाकिम है जो चाहा सो लिखा दिया।

एक पण्डित मथुरा से यहां आया था।[2] चार दिन रहकर चला गया। उसको आने का खर्च दिया गया है। और असूज के अन्त में फिर आवेगा। फिर खर्च दिया जावेगा। अब आप ही तहरीर फरमाइये कि उसका माहवारी क्या मुकरिर किया जावे। आपके पास माहवारी असल या सूद कहां तक हो गया है। और **आर्यसमाज वाले अलहदा बैठने का खुशी नहीं करते। कहते हैं घूमे विना अच्छा नहीं है।** तुम्हारी इस में क्या राय है लेकिन **मैं जानता हूं कि बहुत घूमने में हरज होगा।** मगर इसमें कि **जहां जायें दो-दो एक-एक महीना ठहरें तो हरज कम होगा।** और बड़े पण्डित तो अब मिलते नहीं जिसको पचास या साठ रुपया दें। लेकिन अब बेहतर है कि छोटे-छोटे यानी एक-एक विद्या जानने वाला कम तनखवाह वाला रख कर काम निकाला जावे। यानी चार पांच रखे जायेंगे। और उस से भी वैसा ही काम लिया जावेगा। यानी हर एक के एक-एक काम स्पुर्द कर दिया जावेगा। हम आनन्द हैं। सब से नमस्ते कह देना।　　　दयानन्द सरस्वती

—:०:—

१. अनुमानतः २५ सितम्बर १८८० को मुजफ्फरनगर से लिखा गया। मूल पत्र हमारे संग्रह में सुरक्षित है।

२. इस सम्बन्ध में द्वितीय भाग के अन्त में द्वितीय परिशिष्ट की टिप्पणी देखें।

[पूर्ण संख्या ४७२] पत्र

लाला मूलराज जी आनन्दित रहो!

आज कल हम मुजफ्फरनगर में हैं। हम ने आप को वसीयत भेज दी थी। क्या यह आप को पहुंची या नहीं? हम ने अभी तक ५ उसके उत्तर में कुछ नहीं जाना, क्या कारण है? सब से हमारा नमस्ते कह दें। हम सब सर्वथा आनन्द में हैं और आप सब का आनन्द चाहते हैं।[1]

अक्तूबर १८८०[2] ह० दयानन्द सरस्वती

—:o:—

[पूर्ण संख्या ४७३] पारसल-सूचना

१० [पं० भीमसेन काशी]

वेदभाष्य के पत्रे।[3]

—:o:—

[पूर्ण संख्या ४७४] पारसल-सूचना

पं० भीमसेन, काशी

वेदभाष्य के २० पृष्ठ।[4]

—:o:—

१५ **[पूर्ण संख्या ४७५] पत्र**

पण्डित भीमसेन आन[न्दित रहो]

........ह रजस्टरी भेजी है पहुंची होगी। यजुर्वेद षष्ठाध्याय

---

१. वैदिक मैगजीन गुरुकुल गुजरांवाला से अनूदित। देखो पत्र पूर्ण संख्या ३८९ टिप्पणी १ पृष्ठ ४२४।

२० २. तारीख का निर्देश छूट गया है। इस पत्र में मुजफ्फरनगर में रहने का उल्लेख है। श्री स्वामी जी मुजफ्फरनगर १६ सितम्बर से २ अक्टूबर (१८८०) तक रहे थे। अत: यह पत्र १ या २ अक्टूबर (आश्विन कृष्ण १२ या १३ सं० १९३७) को लिखा होगा।

३. इस रजिस्टर्ड पारसल की सूचना पूर्ण संख्या ४७५ के पत्र में २५ मिलती है।

४. इन पत्रों को भेजने की सूचना भी पूर्ण संख्या ४७५ के पत्र में मिलती है।

के आरम्भ से २० पृष्ठ भेजते हैं सो ले[ना][1]। एक अङ्क में कितने पृष्ठ लगते हैं सो लिखना। और ऋग्वेद के पृष्ठ कै छपने को बाकी हैं सो भी लिखना। जो आगे के लिये पृष्ठ तैयार कर रक्खें। अलङ्कार विषय में जो चन्द्रालोक के पत्रे [जो] झेलम में पास थे, वे भेज देओ। और सर्वदर्शनसंग्रह पुस्तकों में हम छोड़ आये हैं। जो वह मिले वही अथवा किसी दूकान से लेकर और भेज देओ। और जैनमत [की] पुस्तक जिसमें [वेदादिशास्त्र]ों का खण्डन और······ ··· ···सम्पादन[2] कर भेज देओ। रजिस्टरी की बातों को यथायोग्य होशिआरी से करना[3]।

एक-एक अङ्क में कितने-कितने पृष्ठ लगते हैं सो भी [लिखो] जहां शारीर[क] भाष्य में जैनों का मत दिखलाया है उसका और जो-जो वहां श्लोक लिखे हों [वह] लिख भेजने, आगे सिवाय वेदभाष्य और व्याकरणादि पुस्तकों ······ ······ छपने पावे अन्य कुछ भी नहीं··· ··· ··· ······
··· ··· ··· ··· ··· ··· ··· ··· ······

हर महिने में कान्ताप्रसाद का मासिक · ··· ···
में लिखते आये हैं और अब लिखते हैं [कि का-]न्तप्रसाद हमारा नौकर है और अत्यन्त झूठ यह
मैं अपने पास से आप की ओर जमा कर दे
कान्ताप्रसाद से कहना कि तुम कुछ भी चिन्ता [वा उ-]च्चाटन मत करना। वैसे सब को धीरज [दे]ते रहना कि जिस से कोई भाग न उठे और [अ-]त्युत्साह से काम किया करें। जिस-जिस ने जितना [का-]

---

१. यजुर्वेद के २० पृष्ठों की रजिस्टरी इस पत्र के साथ नहीं पहुंची। वह पीछे से पहुंची। उसकी पहुंच पं० भीमसेन ने अपने पत्र आश्विन शुक्ला १२, शुक्र में स्वीकार की है। २. सम्पादन = प्राप्त।

३. यहां तक का पत्र पृष्ठ की एक ओर किसी लेखक का लिखा हुआ है। अगला सारा लेख पृष्ठ की दूसरी ओर श्री स्वामी जी ने स्वहस्त से लिखा है।

म शरकारी[1] और जितना-जितना बाहर का किया [है उस]
का निश्चय उस-उस से पूछ के कर लेना आवश्यक है। मु[शी]
जी से भी कह देना जो तुझ से पूछे तो हिसाब स ......
... — —.. रक्खो और १ महीना वा डेढ़ महिना तक
५ ... .हो वैसे ही किया करो इतने समय में हिसाब—
......और मकान का किराया बराबर मावारि भि[जवादो]
— ... ...नारायणसिंह वहां है वा कलक[त्ते चले गये
वा नहीं] .. — ..। कर शरकारी[1] क
हरि पण्डित[जी को ब्राह्मी] ओषधी भेजी थी[2],पहुंची वा नहीं[3]
१० [आश्विन शुक्ला १, संवत् १९३७][4]

दयानन्द सरस्वती

—:o:—

[पूर्ण संख्या ४७६] पत्र-सारांश

[लाला रामशरणदासजी, मेरठ]

वैदिक यन्त्रालय काशी के कार्य की सहायता के लिये किसी
१५ पुरुष को भेजो, जो तीनों भाषाओं में यथायोग्य काम करे और हमेशा छापाखाना में रहे[5]।

—:o:—

---

१. शरकारी सरकारी अर्थात् स्वामी जी का।

२. भेजी थी अर्थात् भिजवाई थी। द्र० — पूर्णसंख्या ४२०(पृ० ४५३)।

३. पं० भीमसेन अपने आश्विन शुक्ला ७ रविवार के पत्र में लिखता
२० है "आश्विन शु० १ का लिखा पत्र आप का आया।" उस पत्र में पं० भीमसेन ने इसी पत्रस्थ बातों का उत्तर दिया है। अत: उस पत्र के आधार पर श्रीस्वामी जी के इस पत्र की तिथि निश्चित करके लिखी गई है। इस पत्र की तिथि वाली पंक्तियां तथा और भी कई पंक्तियां या पंक्तियों के अंश फट चुके हैं। कुछ नष्ट शब्दों की पूर्ति कोष्ठों में की गई है। मूल पत्र
२५ के टुकड़े म० मामराज जी ने जुलाई सन् १९४५ में ला० रामशरणदास जी मेरठ वालों के यहां से खोजे। स्वामी महाराज के पत्र के टुकड़े और पं० भीससेन का पत्र अब हमारे संग्रह में सुरक्षित है।

४. ५ अक्तूबर, मङ्गलवार, १८८०।

५. इस पत्र की सूचना पूर्ण संख्या ४७९ के पत्र में है। यद्यपि उक्त

[पूर्ण संख्या ४७७]   पत्र-सारांश

[लाला कालीचरण रामचरणजी फर्रुखाबाद]

वैदिक यन्त्रालय काशी के कार्य की सहायता के लिये किसी पुरुष को भेजो, जो यथायोग्य कार्य करे।[1]

—:०:—

[पूर्ण संख्या ४७८]   पत्र-सारांश   ५

[सेठ निर्भयराम जी फर्रुखाबाद]

रुपयों के हिसाब के विषय से मिर्जापुर से चिट्ठी मंगवाओ।[2]

—:०:—

[पूर्ण संख्या ४७९]   पत्र

पण्डित भीमसेन जी आनन्दित रहो।

आश्विन सुदि ७ रविवार[3] के लिखे हुए पत्र तुम्हारे आये। १० तथा अक्टूबर १२ का लिखा पत्र मुन्शी [बखता]वर का आया। हाल विदित हुआ। पुस्तकों का हिसाब तुम से वा २।४ रुपैये लगकर भी किसी पुरुष की सहायता से जैसे हो सके वैसे करो। और पुस्तक तथा और पदार्थों को अच्छी प्रकार गण कर ताला कुंजी अपने हाथ कर ले[4]। और मुंशी बख्तावरसिंह लिखते हैं कि किसी १५ मनुष्य को शीघ्र छापेखाने में भेज दो, क्योंकि प्रेसमीन आदि कारीगर चालाक होते हैं। उनके सब काम के [को] वह अच्छे [प्रकार] समझ ले। सो मेरठ वा फर्रुखाबाद आदि को हम पत्र भेज

पत्र में 'मेरठ पत्र भेजने' मात्र का उल्लेख है, तथापि अगले पूर्णसंख्या ४८४ के पत्र में 'काशी आदमी भेजने' का भी उल्लेख है, हमने दोनों पत्रों को मिलाकर ला० रामशरणदास का नाम तथा उक्त विषय बनाया है।

१. इस पत्र की सूचना पूर्ण संख्या ४७९ के पत्र में है। यद्यपि वहां 'फर्रुखाबाद पत्र भेजने' का ही उल्लेख है, तथापि अगले पूर्ण संख्या ४९६ के लाला कालीचरण के नाम भेजे गये पत्र में उनके द्वारा भेजे गये व्यक्ति के सम्बन्ध में उल्लेख होने से यह पत्र ला० कालीचरण को ही भेजा गया था तथा उसमें उपर्युक्त आशय लिखा गया था।

२. इस पत्र की सूचना तथा विषय का संकेत पूर्ण संख्या ४७९ के पत्र में है।

३. १० अक्टूबर १८८०।   ४. 'लो' चाहिये।

चुके हैं। तुम्हारी सहायता के लिये कहीं से कोई मनुष्य आया जाता है। वह भी सब काम समझेगा। परन्तु तुम अच्छे होशियारी के साथ सब काम की जांच रखना। तुम किसी तरह हो [गा]फिल न होना। आर्य्यदर्पण इस महीने का छप जाने दो।
५ परन्तु आगे को कोई भी और काम बाहरी न रहे। जो रुपये ३००) जमा किये हैं उनका आठ आने ।।) सैकड़े से व्याज मिला करेगा। हम से और मिरजापुर के भवानीराम जी के बेटे से पहले इस मामले की बात हो गयी है। फिर भी उनके मुनीम से कहना कि मिरजापुर से चिट्ठी मंगा लेओ। और फर्रुखाबाद निर्भयराम जी
१० को भी लिख दिया है। वहां से भी उनको चिट्ठी आजायगी।

पुस्तक काव्यप्रकाश सटीक जो छपी है वह भेज देना और सर्वदर्शनसंग्रह तथा जैनप्रभाकर से वा और जगह से जो जैन वा बौद्ध मत वालों के ग्रन्थ जैसे हमने लिखे हैं भेज देना।[१]

[दयानन्द सरस्वती]

—:०:—

१५ **[पूर्ण संख्या ४८०] पत्र**

पण्डित भीमसेन आनन्दित र[हो]
फर्रुखाबाद से तोताराम और लाला स[न्नू]
लाल गये हैं। बाबू दुर्गाप्रसाद के मक[ान पर]
हमने रजस्टर [भेज दिये थे उन के अ-]
२० नुसार सन्नूलाल से [मिला कर ·· ··]
हिसाब करेंगे। मुन्शी जी से भी [कहना कि]
उन को ठीक ठीक सब हिसाब दो औ[र मु-]
न्शी जी को भी चिट्ठी लिखते हैं [कि हिसा-]
ब और सब वस्तु तथा छापे[खाने का]
२५ और भी जो कुछ व्यवहार हो [वह पांच सात]
रोज के भीतर उन से समझ लें [और तोता-]
राम और तुम तथा और हू को[ई मि-]
ले तो कुछ दे कर [और रख]

---

१. सम्भवत: १४ अक्टूबर १८८० देहरादून से। मूल पत्र हमारे संग्रह
३० में सुरक्षित है।

कर तुम लोग पुस्तकें [गिन कर···　···　]
स से ि··　···　···　···　···　······]
देना क्योंकि तुम्हें चु[न्नीलाल-अभय]
राम के पास का व्यवहा[र] और [कलक-]
त्ते से जो वस्तु आती हैं तथा और　　५
िनीआ का हिसाब बहुत मालूम है। तु[म्हारे]
पढ़ने में दश पांच रोज हानि हो [सो भी]
[सह]न करना और उक्त [दोनों]
[पुरुष]जब पहुंचे। तभी से डाकखाने को नोटिस
देओ कि डांक सब पण्डित भी-　　१०
मसेन के नाम से आवें चिट्ठी पत्री [जो]
नागरी में होंगी सो तुम वांचा करना [औ-]
र अंगरेजी वा फारसी की सन्नू [लाल वां-]
चेंगे। मुन्शी जी की जो हों [सो उन्हें दे]
दिया करना [हिसाब की जब तक पड़ताल]　　१५
समाप्त न हो ले तब तक सब चिट्ठियां]
तुम्हारे ही नाम से आया करें।
······　·· आर्य्यदर्पण के इस महीने की २४
[तारीख तक···　···　···　···　···　···]
···　···　··　·· आ···　···　···　···　　२०
···　·　·　· यह बहुत अनुचित है हमा-
रा काम बन्द होता है अभी तक कितना
···　· व्याकरण छप जाता
[···　हा]नी सो हुई।
[और पुस]तक जो शिरकारी वैदिक　　२५
यन्त्रालय में हैं उन का हिसा-
ब भेजते हैं।
···　·· तुम्हारे पास भी फुटक-
[र···　··] से हो-
[गा　···　·····]लेओ।　　३०

वस्तु सब अच्छी प्रकार सह्मार
लेना और तोल माप कर लेना।

पड़त]ाल-कुञ्जी अपने पास रखना।
[जब] कहीं जाओ तब सन्नू लाल।
[या] तोताराम को दे जाया करना।
अब यह काम बहुत परिश्रम
५ औ[र] होशिआरी का है सो अ-
च्छी प्रकार समझना।
[कि]मधिकलेखनेनेत्यलम्।
[मि··· ··· ·· [1] [दयानन्द सरस्वती][2]

—:o:—

[पूर्ण संख्या ४८१] पत्र-सूचना

१० मुंशी बख्तावरसिंह
वैदिक यन्त्रालय के सम्बन्ध में[3]

—:o:—

[पूर्ण संख्या ४८२] पत्र-सारांश

[लाला रामशरण दास जी]
मुंशी बखतावरसिंह के हिसाब के पत्र काशी भेज दो।[4]

—:o:—

१५ [पूर्ण संख्या ४८३] पत्र

बाबू दुर्गाप्रसाद जी आनन्दित रहो।[5]

---

१. इस पत्र की तिथि प्रसंग और अन्य पत्रों के अनुसार अक्टूबर १५ से २१ सन् १८८० तक की कोई तिथि है।

२. फटा हुआ पत्र म० मामराज जी ने जुलाई सन् १९४५ में ला० २० रामशरणदास जी मेरठ वालों के पत्रों में से खोजा। पत्र के नष्ट अंशों की पूर्ति कोष्ठों में हमने की है। मूल पत्र हमारे संग्रह में सुरक्षित है।

३. देखो पूर्ण संख्या ४८० पृ० ५३२ पं० २३।

४. इस पत्र सारांश को हमने पूर्णसंख्या ४८३ के अनुसार बनाया है।

५. मूल पत्र आर्यसमाज फर्रुखाबाद में था। इस की प्रतिलिपि म० २५ मामराज जी ने सन् १९२७ में की। यह पत्र 'फर्रुखाबाद का इतिहास' नामक ग्रन्थ में पृष्ठ २१४ पर छपा है। वहां पाठ की कुछ अशुद्धियां हैं। पत्र में तिथि नहीं है। यह पत्र पहले संस्क० २ में ३१ दिसम्बर १८८० के

तुम्हारे लिखने के अनुसार काशी को पत्र हमने भेज दिया है। और जो लिखने की योग्यता थी सो सब लिख दिया। वहां के हिसाब के जो पत्र थे सो जा चुके हैं। और मेरठ में लाला रामशरणदास के पास होंगे सो पहुंच जायेंगे। मेरठ को भी पत्र लिख दिया है। ५

३५) रुपैये माहवारी खर्च में ५) भीमसेन, ३० रुपैये में मुंशी जी का बन्दोबस्त है। अब हम कहते हैं कि खजांची कोई अच्छा मातवर रहे। थोड़ा भी पढ़ा हो तो चिन्ता नहीं है। और चिट्ठी लिखने मात्र को कुछ दामों से मुंशी रख दिया जाये, वह चिट्ठी लिख दिया करे। १०

अथवा तोताराम वहां का काम चलाने योग्य हो तो वह सब हिसाब और कारीगरों से काम लिया करे। भीमसेन खजांची रहे। भीमसेन निष्कपट है, हम अच्छी तरह जानते हैं। और चिट्ठी किसी से लिखवा दिया करें। नागरी पत्र में दोनों लिखते ही हैं। अथवा तुम अच्छा विचार कर जो कहो सो किया जाये। परन्तु १५ तोताराम को अच्छा चिताई देना चाहिये कि जब तक मुंशी न आवे कुछ और विशेष प्रबन्ध न होले, तब तक होशियारी के साथ काम सम्हाले। आगे आप लोग जैसा विचार कर बन्दोबस्त करेंगे सो होगा। इस पत्र का जवाब विचार पूर्वक हमारे पास जहां तक हो सके जल्दी भेजना चाहिये। २०

छापाखाना का प्रबन्ध अच्छा करना बहुत आवश्यक हो रहा है।

(दयानन्द सरस्वती)

—:o:—

[पूर्ण संख्या ४८४] पत्र

लाला रामशरण दास जी आनन्दित रहो। २५

मुन्शी इन्द्रमणि के मामले के खरच में तुम को अखतयार है।

द्वारकादास को लिखे गये पत्र से आगे छपा था। इस पत्र में भीमसेन के काशी में विद्यमान होने का संकेत है। पूर्ण संख्या ४९१ पृष्ठ ५४१ के अनुसार वह ७ नवम्बर से पूर्व बीमार होकर काशी से चला गया था। अतः हमने इस बार इसे ठीक स्थान पर रखा है। ३०

जो मुनासिब जानो सो देखो। और अपील जरूर हाईकोर्ट में जाय। और पांच जजों के बीच यह मामला हो। ऐसा बन्दोबस्त कर देना। इस के खरच के लिये जहां जहाँ चन्दा होता है। और तुम योग्यता जानो उस उस जगह को और भी चन्दा होने के लिये
५ लिखो। मेरठ समाज में पहले बहुत खर्च हो चुका है। इसलिये तुम वहां चन्दा न करना। और मुंशी जी को लिखना कि घबड़ावें नहीं। किन्तु अपने पक्ष पर श्रेष्ठ प्रमाण राजघर में दें। दूसरों के बहुत दोष दिखाने से भी अच्छी तरह कार्यसिद्धि नहीं होती है, यह विचार पूरा पूरा रखें।

१० फर्रुखाबाद से दो सभासद तोताराम और लाला सन्नूलाल काशी वैदिक यन्त्रालय में गये हैं। वे सब हिसाब का बन्दोबस्त यथावत् करेंगे। तुम अब किसी आदमी का खोज न करना। परन्तु वहां रहने के लिये किसी मुंशी का बन्दोबस्त अवश्य करना, जो हमेशा छापेखाने में रहे और योग्य हो। तीनों भाषाओं का यथा-
१५ योग्य काम करे। और मातबर हो।

मि० आ० १४।[1]

[दयानन्द सरस्वती]

—:०:—

[पूर्ण संख्या ४८५] पत्रांश

मन्त्री आर्यसमाज गुजरांवाला

पण्डित आत्माराम जी से एक पत्र उन सन्देहमात्र बातों का
२० जिनको वह सत्यार्थप्रकाश में जैनों के मतों के विरुद्ध ठहराते हैं, उनके हस्ताक्षर से हमारे पास भिजवा दो कि हम विचारपूर्वक उन का उत्तर लिखकर और अपने हस्ताक्षर करके उन के पास भेजेंगे।[2]

—:०:—

१. मूल पत्र हमारे संग्रह में सुरक्षित है। आश्विन वदी १४ रविवार
२५ ३ अक्टूबर १८८० को है और आश्विन सुदी १४ रविवार १७ अक्टूबर को है। [यह पत्र आश्विन वदी १४ रविवार ३ अक्टूबर का भी हो सकता है। यु० मी०।]

२. यह पत्रांश उस पत्र में है, जो मुंशी नारायण कृष्ण मन्त्री आर्य-समाज गुजरांवाला ने पं० आत्माराम जी को गुजरांवाला में ही कार्तिक

[पूर्ण संख्या ४८६] पत्र-सारांश

[पञ्चायत-सरावगियां, लुधियाना][1]

सत्यार्थप्रकाश के सम्बन्ध में जो प्रश्न हों, भेजे।

[पत्र रजिस्ट्री से भेजा गया था]

—:०:—

[पूर्ण संख्या ४८७] पत्र-सारांश ५

लाला रामशरणदास जी, मेरठ]

इस समय इस (=हिसाब की) बात के होने से कार्य में विघ्न होगा, कार्य होने दीजिये और ६००) रु० जो मांगते हैं, दे दीजिये।[2]

—:०:—

[पूर्ण संख्या ४८८] पत्र १०

ओ३म्

बाबू दुर्गाप्रसाद जी आनन्दित रहो।

नमस्ते पत्र आप का ता० २१ अक्टूबर स० ८०[3] को हमारे पास पहुंचा। समाचार सब मालूम किया। मास्टर शादीराम जी कि जो अंग्रेजी और फारसी में खूब हुश्यार और रईस आदमी है, १५

[वदी] ५ [सं० १९३७] को भेजा। यह पत्र नारायण कृष्ण जी के पास लगभग ४ कार्तिक को पहुंचा होगा। श्री स्वामी जी ने मूल पत्र १ या २ कार्तिक को लिखा होगा। मुंशी ना० कृ० जी ने अपने पत्र के आरम्भ में लिखा है "इस समाज में स्वामी दयानन्द सरस्वती जी का एक पत्र आया है।" कार्तिक वदी १, १९ अक्टूबर १८८० को पड़ती है। नारायण कृष्ण २० मन्त्री आ० स० गुजरांवाला का पत्र परिशिष्ट ३ में देखें।

१. इस आशय का रजिस्ट्री से पत्र भेजने का उल्लेख ऋ० द० के पूर्ण संख्या ४९० के पत्र के आरम्भ में है।

२. यह पत्र सारांश पौष शुक्ल १ बुधवार सं० १९३९ (१० जनवरी १८८३) को ऋ० द० ने 'उचित वक्ता' के हस्ताक्षर से सम्पादक २५ देशहितैषी (अजमेर) को मुन्शी इन्द्रमणि के सम्बन्ध में जो विस्तृत पत्र लिखा था (उसे आगे यथास्थान देखें), उसमें उद्धृत है।

३. कार्तिक कृष्ण ३, सं० १९३७।

उनको मेरठ से बनारस को भेजा गया है। मास्टर मज्कूर काम अंग्रेजी और फारसी का और तोताराम जी नागरी का और भीमसेनजी सोधने वगैरा का काम करेंगे और सन्नूलाल वापस आवेंगे। मगर माहवारी खर्च कि जैसे मुंशी और शोधने वाले के ३५ रुपये
५ हैं। जिनमें से ३०) बखतावरसिंह लेता था। और ५) भीमसेन को मिलते थे। सो अब दोनों काम यानी शोधना व मुंशी का कुल ३०) रुपये में होना चाहिये। दोनों आदमियों को वह रुपये जैसे मुनासिब मालूम होंगे, हस्ब लियाकत दिये जायेंगे। और मास्टर शादीराम बिल्फल वास्ते देखने और समझने काम के भेजे गये हैं।
१० अगर वहां का काम उनसे चला और समझ में आ गया तो रहेंगे। वर्ना खैर और कुछ तजवीज मुनासिब की जावेगी।

और पं० गोपालराव हरी को हम अलहदे पत्र लिखेंगे[1]। और पाठशाला की पुस्तकों की बाबत जो लिखा है। सो ऐसा करना चाहिये। कि जो-जो पुस्तक तैयार होती जाए, सो सो ज्मायत
१५ बन्दी में शामिल करते रहना यथायोग्य। और हम को फुर्सत कम रहती है। हम भी कक्षा बनावेंगे। और दूसरा निवेदन जो बाबू शिवप्रसाद ने छापा है उसका उत्तर भी तैयार हो गया है। सो पं० ज्वालादत्त के नाम से अब जारी किया जायगा[2]।

यजुर्वेद का ८ अध्याय पूरा होने को आया है। ज्वालादत्त के
२० आये पश्चात् ३ अध्याय का भाष्य बन चुका है।

तारीख २१ अक्टूबर सन् १८८०[3]। दयानन्द सरस्वती

—:०:—

[पूर्ण संख्या ४८६] पत्रांश

[लाला श्यामसुन्दरदास जी रईस, मुरादाबाद]

मुंशी इन्द्रमणि जी से हिसाब लेकर लाला रामशरणदास जी
२५ के पास भिजवा दीजिये।[4]

—:०:—

---

१. यह पत्र लिखा गया वा नहीं, इसकी हमें कोई सूचना नहीं मिली।

२. यह उत्तर अनुभ्रमोच्छेदन के नाम से पं० भीमसेन की ओर छपा है।

३. मूल पत्र आर्यसमाज फर्रुखाबाद में सुरक्षित है।

४. इस पत्र सारांश का निर्देश भी पूर्व पृष्ठ ५३७ टिप्पणी २ में निर्दिष्ट

[पूर्ण संख्या ४९०]　　पत्र

पूज्यवर आत्माराम, पञ्चायत सरावगियां लुधियाना और ठाकुरदास जी रईस गुजरांवाला ।

जैन मतानुयायी सज्जनों के प्रश्नों के उत्तर—

प्रश्न—जो सत्यार्थप्रकाश में श्लोक लिखे हैं जैनों के किस शास्त्र या ग्रन्थ के हैं ?　५

उत्तर—यह सब श्लोक बृहस्पतिमतानुयायी चारवाक जिस के मत का नामान्तर लोकायत भी है और यह जैन मतानुयायी है, उनके मतस्थ शास्त्र वा ग्रन्थों के श्लोक हैं ।

श्लोकाः—　१०

यावज्जीवं सुखं जीवेन्नास्ति मृत्योरगोचरः ।
भस्मीभूतस्य देहस्य पुनरागमनं कुतः ॥१॥
तथा तदन्तर्गतश्चाभाणकोऽप्याह—
अग्निहोत्रं त्रयो वेदास्त्रिदण्डं भस्मगुण्ठनम् ।
प्रज्ञापौरुषहीनानां जीविकेति बृहस्पतिः ॥२॥　१५
अग्निरुष्णो जलं शीतं, शीतस्पर्शस्तथानिलः ।
केनेदं चित्रितं तस्मात्स्वभावात्तद्व्यवस्थितिः ॥३॥
न स्वर्गो नापवर्गो वा, नैवात्मा पारलौकिकः ।
नैव वर्णाश्रमादीनां, क्रियाश्च फलदायकाः ॥४॥
अग्निहोत्रं त्रयो वेदास्त्रिदण्डं भस्मगुण्ठनम् ।　२०
बुद्धिपौरुषहीनानां, जीविका धातृनिर्मिता ॥५॥
पशुश्चेन्निहितः स्वर्गं ज्योतिष्टोमे गमिष्यति ।
स्वपिता यजमानेन, तत्र कस्मान्न हिंस्यते ॥६॥
मृतानामपि जन्तूनां, श्राद्धं चेत्तृप्तिकारणम् ।
गच्छतामिह जन्तूनां, व्यर्थं पाथेयकल्पनम् ॥७॥　२५
स्वर्गस्थिता यदा तृप्तिं, गच्छेयुस्तत्र दानतः ।
प्रासादस्योपरिस्थानामत्र कस्मान्न दीयते ॥८॥
यावज्जीवेत्सुखं जीवेदृणं कृत्वा घृतं पिबेत् ।
भस्मीभूतस्य देहस्य, पुनरागमनं कुतः ॥९॥

पौष शुक्ल १, सं० १९३९ के 'उचित वक्ता' के नाम से आगे छापे जा रहे पत्र में मिलता है ।　३०

यदि गच्छेत् परं लोकं, देहादेष विनिर्गतः।
कस्माद् भूयो न चायाति,बन्धुशोकसमाकुलः ॥१०॥
ततश्च जीवनोपायो, ब्राह्मणैर्विहितस्त्विह।
मृतानां व्रतकार्याणि,नत्वन्यद्विद्यते क्वचित् ॥११॥
५ **अश्वस्यात्र हि शिश्नं तु, पत्नीग्राह्यं प्रकीर्तितम्।**
भण्डैस्तत्परं चैव ग्राह्यजातं प्रकीर्तितम् ॥१२॥
त्रयो वेदस्य कर्तारो धूर्तभाण्डनिशाचराः।
जर्फरी तुर्फरीत्यादि पण्डितानां वचः स्मृतम् ॥१३॥
मांसानां खादनं तद्वन्निशाचरसमीरितम्।

१० एतदादि जो जो मैंने सत्यार्थप्रकाश में जैन मत विषयक लिखा है सो सो समस्त यथार्थ है। प्रथम पत्र के उत्तर में ला० ठाकरदास आदि को लिखवा दिया था कि जैन मत की कई एक शाखायें हैं। यदि आपने प्रत्येक शाखा के प्रतितन्त्र सिद्धान्त जाने होते तो आप को सत्यार्थप्रकाश के लेख में भ्रम कभी नहीं होता। आप लोगों के १५ प्रश्नों के उत्तर में विलम्ब इसलिये हुआ कि जो कोई सज्जन सभ्य विद्वान् जैसा कि श्रेष्ठ पुरुषों को लेख करना चाहिये वैसा करता तो उसी समय उत्तर भी लिखा दिया जाता, क्योंकि सज्जनता पूर्वक लेख के उत्तर में स्वामी जी विलम्ब कभी नहीं करते, देखिये अब पञ्चायत सरावगियां ने योग्य लेख किया तो स्वामी जी ने २० उत्तर भी शीघ्र लिखवा दिया और अब भी लिख दिया गया था कि जितने आप लोगों के सत्यार्थप्रकाशविषयक प्रश्न हों सब लिख के भेज दीजिये, जो सब के उत्तर एक संग लिख दिये जावें। जैसा स्वामी जी ने लिखवाया था कि आत्माराम जी को जैन मत वाले शिरोमणि पण्डित गिनते हैं। उनका और स्वामीजी का पत्र लेखा- २५ नुसार समागम होता तो सब बातें शीघ्र ही पूरी हो जातीं, परन्तु ऐसा न हुआ और यह भी शोक की बात है कि हम ने इस विषयक रजिस्टरी पत्र आप, पञ्चायत सरावगियां लुधियाना को भेजी थी और उस का उत्तर भी अब तक नहीं मिला, न प्रश्न भेजे किन्तु जो ठाकरदास ने एक बात लिख भेजी थी कि यह श्लोक जैन मत ३० के किस शास्त्र और किस ग्रन्थ के अनुसार हैं और जो बात करने के योग्य आत्माराम जी हैं उनका शास्त्रार्थ करने में निषेध लिख भेजा और ठाकरदास जी का यह हाल है कि प्रथम पत्र में संस्कृत

और भाषा के लिखने में अनेक दोष लिखे थे, अब आप लोग धर्म न्याय से विचार लीजिये कि क्या यह बात ऐसी होनी योग्य है कि जब जब पत्र ठाकरदास ने लिखी और जो तब तब स्वामी जी के पास और उसमें जो बात शिष्ट पुरुषों के लिखने योग्य न थी सब लिखी और जो योग्य हैं अर्थात आत्माराम जी उन को बात करने ५ और लिखने वा पत्र पर हस्ताक्षर करने से पृथक् रखते हैं और एक ठाकुरदास से स्वामी जी का सामना कराते हैं, क्या ऐसी बात करनी शिष्टों को योग्य है। अब अधिक बात करनी हो तो आप अपने मत के किसी योग्य विद्वान् को प्रवृत्त कीजिये कि जिससे हम और आप लोगों को सत्यासत्य का निर्णय होकर सर्वोत्तम ज्ञान हो १० सके। बुद्धिमानों के सामने अधिक लिखना आवश्यक नहीं, किन्तु अपनी सज्जनता, उदारता, अपक्षपातता, बुद्धिमत्ता और विद्वत्ता से थोड़े लिखने से बहुत जान लेते हैं।

स० १९३७ मिति कार्तिक शुदी ४ शनिवार।[1]

कृपाराम मन्त्री आर्यसमाज डेरादून॥[2] १५

—:०:—

[पूर्ण संख्या ४९१]　　　पत्र

पण्डित भीमसेन जी आनन्दित रहो!

नमस्ते तुम अपने शरीर का हाल लिखो कि अब कैसा है। और बड़े अफसोस की बात है; देखो कि आजकल तुम को वहां पर रहना जरूर्यात से था। क्योंकि काम की कसरत इस बक्त हुई थी। २० मगर खैर क्या किया जावे। तुम बेमारी की ज्यादती की वजह से

---

१. ६ नवम्बर १८८०।

२. यह पत्र भी स्वामीजी महाराज ने कृपाराम मन्त्री आ० स० देहरादून के हस्ताक्षर से भिजवाया था। मूल लेख ऋ० द० का प्रतीत होता है। क्योंकि श्लोकों के अनन्तर 'एतदादि जो जो मैंने सत्यार्थप्रकाश में ...' २५ लेख है, उस में 'मैंने' शब्द का प्रयोग है। इसी प्रकार आगे भी 'लिखवा दिया था' शब्दों का व्यवहार मिलता है (इस सम्बन्ध में द्वितीय भाग के अन्त में द्वितीय परिशिष्ट की टिप्पणी देखें)। यह पत्र 'दयानन्द सरस्वती मुखचपेटिका' के पृष्ठ २०-२२ तक छपा है। इस पत्र के उत्तर में ठाकरदास ने जो पत्र लिखा, उसे तृतीय भाग में देखें। ३०

चले आये होगे। अब तुम यह लिखो, कि जो जो चीज कपड़ा वा पुस्तक वा और कुछ वस्तु जो सर्कारी[3] हो, या रुपया जहां-जहां तुम्हारे हाथ से जमा हो या तुम्हारी समझ में और जिस किमी का जमा कराया हुआ हो फौरन अपने हाथ से वा अपने भाई के
५ हाथ से लिखवा कर ठीक-ठीक काशी जी पं० ज्वालादत्त जी के पास भेज दो। ताकि उनको सब हाल मालूम हो जावे। और ज्वालादत्त को हम ने हमेशा के लिये काशी जी में भेज दिया है। जो हमारे पास था। और अगर तुम्हारी तबिअत दरुस्त हो गई हो तो तुम लिखो कि हम आजकल आग्रे की तरफ आने वाले हैं। जो
१० तुम आना चाहो तो दूसरा आदमी तुम्हारी जगेह न रक्खा जावे। मगर पहिले तुम हम को लिख भेजो। और जहां-जहां जो चीज रक्खी हो या तुम जो तोताराम के स्पुर्द कर आये हो सब का व्योरा पूरा-पूरा लिखो। और शीघ्र ज्वालादत्त जी को लिख भेजो कि फलानी-फलानी चीज फलाने के स्पुर्द में हैं। ताकि ज्वालादत्त
१५ को मिल जावे। और हम ने तेरे लिखे मुताबिक यह काम हम ने किया है। क्योंकि तुम कहते थे, कि हमारा पढ़ना नहीं होता। इसलिये ज्वालादत्त को हम ने वहां भेज दिया है अब तुम अपने आने को कैफीयत मुफसिल लिखो कि आवोगे या नहीं। मगर जहां तक मुमकिन हो, सब चिजों की फहरिस्त कपड़ा रुपया पुश्तकां
२० इत्यादि वस्तु छापेखाने की, जो कुछ होवें महाभारत वगैरा की पुस्तक सब चीजें जहां-जहां और जिस-जिस के पास जमा वा तुम्हारा रक्खा हो सब की कैफीयत लिख दो। इन सब बातों का जवाब (कि मैं तुम्हारे पास आना चाहता हूं, या काशी जी जाऊंगा और कुल चीजों की फहरिस्त कि मैंने वहां पर उनके पास
२५ भेज दई।) हमारे पास भेजना जल्दी। देरी नहीं करनी[1]।

ता० ७ नवम्बर स० १८८० ई०[2] [दयानन्द सरस्वती]

मुकाम देहरादून

—:o:—

३. अर्थात् स्वामी जी का।

१. यह पत्र बहुत अशुद्ध लिखा हुआ है। किसी अनाड़ी लेखक का
३० लिखा प्रतीत होता है।

२. रविवार, कार्तिक सु० ५, संवत् १९३७। मूल पत्र हमारे संग्रह में

[पूर्ण संख्या ४९२] पत्र

पूज्यवर आत्माराम जी नमस्ते[1]।

पत्र आप का ता० ४ नवम्बर १८८० का लिखा[2] हुआ १० नवम्बर १८८० को सायं काल मेरे पास पहुंचा। देख कर आनन्द हुआ। अब आप के प्रश्नों का उत्तर क्रमवार लिखता हूं— ५

प्रश्न १— सत्यार्थप्रकाश समुल्लास १२ पृष्ठ ३९६ पंक्ति १६ में लिखा है कि जब प्रलय होती है तो पुद्गल पृथक्-पृथक् हो जाते हैं ऐसा नहीं है।

उत्तर— मैंने ठाकुरदास जी के उत्तर में एक पत्र आर्यसमाज गुजरांवाला के द्वारा भेजा था जो आप के पास पहुंचा होगा[3]। उस १० में यह बतलाया गया है कि जैन और बौद्ध दोनों एक ही हैं चाहे उन को बौद्ध कहो चाहे जैन कहो। कई स्थलों पर महावीर आदि तीर्थङ्करों को बुद्ध और बौद्ध आदि शब्दों से कहा गया है और कई स्थलों पर जिन, जैन, जिनवर, जिनेन्द्र आदि नाम से बोलते हैं

सुरक्षित है। १५

१. आर्य समाचार मेरठ, भाग २, पृ० ३१८-३२३, माघ, सं० १९३७। दयानन्ददिग्विजयार्क १ खण्ड, पृ० ४७-५०।

२. श्री आत्माराम जी का पत्र हमें नहीं मिला। पं० लेखरामकृत जीवनचरित हिन्दी संस्क० पृष्ठ ७१३ में १४ नवम्बर छपा है, वह अशुद्ध है। ठाकरदास ने जो 'दयानन्द सरस्वती मुखचपेटिका' छपवाई थी, उस के २० प्रथमभाग के पृष्ठ १९ पर यह लेख छपा है—'पीछे एक पत्र गुजरांवाले के आर्यसमाज ने भेजा और ठाकरदास जी ने आत्माराम जी के दस्कत करवायके भिजवा दिया, वह दूसरे भाग में आवेगा।' इस पुस्तक का दूसरा भाग हमें नहीं मिला तथा यह भी ज्ञात नहीं हुआ कि दूसरा भाग छपा भी था वा नहीं छपा था। २५

३. यह पूर्व पूर्ण संख्या ४९० पर छपा पत्र है। यह पत्र 'दयानन्द सरस्वती मुखचपेटिका' में पृष्ठ २० पर छापते हुए ठाकरदास ने आर्यसमाज गुजरांवाले के नारायण कृष्ण मन्त्री आर्यसमाज के द्वारा भेजे गये पत्र को छापा है। उस के अनुसार उक्त पूर्ण संख्या ४९० के पत्र की एक नकल श्री आत्माराम जी को भेजी गई थी (पत्र में प्रत्यक्ष नाम नहीं है)। उसी ३० पत्र की ओर ऋ० दया० का यह संकेत प्रतीत होता है।

(विवेकसार पृष्ठ ६५, पंक्ति १३); बुद्ध, बौद्ध यह एक सिद्ध अनेक सिद्ध भगवान् हैं (पृष्ठ ११३, पंक्ति ७) चार बुद्ध की कथा (पृ० १३७, पं० ८); प्रत्येक बुद्ध की कथा (पृ० १३८, पं० २१), स्वयं बुद्ध की कथा (पृ० १५२, पं० १४)।

५ चार बुद्ध समकाल मोक्ष को गए। इसी प्रकार और भी आप के ग्रन्थों में कथा स्पष्ट विद्यमान हैं, जिनको आप या कोई जैन श्रावक विरुद्ध न कह सकेंगे।

और ठाकरदास के पहले पत्र में (उन श्लोकों समेत जो मैंने इस से पहले पत्र[1] में लिख कर आप के पास भिजवाया है।) आप १० लोग कई श्लोक स्वीकार भी कर चुके हैं। उस पत्र की प्रतिलिपि मेरठ में है[2] और आप के पास भी होगी (कल्प भाष्य भूमिका जिसमें राजा शिवप्रसादजी ने अपने जैन मतस्थ पिता आदि पूर्वजों का वर्णन किया है उनकी साक्षी भी लिख भेजी और इतिहास-तिमिरनाशक खण्ड ३, पृ० ८, पं० २१ से लेकर पृ० ९ की पं० ३२ १५ तक) स्पष्ट लिखा है कि जैन और बौद्ध एक ही के नाम हैं[3]।

बहुत स्थलों पर महावीर आदि तीर्थङ्करों को बौद्ध कहते हैं। उन्हीं को आप लोग जैन और जिन आदि कहते हैं। अब रहे बौद्ध की शाखाओं के भेद जो चारवाक आभाणक आदि हैं जैसा कि आप के यहां श्वेताम्बर, दिगम्बर, ढूण्डिया आदि शाखाओं के भेद २० हैं कि उन में कोई शून्यवाद, कोई क्षणिक, कोई जगत् को नित्य

---

१. पूर्ण संख्या, ४९० पृष्ठ ५३९-५४१ पर।

२. यह पत्र ठाकरदास का था वा श्री आत्माराम जी का, यह हमें ज्ञात नहीं हुआ। मेरठ की प्रतिलिपि नष्ट हो चुकी है।

३. ठाकरदास ने 'इतिहासतिमिरनाशक' ग्रन्थ के लेखक राजा शिव-२५ प्रसाद सितारे हिन्द को एक पत्र लिखा था। उसका संकेत दयानन्द सरस्वती मुखचपेटिका के पृष्ठ ३४ तथा ३५ में मिलता है। राजा शिवप्रसाद ने उत्तर में जो पत्र भेजा उसकी प्रतिलिपि हम परिशिष्ट ३ मे दे रहे हैं। ऋ० द० ने सत्यार्थप्रकाश के १२ समुल्लास में भी राजा शिवप्रसाद के इस ग्रन्थ का उल्लेख किया है। अत: राजा शिवप्रसाद ने जैनियों के दबाव ३० में आकर जो पत्र लिखा, उस को सुरक्षित रखना आवश्यक है। "इतिहास-तिमिरनाशक" की भूमिका का पाठ तीसरे परिशिष्ट में देखें।

मानने वाला, कोई अनित्य मानने वाला, कोई स्वभाव से जगत् की उत्पत्ति और प्रलय मानते हैं, कोई आत्मा को पांच भूतों से बनी हुई मानते हैं और उसका नाश हो जाना भी मानते हैं, (देखो रत्नावली ग्रन्थ पृ० ३२, पं० १३ से लेके पृ० ४३, पं० १० तक) कि उस स्थल पर सब जगत् की उत्पत्ति, स्थिति और प्रलय भी लिखा ५ है वा नहीं।

इसी प्रकार चारवाक आदि भी कई शाखा वाले जिसको आप पुद्गल कहते हैं उसको अणु आदि नाम से लिखते और उन के परस्पर मिलने से जगत् की उत्पत्ति और पृथक् होने से प्रलय होना ही मानते हैं और वे जैन और बौद्ध से पृथक् नहीं हैं। किन्तु जैसे पौरा- १० णिक मत में रामानुजी आदि वैष्णवों की शाखा और पाशुपतादि शैवों की और वाममार्गियों की दस महाविद्या की शाखायें और ईसाइयों में रोमन कैथलिक आदि और मुसलमानों में शीआ सुन्नी आदि कुछ के कुछ भेद हैं और तब भी वेद, बाइबल और कुरान के मत में वे एक ही समझे जाते हैं वैसे ही आपके अर्थात् जैन और १५ बौद्ध मत की शाखाओं के भेद चाहे पृथक् पृथक् लिखे जा सकते हैं, परन्तु जैन और बौद्ध मत में एक ही हैं।

आप ने बौद्ध जैन मत के प्रत्येक सम्प्रदाय के तन्त्र सिद्धान्त अर्थात् भेद कथन करने वाले ग्रन्थ देखे होते तो सत्यार्थप्रकाश में जो लेख उत्पत्ति और प्रलय के सम्बन्ध में हैं उस पर शङ्का कभी न २० करते।

प्रश्न २—सत्यार्थप्रकाश पृ० ३६७ पं० २४ (प्रश्न) मनुष्य आदिकों को ज्ञान है, ज्ञान से वे अपराध करते हैं। इस से उन को पीड़ा देना कुछ अपराध नहीं। यह बात जैन मत में नहीं।

उत्तर ग्रन्थ विवेकसार में पृ० २२८ पं० १० से लेकर पं० २५ १५ तक देख लीजिये क्या लिखा है अर्थात् गुणाभियोग और स्वजन आदि समुदाय की आज्ञा जैसे विष्णु कुमार ने कुछ की आज्ञा से बौद्ध रूप रचना करके नमुची नाम पुरोहित को कि वह जिन का विरोधी था, लात मार के सातवें नरक में भेजा और ऐसी ही और बातें। ३०

३५

प्रश्न ३– सत्यार्थप्रकाश पृ० ३६६ पं० ३—और उसके ऊपर (अर्थात् पद्यशिला पर) बैठ चराचर का देखना।

उत्तर– पुस्तक रत्नसार भाग पृ० २३ पं० १३ से लेकर पृ० २४ पंक्ति तक देख लीजिये कि महावीर और गौतम के परस्पर
५ वार्तालाप में क्या लिखा है।

प्रश्न ४– सत्यार्थप्रकाश पृ० ४०१ पं० २३—और उनके मत में न हो वह श्रेष्ठ भी होय तो भी उसकी सेवा नहीं करते जल तक भी नहीं देते।

उत्तर पुस्तक विवेकसार पृ० २२१ पं० ३ से लेकर पं० ८ तक
१० लिखा है, देख लीजिये कि अन्य मत की प्रशंसा वा उन का गुण-कीर्तन नमस्कार, सत्कार, वा उन से थोड़ा बोलना वा अधिक बोलना वा उन को बैठने के लिये आसन आदि देना, उन को खाने पीने की वस्तु, सुगन्ध पुष्प देना वा अन्य मत की मूर्ति के लिये चन्दन पुष्प आदि देना, यह छः बातें नहीं करनी चाहिये।

१५ प्रश्न ५– सत्यार्थप्रकाश पृ० ४०१ पं० २७—किन्तु साधु जब आता है तब जैनी लोग उसकी डाढ़ी, मूछ और सिर के बाल सब नोच लेते हैं।

उत्तर ग्रन्थ कल्पभाष्य पृ० १०८ पं० ४ से लेकर ६ तक देख लीजिये, और प्रत्येक ग्रन्थ में दीक्षा के समय पांच मुट्ठी बाल
२० नोचना लिखा है। यह काम अपने हाथ, चाहे चेला वा गुरु के हाथ से होता है और अधिकतर ढूण्डियों में है।

प्रश्न ६– सत्यार्थप्रकाश पृ० ४०२ पं० २० से लेकर जो श्लोक जैनों के बनाए लिखे हैं, वे जैन मत के नहीं।

उत्तर मैं इस का उत्तर इस से पहले पत्र में लिख चुका हूं
२५ (मिती कार्तिक शुदी ४ शनिवार[1]) आपके पास पहुंचा होगा, देख लीजिये।

प्रश्न ७ सत्यार्थप्रकाश पृ० ४०३ पं० ११—अर्थ और काम दोनों[2] पदार्थ मानते हैं।

उत्तर यह मत जैन मत सम्बन्धी सम्प्रदाय चारवाक नामक
३० का है जिससे ऐसे ऐसे श्लोक कि जब तक जिये सुख से जिये, कोई

---

१. पूर्णसंख्या ४६०, पृष्ठ ५३६-५४१ पर छपे पत्र में।

२. 'दो ही' पाठ चाहिये।

प्राणी मृत्यु से अगोचर नहीं है, भस्मीभूत [का] देह में पुनः आना नहीं आदि अपने मत के बना लिये हैं; इसी प्रकार से नीति और कामशास्त्र के अनुसार अर्थ और काम दो ही पदार्थ पुरुषार्थ और बुद्धि से माने गये हैं।

यह संक्षेप से आप के प्रश्नों का उत्तर दिया गया है, क्योंकि ५ पत्रों द्वारा पूरा स्पष्टीकरण नहीं हो सकता। जब कभी मेरा और आपका समागम होवे तब आप को मैं ग्रन्थों के प्रमाणों, युक्तियों के साथ स्पष्ट ठीक ठीक निश्चय करा सकता हूं। आपको और भी जो कुछ सन्देह सत्यार्थप्रकाश के बारहवें समुल्लास में होवे। (मेरठ के आर्यसमाज द्वारा) लिख कर भेज दीजिये, सब का ठीक उत्तर १० दे दिया जायगा। अब मैं यहां थोड़े दिन तक रहूंगा। यदि आप अम्बाला तक आ सकें तो ता० १७ नवम्बर १८८० तक प्रातः ८ बजे से पहले पहले डेरादून में, उसके पश्चात् आगरा मुझ को तार में सूचना देनी चाहिये कि मैं आप से शास्त्रार्थ अर्थात् परस्पर वर्तालाप के लिये यहां पहुंच सकूं। बुद्धिमान् मनुष्य के लिये इतना १५ पर्याप्त है। अधिक लिखने की आवश्यकता नहीं।

सं० १९३७ मिति कार्तिक शुदी १३ रविवार।[1]

हस्ताक्षर — दयानन्द सरस्वती डेरादून

—:o:—

[पूर्ण संख्या ४९३] पत्र

॥ ओ३म् ॥[2] २०

तारीख १५ नवम्बर सं० ८० ई०।
मिति कार्तिक सुदी १४ सं० १९३७ चन्द्रवार
देहरादून से।

पण्डित भीमसेन जी आनन्दित रहो।

नमस्ते। तुम हमारे दोनों बेग कि जिस में हमारे वस्त्र साल २५ जोड़ी आदि और बरतन रसोई आदि कहां पर और किस को सुपुर्द करके आये हो। और जो रुपया कोठी से तुम लाये हो उस का ब्योरा, कि किस किस कदर और कितना कितना और किस को सौंपा है। और मुंशी जी की निस्बत छापेखाने में गड़बड़ करने

---

१. १४ नवम्बर, १८८०। २. मूल पत्र हमारे संग्रह में सुरक्षित है। ३०

के मामले में जान्ता हो या नौकरों चाकरों से सुन रक्खा हो, और या जो को[ई] चीज फौंडरी वगैरे लकड़ी आदि की बनाते या बनवाते देखा हो, सो सब का एक पत्र पर ठीक ठीक ब्योरा लिख कर काशी जी को भेज दो। और पत्र मुझ को शीघ्र लिख दो। क्योंकि ५ वह सब बातों में यु' कहता है' कि मुझ को कोई चीज मालूम नहीं है। सब बातों का हाल भीमसेन जी जानते हैं। क्योंकि उस का कोई हिसाब किताब तो दुरुस्त है ही नहीं। और सब बातों में गड़बड़ाहट कर रक्खा है। ठीक ठीक जवाब दे नहीं सकता है। उलटा लड़ने को दौड़ता है। परन्तु मास्टर शादीराम जी और पण्डित १० ज्वालादत्त जी योग्य आदमी हैं। वे उसके कहने पर बुरा नहीं मानते। अपना काम उनसे निकालते हैं। वह अपनी साथ तुमको भी लपेटना चाहता है। और अपनी बदनामी तुम्हारे ऊपर रक्खा चाहता है। क्योंकि उसकी कई एक बातें वहां पर पकड़ी गई हैं। और मास्टर जी ने मालूम कर लई हैं। उन को उस ने यही जवाब १५ दिया है कि मुझ को कुछ मालूम नहीं। भीमसेन जाने। देखो जैसे कि उमने अंग्रेजी फर्मा चढ़ा रक्खा था। और तुमने कहा था कि तुम विना आज्ञा स्वामी जी [के] क्यों चढ़ाया। तब उसने जवाब दिया था, कि अब जो मैं यहां से दूसरी जगेह ले जाऊं, तो मेरा चार पांच सौ का नुकसान होता है। और यह भी कहता है कि २० कोठी से रुपये लाने या ले जाने की निस्बत मुझ को कुछ भी मालूम नहीं है। और यह भी हमको यकीन है कि तुम्हारे पास ऐसी लिखत मिति वार तो नहीं होगी, जैसा कि कब और कितना कितना रुपया और किस के देने को आया। और किस को दिया गया है मिति वार है या नहीं। अगर ऐसी किसम की हो तो बहुत २५ अच्छी बात है। क्योंकि ऐसी लिखत के मौजूद होने से बहुत मतलब हासिल होगा। अगर तुम्हारे पास न हो, तो कोठी पर मितिवार सब रुपये की अम्मद रफत मालूम हो सकती हैं। वहां से हो सकता है। और तुम सब वस्तुओं की तंदाद लिख कर जो जो तुम्हारी दानिस्त में हो, बहुत शीघ्र लिख कर एक पत्र काशी को ३० और दूसरा हम को लिख भेजो, ताकि वह तुम्हारा नाम से बरी न होने पावे। और सब चीजों का पता ठीक ठीक बतला देवे। जो-

१. मुंशी बखतावरसिंह ।

जो हिसाब रुपये जमा कर आने या सोंपने या मुंशी जी के काम
में आने की निस्बत तुम को मालूम हो, वह भी, और जो हिसाब
चलती बेर बाबत मौजूदगी रुपयों की कि जो मुंशी जी के पास
जमा थे, और जो कोठी पर थे, हम तुम को लिखवा आये थे, वह
भी सारी बातों का हिसाब लिख पढ़ कर जल्दी हमारे पास भेज ५
दो। और काशी वालों को भी इत्तला दे दो, कि जिस्से वह लोग
सब हाल जानकर मुंशी जी की निस्बत अदालत में दावा कर दें।
और मुंशी जी भी तुम्हारी निस्बत कुछ झूठ न कह सकें। जिन-
जिन बातों का सबूत फोंडरी आदि लकड़ी की किसी वस्तु का
मुंशी जी की निस्बत तुम जानते हो या कोई लिखत पढ़त तुम्हारे १०
पास इस किसम की मौजूद हो, कि जिससे स्पुर्द करना किसी वस्तु
आदि या रुपये पैसे का मुंशी जी की निस्बत ठीक सबूत हो जावे,
फौरन लिख कर हमारे और काशी वालों के पास भेज दो। और
अब वहां का काम बसबब मास्टर शादीराम व पण्डित ज्वालादत्त
के उम्मीद है कि अच्छी तरह से होगा और मुंशी जी की सारी १५
कलई सब बातों की खुल जावेगी। देखो बड़े शोक की बात है कि
वक्त के ऊपर तुम को बेमार हो जाना, और तुम्हारा वहाँ से जल्दी
चले आना। और मास्टर साहब, ज्वालादत्त का तुम्हारे सामने न
पहुंचना, यह तमाम कारण बखतावरसिंह के करने का छापेखाने में
हुआ। वर्नः तुम्हारे हुये, यानि तुम्हारे साम्हने ऐसा कभी न होता २०
क्योंकि देखो, मुंशी जी ने अकलमन्दी से और चालाकी से आधी
वस्तु छापेखाने की अपनी बना लई हैं। और रुपये का कुछ हिसाब
नहीं देता और जो कोठी का हिसाब समझने के लिये मास्टर वा
पण्डित कहते हैं, कि चलो, तो बिलकुल जाना कबूल नहीं करता।
और गाली गुफ्तार बकने लगता है। यह कुल कारण माल के २५
हजम करने का है। हम मिति मार्गशिर बदि २ बृहस्पतवार सम्वत्
१९३७ को आगरे में पहुंचेंगे।[1] इसलिये तुमको उचित है कि सारी
बातों का जवाब लिख कर ठीक ठीक हम को आगरा में खबर दो,
और एक पत्र लिखकर सारी बातों का हाल से जो जो तुम जानते
हो और जहां तक मालूम हो सके, जल्द लिख भेजो। और तुम भी ३०
लिखो कि अगर हमारे पास आना समझो और तुम्हारा शरीर भी

१. १८ नवम्बर, १८८०।

दुरुस्त हो गया हो तो हमको लिखो। अगर तुम आवो, तो हम दूसरा पण्डित न रक्खें। मुफस्सिल लिखो। शीघ्र जवाब से इत्तला दो।[1] द० [दयानन्द सरस्वती]

—:o:—

[पूर्ण संख्या ४६४] पत्र-सूचना

५ [मास्टर शादीराम जी काशी][2]

मुन्शी बखतावरसिंह के हिसाब की गड़बड़ी जांचने के विषय में।

—:o:—

[पूर्ण संख्या ४६५] विज्ञापन[3]

सब सज्जनों को विदित हो कि अब १५ नवम्बर सन् १८८०

१० से मुंशी बखतावरसिंह को जो वैदिक यन्त्रालय के मैनेजर थे, वे यहां के काम से अपने दोष से अलग कर दिये गये हैं।

उन्होंने सर्वथा अपने लाभ और वैदिक प्रेस के हानिकारक अनुचित काम जो उनके करने योग्य न थे किये। हम उन कामों

---

१. यह लेखक बहुत अशुद्ध लिखता है।

१५ २. इस पत्र का संकेत पं० ज्वालादत्त ने अपने मार्गशीर्ष वदी ८ संवत् १९३७ (२५ नवम्बर १८८०) के पत्र में किया है। देखो म० मुंशीराम सम्पादित पत्रव्यवहार पृष्ठ ४०८। ज्वालादत्त का पत्र तीसरे भाग में देखें। इसी पत्र में ज्वालादत्त ने अपनी जामिनी के सम्बन्ध में भी लिखा है।

सम्भवत: यह बात ऋ०द० ने मास्टर शादीराम के इसी पत्र से लिखी

२० होगी। तुलना करो—पूर्ण संख्या ४९६ के पत्र के 'मास्टर शादीराम की जामिनी लाला रामशरण जी ने दी है' पाठ के साथ।

३. यह विज्ञापन ऋग्वेदभाष्य के २०,२१ सम्मिलित अंक (मार्गशीर्ष सं० १९३७) के अंक के टाइटल पेज ३-४ पर छपा है। यह नवम्बर १८८० के उत्तरार्ध में लिखा गया होगा, क्योंकि इस के मुख पृष्ठ पर ऋ० द० के आगरा में निवास करने का उल्लेख है। विज्ञापन के अन्त में किसी के

२५ हस्ताक्षर नहीं हैं। वैदिक यन्त्रालय के साथ साक्षात् संबन्ध होने से इसे हम यहां छाप रहे हैं। सम्भव है इस प्रकार के विज्ञापन को छापने का आदेश मास्टर शादीराम को पूर्णसंख्या ४९४ के पत्र में दिया हो।

को जान चुके हैं और कुछ दिनों वा महिनों में सब को विदित हो जायेंगे। प्रिय पाठक जनों कुछ चिन्ता नहीं, अच्छे और बुरे कामों का फल कर्ता को ही होता है ॥

अब कोई ग्राहक वेदभाष्य आदि पुस्तकों के लिये मुंशी बखतावरसिंह के समीप पत्र वा धन न भेजे और जो भेजेगा तो हम जिम्मेदार नहीं हैं ॥　　५

ता० १६ नवम्बर सन् १८८० से वैदिक यन्त्रालय के मैनेजर सादीराम जी हैं। इन के नाम से पत्र और इन्हीं के समीप धन (लाला सादीराम मैनेजर वैदिक यन्त्रालय लक्ष्मीकुण्ड बनारस) इस पते से भेजा करें यह सब के समीप उत्तर, रसीद और पुस्तक उचित समय पर भेजा करेंगे ॥　　१०

जिस ग्राहक के हिसाब में ४ बरस के २५॥) रुपयों में से जितने जितने बाकी दाम हों, लाला सादीराम जी के पास उक्त पते से शीघ्र भेज दे। और जब से वैदिक यन्त्रालय नियत हुआ है उस समय से लेकर १५ नवम्बर सन् १८८० तक के हिसाब में से मुंशी बखतावरसिंह के पास दाम भेजे हों उन की रसीद वेदभाष्य के टाइटल पेज पर न छपी हो और ग्राहकों के पास मुंशी बखतावर सिंह की हस्ताक्षरी वा मनियाडर की हो तो उसकी सूचना यन्त्रालय के मैनेजर को कर दे कि जिस से सब का हिसाब ठीक-ठीक विदित हो। क्योंकि मुं० ब० ने हिसाब जैसा चाहिये वैसा सफाई से नहीं लिखा। इसमें ग्राहकों की कुछ हानि नहीं, किन्तु छापेखाने के मालिक की हुई है, क्योंकि ग्राहक लोग तो छापेखाने के मालिक के विज्ञापन पर दाम भेजते हैं मैनेजर के विश्वास पर नहीं, इसलिये ग्राहकों को रुपये भेजने में शङ्का देर और अविश्वास न करना चाहिये।　　१५　　२०　　२५

जो आर्यदर्पण समाचार पत्र छपता है, वह न स्वामी दयानन्द सरस्वती जी की ओर से और न किसी आर्य सभासद की ओर से है, किन्तु केवल मुंशी बखतावरसिंह की ओर से है।

—:o:—

[पूर्ण संख्या ४९६]　　　　**पत्र कार्ड**

लाला कालीचरण रामचरण जी आनन्दित रहो।[1]　　३०

---

१. यह पत्र पं० लेखरामकृत उर्दू जीवनचरित पृष्ठ ५१९, ५२०

और मैं देहरादून से यहां आया। चोबे तोताराम की गफलत से पुस्तकों का अस्त व्यस्त हो जाना है। और अब मैं यहां से दो चार दिनों में आगरे को जाऊंगा। और वहां मैं १ महीना रहूंगा। और मास्टर शादीराम जी की जामनी लाला रामशरणदास जी ने कर दीनी है। और मुंशी बखतावरसिंह जी की चिट्ठियों से मालूम हुआ कि उनके ऊपर कानून से पेश आना चाहिये। सो ठाकुर मुकंदसिंह भूपालसिंह जी मुखतार हैं[1]। सब काम कर लेंगे।

सं० १९३७ मि० मा० व० ४ रविवार।[2]

(दयानन्द सरस्वती)

--:०:--

[पूर्ण संख्या ४९७] पत्र-सूचना

[सेवकलाल कृष्णदास बम्बई][3]

--:०:--

[पूर्ण संख्या ४९८] पत्रांश

[मुंशी बखतावरसिंह शाहजहांपुर]

तुम आगरे में आकर स्वामी को हिसाब समझा दो।[4]

(हिन्दी सं० पृष्ठ ५५९) पर छपा है। वहां कुछ शब्द बदले हुए हैं, हमने इसे मूल पत्र से छापा है। मूल पत्र आर्यसमाज फर्रुखाबाद में सुरक्षित है। फर्रुखाबाद का इतिहास पृष्ठ १८५ पर भी मुद्रित है।

१. देखो मुख्तियारनामा, पूर्ण संख्या ३२२, पृष्ठ ३५६।

२. २१ नवम्बर १८८०, अलीगढ़।

३. सेवकलाल कृष्णदास ने गोपालराव हरि देशमुख के ३ दिसम्बर १८८० के पत्र के साथ जो पत्र भेजा था, उसमें ऋ० द० के दो पत्र मिलने का उल्लेख है (द्र०—मुंशीराम सम्पादित पत्र व्यवहार पृष्ठ २५०)। सेवकलाल कृष्णदास और गोपालराव हरि देशमुख के पत्र तीसरे भाग में देखें।

४. इस पत्र का संकेत सेठ कालीचरण रामचरण के नाम लिखे विना तिथि अनुमानतः [९ फरवरी १८८१, माघ शुक्ल ११, सं० १९३७] के पत्र में है। यह पत्र यथास्थान आगे छपा है, वहां देखें। यह रजिस्टरी चिट्ठी अपने आम मुख्तार ठाकुर मुकुन्दसिंह भूपालसिंह से श्री स्वामी जी ने स्वयं भिजवाई थी।

२२ नवम्बर १८८० अलीगढ़ (कोयल) से (रजिस्ट्री द्वारा)

—:o:—

[पूर्ण संख्या ४९९] तार-सारांश

[मुंशी इन्द्रमणि मुरादाबाद]

आकर मिलो[1]।

—:o:—

[पूर्ण संख्या ५००] पत्र ५

ओ३म्

एच्० पी० मेडम ब्लेवस्तिकी जी आनन्दित रहो।

आपकी चिट्ठी ता० ८ अक्टूबर सन् १८८० ई० की लिखी हुई बाबू छेदीलाल जी रईस मेरठ के द्वारा मेरे पास देहरादून में पहुंची[2]। इसका क्रमानुसार उत्तर सत्य निश्चय से देता हूं। आपने १० जो अमरीका से पत्र और उनके उत्तर में यहां से मैंने वहां पत्र भेजे थे, पुनः आप का और मेरा समागम सहारनपुर, मेरठ, काशी और फिर मेरठ में हुआ था। उन सब के अनुसार अपने निश्चय के अनुकूल सब दिन मैं वर्त्तमान करता रहा हूं। परन्तु वैसा वर्त्तमान आप का ठीक-ठीक नहीं देखता हूं, क्योंकि प्रथम आप लोगों ने जैसा १५ लिखा था, जैसा समागम में प्रथम विदित किया था, वैसा अब कहां है? आप अपने आत्मा से निश्चय कर लीजिये। प्रथम संस्कृत पढ़ने, शिक्षा लेने, सुसायटी को आर्यसमाज की शाखा करार देने आदि के लिये लिखा था, और वे चिट्ठियां छप के सर्वत्र प्रसिद्ध भी हैं, और जो मैंने पत्र वहां भेजे थे उनकी नकल भी मेरे २० पास उपस्थित हैं। देखिये कि जब अभी मेरठ में उस दिन रात को आर्यसमाज और सुसायटी के नियम विषयक बातें हुईं थीं, तब मैंने

---

१. इस तार का संकेत सम्पादक देशहितैषी के नाम पौष शुक्ल १, सं० १९३९ (१० जनवरी १८८३) को लिखे पत्र में है। यह पत्र आगे यथास्थान छपा है, वहां देखें। तार सम्भवतः, नवम्बर २१ या २२ सन् २५ १८८० को भेजा होगा।

२. मैडम का यह पत्र श्रीमद्दयानन्दप्रकाश तथा परोपकारी पत्र के कार्तिक सुदी १, सं० १९४६ के अङ्क में पृष्ठ २५-२९ तक छपा हुआ है। इस चिट्ठी को तीसरे भाग में देखें।

आप और अन्य सब के सामने क्या यह बात नहीं कही थी कि आर्यसमाज के नियमों से सुसायटी के नियमों में कुछ भी विशेष नहीं ? यही बात मैंने बम्बई की चिट्ठी में भी आपके पास लिख भेजी थी। उन्हींके अनुसार मैं अब भी बराबर मानता और कहता ५ हूं कि आर्यसमाजस्थों को सुसायटी में धर्मादि विषयों के लिये मिलना उचित नहीं। और यही बात आप वा एच् एस् करनेल ओलकाट साहिब ने अपने पुस्तक, उपदेश और संवाद में क्या नहीं लिखी और नहीं कही है कि **जो सत्यधर्म सत्यविद्या और ठीक ठीक सुधार की और परम योग आदि की बातें सदा से जैसी** १० **आर्य्यावर्त्तीय मनुष्यों और वेदादि शास्त्रों में थीं और हैं वैसी कहीं न थीं और न हैं**। अब विचारिये कि थियोसोफीष्टों को एतद्देश-वासी मत से मिलना चाहिये किंवा आर्य्यावर्तियों को थियोसो-फीष्ट होना चाहिये। और देखिये कि आज तक मैंने वा किसी आर्यसमाजस्थ ने किसी थियोसोफीष्ट को आर्यसमाज में मिलने का उपदेश वा प्रयत्न कभी किया है ? और आप अपनी बात को १५ अपने आत्मा में विचार लीजिये कि आप ने क्या करी और क्या करते जाते हैं। कितने ही आर्यसमाजस्थों को थियोसोफीष्ट होने के लिये कितना प्रयत्न और कितना उपदेश किया। और कइयों से १०) दस दस रु० फीस सभासद होने के लिए हैं। और मेरठ २० में बात होने के पश्चात् बाबू छेदीलाल जी से अम्बाले में थियोसो-फीष्ट होने के लिये क्या न कहा था ? और शिमले से चिट्ठी न भेजी थी ? इसीलिये अवश्य मैंने मेरठ आर्यसमाज में सबके सामने पूर्वोक्त हेतुओं से यह कहा था कि जो कभी आप वा एच् एस् कर-नेल ओलकाट साहिब वा और कोई थियोसोफीष्ट अथवा अन्य कोई जन किसी सभा में सभासद होने के लिये कहे तब उस को २५ यही उत्तर देना कि जो आर्यसमाज के नियमों से थियोसोफिकल सुसायटी आदि के नियम और उद्देश एक ही हैं तो हम और वे भी सब एक हैं और जो विरुद्ध हैं तो हमको सुसायटी वा अन्य किसी सभा में मिलना कुछ आवश्यक नहीं। और तब तक आर्यसमाज के नियम अखण्डित हैं कि जब तक उनमें कोई बात खण्डनीय विदित ३० न हो। अब कहिए निर्भ्रान्त पोप रूम की बात मेरी हैं वा आपकी ? और जो मैंने, अन्य देशियों के समाज में मित्रता और

स्नेह वैसा कभी नहीं हो सकता जैसा कि स्वदेशियों के समाज में, यह बात इस प्रसङ्ग पर कही थी, कहता हूं और कहूंगा कि **असिद्ध बहिरङ्गमन्तरङ्गे** अर्थात् जिनका एक देश, एक भाषा, एकत्र जन्म, सहवास और विवाहादि व्यवहार सम्बन्ध आपस में होते हैं उनसे उनको जितना लाभ और उनकी उनमें जितनी प्रीति होती है उतना अन्य देशवासियों से अन्य देशवासियों को लाभ और उन्नति नहीं हो सकती। देखिये भाषा ही के केवल भेद होने से मुझ को और योरपियन को कितनी कठिनता परस्पर उपकार होने में होती है। और जिन के पूर्वोक्त सब भिन्न हैं उन में पूर्वोक्त बातें कम होती ही हैं। और जिनके वे सब एक हैं उनमें वे बातें सहज से शीघ्र अधिक होती हैं इस में क्या सन्देह है। और दूसरे दिन भी थोड़ा सा अनुवाद अवश्य कर दिया था क्योंकि जिस को रोग होता है उसी को निदान और पथ्य आदि करना आवश्यक है, निरोगी के लिये नहीं।

जब हम लोग थियोसोफिष्टों को भी आर्यसमाज के अवयवभूत शाखास्थ भ्रातृगणवत् मानते आये थे, और जहां तक बनेगा मानेंगे, ऐसा जानकर उनको आर्यसमाज में मिलने और उन से १०) रुपए फीस लेने आदि के लिये प्रयत्न न किया था और अब [भी] नहीं करते, उनसे यथाशक्ति प्रेम और उनका उपकार ही करते हैं, हां जो कोई आर्यसमाज वा सुसायटी से भिन्न हैं, वे उपदेश से समझ कर वेदमत में अपनी प्रसन्नता से स्वयं मिलते हैं तो हम लोगों के लिये वह निषेध करना भी औषध नहीं क्योंकि हम में वह रोग ही नहीं है। अब आप लिखती हो कि सिवाय आपके और बम्बई, लाहौर और अन्यत्रस्थ भी आर्यसमाजिक लोग हमारी सुसायटी में हैं, परन्तु हमने उन से सरीख होने को कभी नहीं कहा, यह बात सच नहीं। क्योंकि आपने बम्बई में मुन्शी समर्थदान आदि, प्रयाग में पण्डित सुन्दरलाल आदि आर्य सभासदों को सुसायटी में मिलने को अवश्य कहा था। इस का साक्षी मैं ही हूं क्योंकि मेरे विना सुने मुझ को खबर भी नहीं थी और **जैसे मेरा नाम सुसायटी के सभासदों में लिखती हो वैसा अन्यत्र भी आपने किया होगा,** इसमें कुछ सन्देह नहीं।

और जो बात आप आर्यसमाज के नियमों से विरुद्ध प्रत्येक धर्म

के लोगों की प्रतिष्ठा और सब धर्म वाले हमारी सुसायटी में मिलें और उनके धर्म पर हम हाथ नहीं डालते हैं किन्तु एक भाईपन होने के लिये शामिल करते हैं और कोई बात उसकी थियोसोफीष्ट होने में निषेधक नहीं हो सकती। अब मैं इसमें आपसे पूछता हूं कि आप का धर्म क्या है ? जो आप कहें कि हमारा धर्म सब से विरुद्ध है तो दूसरे धर्मवाला आपकी सुसायटी में कभी नहीं मिल सकता। जैसा रात दिन का विरोध है वैसे विरुद्ध धर्म होते हैं। और जो कहें कि हमारा धर्म किसी से विरुद्ध नहीं तो उसमें मिलना किस लिये हो, क्योंकि वे एक ही हैं। जैसे मुसलमान अपने मजहब से भिन्न को काफिर और उनसे मेल कभी न करना चाहिये कहते हैं, इत्यादि धर्म वाले लोग आप की सुसायटी में कैसे मिल सकते हैं। जो वे भ्रातृभाव से अन्य मत वालों से आत्मा और मन कर के प्रीति करते हैं तो उनका धर्म जाता है और अपना [धर्म] रक्खें तो आप का नहीं रहता। एक चित्त से एक समय में दो बातें हो ही नहीं सकतीं, इत्यादि बातों का उत्तर लिखियेंगी। और विशेष इस विषय में जब सन्मुख बैठ के परस्पर हम आप बातें करेंगे तभी निश्चय होगा। क्या यह बात सर्वथा असम्भव नहीं है कि स्वामी जी भी अढ़ाई वर्ष से हमारे सब से उत्तम सभासदों में एक हैं। भला आप कहिये तो कि **मैंने आपकी सुसायटी का सभासद् होने के लिये कब दर्खास्त भेजी थी ? और मैंने कब आप से कहा था कि मैं आप की सुसायटी का सभासद् होना चाहता हूं ?** क्या मैंने जो बम्बई में चिट्ठी भेजी थी[1], उस बात को भूल गई कि जो '**मैं सिवाय वेदोक्त सनातन आर्य्यावर्तीय धर्म के अन्य सुसायटी समाज वा सभा के नियमों को स्वीकार न करता था, न करता हूं, न करूंगा। क्योंकि यह बात मेरे आत्मा की दृढ़तर है; शरीर, प्राण भी जायें तो भी इस धर्म के विरुद्ध कभी नहीं हो सकता।**' हां यह अपराध आप लोगों ही का है कि विना कहे सुने सुनाये अपनी इच्छा से आप ने मेरा नाम कहीं अपने सभासदों में लिख लिया होगा, सो क्योंकर सच हो सकता है। और इस बात को क्या भूल गये कि मेरठ से मूलजी ठाकरसी के सामने जहां आप भी सामने बैठी थीं, एच् एस् करनेल ओलकाट साहब को मैंने कही

१. द्र०—पूर्णसंख्या ३८०, पृष्ठ ४१८।

थी कि **आप ने बम्बई की कौशल[1] में मेरा नाम सभासदों में क्यों लिखा, ऐसा काम आप लोग कभी मत कीजियेगा[2]** कि जिस में मेरी सम्मति न हो और आप अपने मन से कर बैठोगे तो मैं उस बात का स्वीकार कभी न करूंगा। उस पर करनेल ओलकाट साहब ने कहा था कि हम ऐसा काम कभी न करेंगे। और बम्बई में मैंने चिट्ठी भी दी थी कि **मेरा नाम आप ने अपनी इच्छा से जहां कहीं सभासदों में लिखा हो काट दीजिये**।[3] इतने हुए पर फिर भी आपने इस चिट्ठी में जो यह बात लिखी इस को कोई भी सच कर सकता है? क्या आश्चर्य की बात है? आये तो विद्यार्थी और शिष्य बनने को, गुरु और आचार्य्य बनना चाहते हो। ऐसी पूर्वापर विरुद्ध बातें करना किसी को योग्य नहीं।

जो आप ईश्वर को कर्त्ता धर्त्ता नहीं मानती हो। सो बात इसी संवत् १९३७ के भाद्र महीने की है। इस के आगे[4] आप ने मुझ से कभी न कहा और न किसी से मैंने सुना था कि आप ईश्वर को वैसा नहीं मानती हो, सिवाय काशी के समागम में प्रमोददास मित्र और डाक्टर लाजरस साहब के। क्या आप ने काशी में डाक्टर टीबो साहिब आदि के सामने कोठी के बहार चौंतरे पर श्याम को बैठे थे जब प्रमोददास मित्र ने मुझ से कहा था कि मेडम तो अनीश्वरवादिनी, नास्तिकिनी है तब मैंने उन को उत्तर दिया था कि मेडम साहिब की बात को तुम समझे न होगे। दामोदर से मैंने कहा था मेडम साहिब ईश्वर को मानती हैं वा नहीं? तब दामोदर ने आप से पूछकर मुझ से कहा था कि मानती हैं। क्या यह बात भी झूंठ है? और मेरी बात अद्‌भुत भेद करने वाली आप की ओर नहीं, किन्तु आप की बातें मेरी ओर भेद करनेवाली हैं। मैं आप को भगिनी वा मित्र के समान जानता था, जब तक कोई ऐसा विशेष कारण न होगा तब तक जानूंगा भी, क्योंकि मैं और जितने सज्जन आर्य्य हैं वे जैसा सदा से मानते आये हैं और मानेंगे भी कि सामान्यतः आर्य्यावर्त्तीय इङ्गलेण्ड अमरीका आदि

१. कौशल अर्थात् कौंसिल।

२. द्र०—पूर्णसंख्या ३१५, पृष्ठ ३४८, पं० ८-१२।

३. द्र०—पूर्णसंख्या ३८०, पृष्ठ ४१८, पं० १०-११।

४. आगे अर्थात् पहले।

भूमण्डलस्थ देशनिवासी मनुष्यों को सब दिन से भ्रातृ और मित्र-वत् मानना है परन्तु सत्यधर्म व्यवहारों के साथ, असत्य और अधर्म के साथ नहीं। यहां के अंगरेज लोग आर्य्यों को चाहे वैसा मानें। क्या वे राज्याधिकारी हों वा व्यावहारिक हों, मुझ को भी
५ अपनी समझ के अनुकूल यथेष्ट मानें। मैं तो सब मनुष्यों के साथ सुहृद्भाव से सदा वर्तता आया और वर्तना चाहता हूं। और जो उन का यह कहना कि हम इस का कोई दृढ़ हेतु नहीं देखते कि स्वामी जी के अनन्तर और आर्य्यसामाजिकों से भी वैसा ही वर्त्ते। यह उनका कहना तब तक है कि जब तक वे आर्य्यावर्त्तस्थ आर्यों
१० का पूर्व इतिहास, आचार, उन्नति, विद्या, पुरुषार्थ, न्यायवृत्ति आदि उत्तम गुणों और वेदादि शास्त्रों के सत्य-सत्य अर्थों को न जानेंगे, परन्तु कालान्तर में उन का यह भ्रम अवश्य छूट जायगा। तथापि मैं परमात्मा को धन्यवाद देता हूं कि जो हमने आपस के विरोध, फूट, अनाचार करने, और जैन और मुसलमान आदि की
१५ पीड़ा और भ्रम जाल से कुछ-कुछ अलग स्वास्थ्य और स्वतन्त्रता प्राप्त की है कि जिस से मैं वा अन्य सज्जन लोग अपना-अपना सत्य अभिप्राय युक्त पुस्तक रचने, उपदेश करने और धर्म में स्वाधीनपन से आनन्द में प्रवृत्त हो रहे हैं क्या जो श्रीयुत भारतेश्वरी महाराणी, पारलीमेण्ट सभा और आर्यावर्त देशस्थ राज्याधिकारी
२० धार्मिक विद्वान् और सुशील न होते तो क्या मेरा वा अन्य का मुख प्रफुल्लित होकर व्याख्यान, वेदमत प्रचारक पुस्तकों की व्याख्या करनी भी दुर्लभ न होती? और आज तक शरीर भी बचना कठिन न था, इसीलिये पूर्वोक्त महात्माओं को हम लोग धन्यवाद देते हैं।

२५ आप लोगों को अवश्य स्मरण होगा कि जो काशी की चिट्ठी[1] के उत्तर में आप लोगों ने लिखा[2] था कि **जो आप भी वेदों को छोड़ दें, तो भी हम लोग कभी न छोड़ेंगे**। यह आप लोगों की बात प्रशंसनीय और धन्यवादार्ह है। ऐसे ही सब योरूपियन इस उत्तम बात में मिलें तो क्या ही कहना है और जो कभी न मिलें, हम

---

३० १. यह संकेत किस पत्र की ओर है, यह हमें ज्ञात नहीं।
२. यह पत्र प्राप्त नहीं हुआ।

आर्यों और आर्यसमाजों की कदापि हानि नहीं हो सकती, क्योंकि यह बात नवीन नहीं है। हम लोग जब से सृष्टि और वेद का प्रकाश हुआ है उसी समय से आज पर्यन्त ऐसी बात को मानते आते हैं। क्या हुआ कि अब थोड़े समय से अपनी अज्ञानता और उत्तम उपदेशकों के विना बहुत से आर्य्य वेदोक्त मत से कुछ-कुछ ५ विरुद्ध और बहुत से अनुकूल आचरण भी करते हैं। अब जिसको प्रसन्नता हो अपनी और सब की उन्नति के लिये इस आर्यसमाज में मिलें वा न मिलें। उन के न मिलने से हमारी कुछ हानि नहीं, किन्तु उन्हीं की हानि है। हम लोगों का तो यह अभीष्ट, यही कामना और यही उत्साह है कि सब की उन्नति में अपनी उन्नति १० समझनी और ऐसे तो कोई भी कह सकता है कि, फलाने के सी, मेरी सी सम्मति वा बड़ा विचार फलाने का नहीं है। फलाना ईश्वर को कर्त्ता धर्त्ता मानता है इसलिये उससे हम प्रेम क्यों करें। परन्तु यह बात आपका सुसाइटी का मुख्य उद्देश्य जो सब को बन्धु-वत् जानना आप कहते हैं, उस को काट देती है। सोच कर देखिये १५ कि हानि के कारण किनकी ओर हैं। हमारा तो संसार का उप-कार करना और हानि किसी की न करना मुख्य तात्पर्य है, सो है ही। यहां हम भी कह सकते हैं कि जो थियोसोफीष्ट आर्यसमाजों से विरोध करेंगे तो हमारी कुछ भी हानि नहीं, किन्तु वे आप ही अपने भ्रातृभाव मुख्य उद्देश्य को नष्ट कर अपनी हानि कर लेंगे। २० हम तो हमारा स्वभाव जो कि धर्मात्माओं से सुहृद्भाव और अधर्मियों को धर्मात्मा करने प्रयत्न और बन्धुवत् स्नेह करना है, करते हैं और करते रहेंगे, जितना कि हम कर सकते हैं (अब अपना पूर्वापर व्यवहार को समझकर जैसा हित हो वैसा कीजिये) एच् एस् करनेल ओलकाट साहेब आदि को मेरा नमस्ते कह २५ दीजियेगा।

सं० १९३७ मि० मा० ब० ६ मङ्गलवार।[1]

दयानन्द सरस्वती

—:o:—

---

१. २३ नवम्बर १८८०।

[पूर्ण संख्या ५०१] **पत्र-सारांश**[1]

लाला श्यामसुन्दरदास, मुरादाबाद

यह चन्दा किसी की जात खास के वास्ते नहीं, वा सिर्फ रिफा आम के लिये है।

५ २४ नवम्बर १८८०[2]

—:०:—

[पूर्ण संख्या ५०२] **पत्रसारांश**

मुंशी इन्द्रमणि जी……[3]

यह चन्दा का रुपया वैदिक फण्ड (निधि) कहलावेगा। और आर्यों के लिये इस फण्ड में जमा होता रहेगा।

१० २६ नवम्बर १८८० दयानन्द सरस्वती

आगरा

—:०:—

[पूर्ण संख्या ५०३] **पत्र**

लाला मूलराज जी आनन्दित रहो!

आप का २६ नवम्बर का पत्र मिला। समाचार ज्ञात हुआ।
१५ आजकल हम आगरा में हैं, और व्याख्यान देते हैं और लगभग एक मास यहां रहने का विचार है।

यह अब स्पष्ट है कि **बहुत से पढ़े लिखे लोगों को भी नौकरी नहीं मिलती, या वे जीवन निर्वाह का प्रबन्ध नहीं कर सकते। ऐसी अवस्था देख कर मैं एक कला कौशल के स्कूल की आवश्य-**
२० **कता विचारता हूं।**[4] प्रत्येक पुरुष को अपनी आय का १०० वां भाग प्रस्तावित संस्था को देना चाहिये। उस धन से चाहे तो **विद्यार्थी कला कौशल सीखने जर्मनी भेजे जावें या वहां से अध्या-**

---

१. रिसाला मुंशी इन्द्रमणि का इल्तमास स्वा० दयानन्द का सन्यास (उर्दू), जगन्नाथदास कृत पृ० १८।

२५ २. मार्गशीर्ष कृष्ण ७, बुध, सं० १९३७।

३. रिसाला मुंशी इन्द्रमणि का इल्तमास स्वा० दयानन्द सरस्वती का संन्यास (उर्दू), रचयिता जगन्नाथदास।

४. यह पत्र आज से १०० वर्ष पूर्व लिखा गया था। इस लेख से ऋषि की दूरदर्शिता का स्पष्ट परिचय प्राप्त होता है।

पक यहां बुलाये जायं। जो कोई इस फण्ड के व्यय पर इन धन्दों को सीखे, उसे प्रतिज्ञा करनी होगी कि स्वशिक्षा समाप्त करने पर सभा या फण्ड की वह १२ वर्ष तक सेवा करेगा। यह प्रश्न यहां विचारा जा रहा है और जब कोई परिणाम निकलेगा तो हम आप को सूचना देंगे। मैंने एक गुजरांवाला के आत्माराम जैनी के भ्रमों के उत्तर लिखवाये हैं[1] और वहां के आर्य्यसमाज द्वारा उसे भिजवाये हैं। मुझे इनके विषय में सब कुछ लिखना। कर्नल आल्काट और मेडम ब्लेवस्तकी के पत्र का उत्तर मैंने भेज दिया है[2]। मैं आशा करता हूं कि आप ने उसे देख लिया है। वह नास्तिकता की ओर झुके हुए दिखाई देते हैं। कदाचित् वह पहले भी ऐसे ही झुके हुये थे, परन्तु दूसरे के मन की कोई क्या कह सकता है?

मुझे अपने भाइयों और उन के अब के पता का हाल लिखो। अब समय है कि आप ला० श्रीराम को कला कौशल सीखने इङ्गलैण्ड भेज दें। जर्मनी से पत्र आ रहे हैं[3]।

हम सब आनन्द में हैं। सब से हमारा नमस्ते कह दें।[4]

३० नवम्बर १८८०[5]　　　　　　ह० दयानन्द सरस्वती
बाग गिरधारी लाल
आगरा।

—:०—

१. पूर्ण संख्या ४९२, पृष्ठ ५४३।

२. सम्भवत: पूर्ण संख्या ५००, पृष्ठ ५५३।

३. जर्मनी के जी० वाईज के ९ पत्र ऋषि दयानन्द के पास आये थे (इन्हें यथास्थान तीसरे भाग में देखें)। प्रथम पत्र २८ जून १८८० का, दूसरा २९ जून १८८० का, तीसरा ३० जून १८८० का, चौथा बिना तारीख का, पांचवां ७ अगस्त १८८० का, छठा ३० सितम्बर १८८० का, सातवां छठे से सम्बद्ध, आठवां अक्टूबर [१० अक्टूबर] १८८० का, नवमा १७ अक्टूबर १८८०। सम्भवत: ३० नवम्बर १८८० तक ७-८ पत्र पहुंच चुके थे।

४. गुजरांवाला को भेजा गया। वैदिक मेगजीन सन् १९०८ से अनूदित।

५. मार्गशीर्ष कृष्ण १३, मङ्गल, सं० १९३७।

[पूर्ण संख्या ५०४] पत्र कार्ड[1]

कृपाराम जी आनन्दित रहो !

पत्र तुम्हारा आया हाल विदित हुआ, मुन्शी बखतावरसिंह के हिसाब की जांच पड़ताल हो रही है। जालसाजी निकलती है। ५ पश्चात् जैसा होगा लिखा जावेगा और अब तुम पुस्तकें निःसन्देह मंगा लो, और पानों की तशतरी वहीं रक्खी रहने दो। जब कभी हम आवेंगे देख लिया जावेगा, यहां व्याख्यान होता है और हम सब प्रकार से आनन्द में हैं। सब सभासदों को नमस्ते।

आगरा	हस्ताक्षर
१० १ दि० १८८०[2]	दयानन्द सरस्वती

—:०:—

[पूर्ण संख्या ५०५] रसीद[3]

हमने आज मूल्य वेदभाष्य ८) बाबत चौथे वर्ष के किशनलाल से वसूल पाए।

आगरा	हस्ताक्षर
१५ १ दि० १८८०[4]	दयानन्द सरस्वती

—:०:—

[पूर्ण संख्या ५०६] पत्र-सारांश

[मुंशी इन्द्रमणि, मुरादाबाद]

यदि यह बात सत्य है, तो इस में आपकी बड़ी निन्दा होगी

---

१. मूल कार्ड पं० कृपाराम के भाई के पोते पं० मित्रानन्द जी फोटोग्राफर ओल्ड कैन्टोनमैण्ट रोड देहरादून के पास है। ता० २७।१२।३२ को म० मामराज जी ने इसकी प्रतिलिपि की। २०

२. मार्गशीर्ष कृष्ण १४, बुधवार, सं० १९३७।

३. मूल रसीद मथुरावासी,श्री किशनलाल नागर के पुत्र श्री काशीलाल (प्रसिद्ध मोहनलाल) नागर के पास है।

२५ ४. मार्गशीर्ष कृष्ण १४, बुध, सं० १९३७।

आप शीघ्र आइये[1]।

आगरा

—:o:—

[पूर्ण संख्या ५०७]	पत्र-सूचना

मु० इन्द्रमणि[2]

६ दिसम्बर[3]	दयानन्द सरस्वती	५

—:o:—

[पूर्ण संख्या ५०८]	पत्र

मन्त्री आर्य्यसमाज आनन्दित रहो।[4]

प्रकट हो कि पत्र तुम्हारा आया हाल मालूम हुआ। आज गुजरांवाला से अभी लाला मूलराज एम० ए० की चिट्ठी आई है। सो वहां कुछ प्रसिद्ध नहीं। और मित्रविलास तो विरोधी है। वह १० सदैव इसी प्रकार लिखता रहता है। जो वह कुछ प्रतिष्ठित होता तो लाहौर आर्य्यसमाज ही उस का सहायक होता। सो तुम शङ्का कुछ न करो। और········ ··· तो अत्यन्त ही दुष्ट है। जो तुम को कुछ उन के विषय में लिखना हो तो आर्य्यसमाज गुजरांवाले से दर्य्याफ्त करलो और हम सब प्रकार से आनन्द में हैं। सभासदों १५ को नमस्ते।

आगरा	हस्ताक्षर

८ दि० १८८०[5]	(दयानन्द सरस्वती)

---

१. देखो पौष शु० १ बुधवार सं० १९३९ सम्पादक देशहितैषी के नाम का पत्र। वह आगे यथास्थान छापा गया है। सम्भव है यह पिछले [पूर्ण- २० संख्या ५०२] पत्रसूचना वाले पत्र का ही अवयव हो। अथवा उस से दो एक दिन पीछे लिखे गये पत्र का संकेत हो।

२. मुंशी इन्द्रमणि का इल्तमास स्वा० दयानन्द का संन्यास पृ० १८।

३. सन् १८८०। मार्गशीर्ष शु० ५ सोम, सं० १९३७। सम्भव है यह पत्रसूचना उसी पत्र की हो, जिस का सारांश पूर्ण संख्या ५०६ पर छपा है। २५

४. मन्त्री आर्यसमाज फर्रुखाबाद को लिखा गया। मूल पत्र आर्यसमाज फर्रुखाबाद में सुरक्षित है। फर्रुखाबाद का इतिहास ग्रन्थ के पृ० २८६ पर भी छपा है।

५. मार्गशीर्ष शुक्ल ७, बुधवार, सं० १९३७।

[पूर्ण संख्या ५०९] पत्र

लाला मूलराज जी एम० ए० आनन्दित रहो[1] !

आपका ६ दिसम्बर का पत्र मिला समाचार विदित हुआ। हम आप को मेडम ब्लवत्सकी का पत्र अपने उत्तर सहित भेजते ५ हैं[2]। उस में जो कुछ परिवर्तन करें, उसकी हमें पहले सूचना दे दें।

आप उसे मुम्बई आर्य्यसमाज द्वारा पत्र भेज दें। कृपया देखने के पश्चात् मेडम ब्लवत्स्की का पत्र हमें लौटा दें। आज कल आत्माराम कहां है ? जैनों के उत्तर में जो पत्र हमने लिखे थे[3] वे अवश्य समाज के कार्यालय में होंगे। अच्छा होगा यदि आप उन १० सब को किसी समाचार पत्र में प्रकाशित करवा दें। अब हम उस समाज द्वारा जैनों को कुछ प्रश्न करना चाहते हैं[4]। आप अच्छा हो जो उस समाज से पूछ लें और हमें सूचना दें। क्या आप मुझे बता सकते हैं कि कला कौशल सिखाने का स्कूल कहां है ?

यहां नगर के बाहर गोकुलपुर में एक छोटा सा समाज स्थापन १५ किया गया है। सब को नमस्ते।

८ दिसम्बर १८८०[5] [ह० दयानन्द सरस्वती]
आगरा।

—:०:—

[पूर्ण संख्या ५१०] पत्र-सारांश

[पं० ज्वालादत्त काशी]

२० व्याकरण (=नामिक) में नवीन रचना की आवश्यकता नहीं है।[6]

—:०:—

१. गुजरांवाला को लिखा गया। वैदिक मैगजीन गुरुकुल गुजरांवाला अक्टूबर-दिसम्बर १९०८, अंक १०,११,१२ पृ० २५३ से अनूदित।

२. सम्भवत: पूर्ण संख्या ५००, पृष्ठ ५५३ का।

२५ ३. पूर्ण संख्या ४९० (पृ० ५३९), ४९२(पृ० ५४३)।

४. ये इच्छित प्रश्न सम्भवत: अगले पूर्णसंख्या ५३६ के पत्रवाले होंगे।

५. मार्गशीर्ष शुक्ल ७, बुधवार, सं० १९३७।

६. इस अभिप्राय के कई पत्र लिखने का संकेत पूर्ण संख्या ५१७ (पृष्ठ ५६८) के पत्र में उपलब्ध होता है। यहां एक पत्र सूचना के रूप में दे रहे ३० हैं।

[पूर्ण संख्या ५११]　　उर्दू पत्र

लाला शादीराम जी आनन्दित रहो ![1]

वाजे हो कि खत तुम्हारा आया, हाल मालूम हुआ। जो नोटिस सन्धिविषय पर छपेगा सो आप के पास रवाना करते हैं सो छाप देना[2]। और पण्डित काशी नारायण साहिब मुनसिफ से आगरे चौथे वर्ष तक के २०।।) हमारे पास आये सो टाइटल पेज वेद-भाष्य पर छाप देना। और एक खत लाला श्यामसुन्दर कोठी वाले मुरादाबाद का आया। वे लिखते हैं कि उन के पास अब की मरतबा एक ही वेदभाष्य पहुंचा। और वे पांच अङ्क हर एक वेद के लिया करते हैं और कीमत पेशगी दाखिल कर चुके हैं। सो इस का क्या सबब है। और ५० वेदभाष्य राजा जयकिशनदास तो लेते ही हैं मगर उन का लड़का कुंवर ज्वालाप्रसाद भी बरपता मुरादाबाद एक-एक अङ्क दोनों वेदभाष्य का लेते हैं सो लिखो कि उनके नाम भी रवाना कर दिया या नहीं। और भूमिका वगैरा जुमला कुतब फरोक्त दस-दस यजुर्वेदभाष्य के रवाना कर दो और हिसाब व किताब भी जांच पड़ताल कर के जल्दी जहां तक मुमकिन हो बखतावरसिंह जी की जाल साजी जाहिर करो और कीमत सन्धिविषय की ।।) रखो और हमेशा खत को तोल कर टिकट लगाया करो, स्वामी दयानन्द सरस्वती।

दयानन्द सरस्वती
आगरा १० दिसम्बर १८८०[3]

—:o:—

[पूर्ण संख्या ५१२]　　विज्ञापन[4]

श्रीयुत स्वामी दयानन्द सरस्वतीजी ने अब परमात्मा की कृपा से संस्कृत विद्या के पुनरुद्धार और मनुष्यों के उपकार के लिये

---

१. मूल पत्र परोपकारिणी सभा अजमेर के पास सुरक्षित है।

२. इस नोटिस (विज्ञापन) को हम आगे पूर्ण संख्या ५१२ पर छाप रहे हैं।

३. मार्गशीर्ष शुक्ल ९, शुक्र, सं० १९३७।

४. यह विज्ञापन ऋ० द० के पूर्ण संख्या ५११ (पं० ६-७) के अनुसार सन्धिविषय के टाइटल पेज २ पर छापा गया था।

सर्वशिष्ट माननीय पाणिनीय व्याकरण अष्टाध्यायी जो कि पढ़ने वालों को अति कठिन थी, उस की व्याख्या महाभाष्यस्थ अत्यन्त-उपयोगी वचन तथा उदाहरण और प्रत्युदाहरण सहित सुगम भाषा करके अनेक भागों में बनवाई है उन में से प्रथम भाग यह सन्धि-
५ विषय जिस में वर्णों का मेल है और विकार आदि होने से कौन-कौन पद कैसे-कैसे हो जाते हैं, छप गया है। मूल्य ।।) बाहर के मंगाने वालों को डाक महसूल सहित ।।)।। देने होंगे।

जो सज्जन लिया चाहें मुझसे पते पर पत्र व्यवहार करे।

लाला शादीराम[1]

१० प्रबन्ध कर्त्ता वैदिक यन्त्रालय लक्ष्मी कुण्ड बनारस

—:०:—

[पूर्ण संख्या ५१३] **पत्र**

ओ३म्

पं० गणेशप्रसाद जी आनन्दित रहो[2]।

तुम से जो साथ रहने के विषय में बातचीत हुई थी जिसका
१५ उत्तर विचार के देना कहा था सो क्या निश्चय किया। तुम्हारी शीघ्र और सुप्रचार लेख शैली से भाषा सम्बन्धी कार्य में सुगमता रहेगी। तुम्हारा संस्कृत बोध जो अधूरा लघुकौमुदी मात्र का है मेरे साथ में अच्छा हो जायगा और व्याख्यान देने की शैली भी आजायगी। योग्यता बढ़ने पर वेदभाष्य के प्रूफ को शोधन भी
२० करना होगा। तब मासिक वेतन में वृद्धि की जायगी। इस का उत्तर मन्त्री जी के पत्र में लिख भेजना।

१० दिसम्बर १८८० ई०[3] आगरा —हस्ताक्षर

[दयानन्द सरस्वती]

—:०:—

१. यद्यपि यह विज्ञापन लाला शादी राम के नाम से छापा गया है,
२५ परन्तु पूर्व पूर्ण संख्या ५११ के अनुसार ऋ० द० का लिखा वा लिखवाया हुआ है। अत एव हम इसे यहां छाप रहे हैं।

२. मूल पत्र पं० गणेशप्रसाद जी के पास फर्रुखाबाद में सुरक्षित था। म० मामराज जी ने फरवरी १९२७ में प्रतिलिपि की। फर्रुखाबाद का इतिहास पृ० १८६ पर भी छपा है।

३० ३. मार्गशीर्ष शुक्ल ९, शुक्र, सं० १९३७।

[पूर्ण संख्या ५१४]　　पत्र-सूचना

[पं० ज्वालादत्त (काशी)][1]

—:o:—

[पूर्ण संख्या ५१५]　　पारसल-सूचना

[यजुर्वेदभाष्य के पत्रे][2]

—:o:—

[पूर्ण संख्या ५१६]　　पत्र　　५

ओ३म्

पं० गणेशप्रसाद जी आनन्दित रहो[3]

कल एक पत्र भेजा था[4], पाया होगा। उसमें इतना और विशेष जानना कि जो तुम हिसाब का काम रुपये पैसे रखना आदि और करोगे तो २०) मुद्रा मासिक मिलेगा। सो तुम्हारे पिता जो लाला निर्भयराम की दूकान से प्रति मास ले लिया करेंगे। हम तुम्हारे शील स्वभाव से प्रसन्न हैं। देशी भाषा की परीक्षा पास कर चुके हो काम ठीक कर लोगे।[5]　१०

११ दिसम्बर ८०[6]　　　　(दयानन्द सरस्वती)

—:o:—

१. इस पत्र की सूचना १८ दिसम्बर १८८० के पं० ज्वालादत्त के पत्र में मिलती है। ज्वालादत्त का पत्र तीसरे भाग में देखें। ऋ० द० ने ज्वालादत्त को यह पत्र पूर्ण संख्या ५११ पर मुद्रित शादीराम के पत्र के साथ भेजा था अथवा स्वतन्त्र, यह ज्ञात नहीं।　१५

२. यजुर्वेद के पत्र के पहुंचने की सूचना १८ दिसम्बर १८८० के पत्र में पं० ज्वालादत्त ने दी है।　२०

३. मूल पत्र पं० गणेशप्रसाद के पास फर्रुखाबाद में सुरक्षित था। म० मामराज जी ने फरवरी सन् १९२७ में प्रतिलिपि की। फर्रुखाबाद का इतिहास पृ० १८६ पर भी छपा है।

४. देखो पूर्ण संख्या ५१३ (पृष्ठ ५६६) का पत्र।

५. इस पत्र के उत्तर में पं० गणेश प्रसाद जी ने जो पत्र लिखा, उसे तीसरे भाग में देखें।　२५

६. मार्गशीर्ष शुक्ल १०, शनि, सं० १९३७।

[पूर्ण संख्या ५१७] पत्र

पण्डित ज्वालादत्त जी आनन्दित रहो।[1]

विदित हो कि तुम्हारा पत्र आया[2], लिखा सो प्रकट हुआ, बड़े शोक की बात है कि तुम को कई बार लिखा कि व्याकरण में ५ नवीन रचना की कुछ आवश्यकता नहीं है, किन्तु जैसी सम्मिति देरेदून में ठहर गयी है उसी प्रकार से छपना चाहिये। और अब नामिक जैसा छपता है वैसे ही छपने दो, कुछ जरूरत नवीनरचना की नहीं है॥ और नामिक के पश्चात् कारकीय छपेगा। हम नहीं जानते थे कि शोधने में तुम्हारी ऐसी कच्ची दृष्टि है देखो वेद-१० भाष्य शुद्धि अशुद्धि केवल चार पांच पत्र ही की नमूने के तौर पर लिखकर भेजते हैं। उन को देखो और अपने शोधे हुए में सर्वत्र ऐसा ही जान लो॥ खैर अब ऐसा हुआ, आगे कभी ऐसा न होने पावे। शोधने में खूब दृष्टि दिया करो कि एक भी अशुद्धि न रहे।[3]

१५ दयानन्द सरस्वती

—:०:—

[पूर्ण संख्या ५१८] उर्दू पत्र

ओ३म्

मास्टर शादीराम जी।

आप पण्डित ज्वालादत्त को खूब समझा देवें कि व्याकरण में २० कुछ जरूरत 'नवीनरचना' की नहीं है। जैसे अब नामिक छपता है वैसे ही छपने दो। और नामिक के बाद कारकीय छपेगा। और

---

१. मूल पत्र परोपकारिणी सभा अजमेर में सुरक्षित है।

२. पं० ज्वालादत्त का यह पत्र हमें प्राप्त नहीं हुआ। १८ दिसम्बर १८८० का ज्वालादत्त का एक पत्र तीसरे भाग में छपेगा। उस पत्र में २५ लिखी 'नवीन रचना' का उल्लेख नहीं है।

३. इसी पत्र के नीचे अगला (पूर्ण सं० ५१८ का) पत्र उर्दू में मास्टर शादी राम के नाम का लिखा हुआ है। वह २२ दिसम्बर ८०=पौष कृष्ण ५ सं० १९३७ का है, इसलिए यह भी उसी दिन का है। इस पत्र के उत्तर में पं० ज्वालादत्त ने सन् १८८१ के आरम्भ में जो पत्र लिखा, वह तीसरे ३० भाग में देखें।

पण्डित ज्वालादत्त के शोधन में बहुत गलती रहती हैं। उन को ताकीद कर दो कि खूब गोर से शोधे, ताकि गलती न रहे।

आगरा २२ दिसम्बर ८१ [८०] ईस्वी[1]   दयानन्द सरस्वती

—:०:—

[पूर्ण संख्या ५१६]   विज्ञापन-सारांश

[2]जिस किसी को मुझ से शास्त्रार्थ की इच्छा हो या मेरे कथन में किसी बात पर कुछ सन्देह हो या निजी रूप में कुछ पूछने का अभिप्राय हो तो आज से लेकर दस दिन तक मेरे निवास स्थान पर आकर अपना सन्तोष करले अर्थात् शङ्कायें उपस्थित करें और और उन के उत्तर सुन लें।

[आगरा, २३ दिसम्बर १८८०]

—:०:—

[पूर्ण संख्या ५२०]   शुद्धि अशुद्धि पत्र सूचना

[पं० ज्वालादत्त, काशी]

[वेदभाष्य की शुद्धि अशुद्धि के नमूने के तौर पर ४-५ पत्रे][3]

—:०:—

१. पहले यह पत्र आर्यधर्मेन्द्र जीवन संस्करण तृतीय पृ० ३९६ से छापा गया था। अब मूल पत्र की प्रतिलिपि से छापा है। मूल पत्र परोपकारिणी सभा में सुरक्षित है। हमारे पास आई हुई प्रतिलिपि में कोई तिथि नहीं है। न जाने आर्यधर्मेन्द्रजीवन में तिथि कहां से ली गई है। तिथि में सन् अशुद्ध छपा है। शताब्दी संस्करण भूमिका पृ० १६ पर ऊपर के पत्र (पूर्णसं० ५१५)के सम्बन्ध में भी यही अशुद्धि है। सन् ८० चाहिये। क्योंकि स्वामी जी महाराज २२ दिसम्बर १८८० (पौष कृष्ण ५ सं० १६३७) को ही आगरा में थे, २२ दिसम्बर १८८१ में आगरा में नहीं थे, इन्दौर में थे।

२. द्र०—पं० लेखरामजी कृत जीवन चरित, हिन्दी अनुवाद, पृष्ठ ५६१।

३. इसका संकेत पूर्ण संख्या ५१७ के पत्र में है। इसका उत्तर भी ज्वालादत्त ने सन् १८८१ के आरम्भ में लिखे पत्र में दिया है। ज्वालादत्त का पत्र तीसरे भाग में देखें।

[पूर्ण संख्या ५२१] पारसल-सूचना

[पं० ज्वालादत्त, काशी]

[नामिक के] १८ पृष्ठ।[1]

—:o:—

[पूर्ण संख्या ५२२] पत्र-सारांश

५ [लाला शादीराम जी, काशी]

मुंशी बखतावरसिंह के हिसाब के रजिस्टर भेजो।[2]

दयानन्द सरस्वती

—:o:—

[पूर्ण संख्या ५२३] पत्र

मास्टर दयाराम जी आनन्दित रहो[3]।

१० विदित हो कि आपका पत्र आया, हाल मालूम हुआ। आप ने जो नक्शा मर्दुम शुमारी का लिखा सो उस की खानापूरी इस प्रकार करो।

मजहब फिरके मजहबी	वैदिक
असल कौम	आर्य्य
जात या फिर्का	ब्राह्मण वा क्षत्रिय वैश्य शूद्र
गोत्र या शाख	जो अपना गोत्र है

१५

और जिस को अपना गोत्र याद न हो वह अपना काश्यप गोत्र

---

१. इन पत्रों के भेजने की सूचना पं० ज्वालादत्त के पौष सुदि १० (सं० १९३७=१० जनवरी १८८१) के पत्र से मिलती है। पं० ज्वालादत्त २० का पत्र तीसरे भाग में देखें।

२. इस पत्राशय को हमने ऋ० द० के [९ फरवरी १८८१] को सेठ काली चरण को लिखे गये पत्र के 'सब रजिस्टर आदि कागज यहां काशी से मंगवा लिये' पत्रांश के आधार पर बनाया है। तिथि का निर्देश न होने से अनुमान से यहां जोड़ा है।

२५ ३. मूल पत्र की प्रतिलिपि फर्रुखाबाद में सुरक्षित थी। वहीं से म० मामराज जी ने सन् १९२७ में इस की प्रतिलिपि की। यह पत्र फर्रुखाबाद का इतिहास पृ० १८७ पर भी छपा है, उसमें इतना लेख अधिक है "इस की नकल सब समाजों में स्वामी जी की आज्ञानुसार भेजी जाती है। दयाराम वर्मा मन्त्री आर्यसमाज मुलतान ८ जनवरी सन् ८१ ई०।"

या पाराशर लिखा दे। और यह सब समाजों में तथा पंजाब भर में इसी प्रकार लिख भेजें। और हम यहां सब प्रकार से आनन्द में हैं।

आगरा ३१ दि० स० १८८०[1]		हस्ताक्षर
दयानन्द सरस्वती		५

—:o:—

## [पूर्ण संख्या ५२४]		पत्र

द्वारकादास जी आनन्दित रहो[2]!

पत्र तुम्हारा आया हाल मालूम हुआ। पुस्तकों का सूचीपत्र लिखते हैं। जो चाहे दाम भेज कर मंगालो॥

ऋग्वेदादिभाष्यभूमिका	... ...	५)	१०
सत्यार्थप्रकाश	... ...	२॥)
संस्कारविधि	... ...	१॥=)
सन्ध्या	... ...	।)
वेदांतिध्वान्तनिवारण	... ...	।=)
सत्यधर्मविचार	... ...	=)	१५
सत्यासत्यविवेक	... ...	।)
वर्णोच्चारणशिक्षा	... ...	।)
व्यवहारभानु	... ...	।)
संस्कृतवाक्यप्रबोध	... ...	।–)
आर्योद्देश्यरत्नमाला	... ...	–)॥	२०

तथा ऋ० वेद और यजुर्वेद का भाष्य होता है। उसका मूल्य जो अब तक छपा और २९ अङ्क तक छपेगा २०॥) और आगे को दोनों वेदों का ८) साल है।

---

१. पौष कृष्ण ३०, शुक्र, सं० १९३७।

२. यह कार्ड ता० १८ अप्रेल सन् १९२७ को म० मामराज जी ने ला० द्वारकादास जी (आयु ७५ वर्ष) से इटावा जा कर प्राप्त किया था। कार्ड उन्हें वापिस भेज दिया गया था। उक्त ला० जी ने ऋषि द० स० के ३० व्याख्यान आगरे में सुने थे। उनको यह कार्ड ऋषि ने एतमादपुर भेजा था। ला० द्वारकादास जी उस समय वहीं रहते थे।		२५

आगरा हस्ताक्षर
३१ दि० १८८०[1] दयानन्द सरस्वती

—:०:—

[पूर्ण संख्या ५२५] पत्राशय

[लाला कालीचरण रामचरण दास जी]

५ १०० सौ रुपया पण्डितों के बाबत हमारे पास भेज दो।[2]

आगरा दयानन्द सरस्वती

—:०:—

[पूर्ण संख्या ५२६] पत्र-सूचना

[मैडम ब्लेवेस्टकी के नाम]

[यह पत्र लाहौर समाज से अंग्रेजी भाषान्तर होकर मुम्बई
१० भेजा गया और वहां से मैडम को]

जनवरी ८१ का आरम्भ[3]

—:०:—

[पूर्ण संख्या ५२७] पत्र-सूचना

[पं० ज्वालादत्त, काशी]

अशुद्धियों के सम्बन्ध में[4]

—:०:—

---

१५ १. पौष कृष्ण ३०, शुक्र, सं० १९३७।

२. इस पत्र की सूचना अगले पूर्णसंख्या ५२८ के पत्र में मिलती है। इससे पूर्व एक पत्र कालीचरण जी को मन्त्री आर्यसमाज के नाम से भेजा गया था (पूर्ण सं० ५०८ पृ० ५६३)। उसमें यह विषय नहीं है अतः यह पत्र उसके बाद कभी भेजा गया था।

२० ३. इस पत्र का संकेत मुम्बई आर्यसमाज के मन्त्री सेवकलाल कृष्णदास के पत्र में है। इस पत्र के आरम्भ में १८ जनवरी १८८० छपा है। वह अशुद्ध है। सन् १८८१ चाहिये। सेवकलाल कृष्णदास का पत्र तीसरे भाग में देखें। मैडम ब्लेवेस्टकी ने ऋ० द० के पत्र का १७ जनवरी १८८१ को जो उत्तर दिया था, उसे तीसरे भाग में देखें।

२५ ४. इस पत्र की सूचना पं० ज्वालादत्त के पौष शु० १० (सं० १९३७ =१० जनवरी १८८०) के पत्र में मिलती है। ज्वालादत्त का पत्र तीसरे भाग में देखें।

[पूर्ण संख्या ५२८]   पत्र

लाला कालीचरण, रामचरण जी आनन्दित रहो[1]।

विदित हो कि हम ने अब यहां सब असिल कागज और रजिस्टर "बखतावरसिह" के दस्तखती काशी से मंगा कर देखें, उनमें बहुत कुछ फर्क है। और सब लेख धोखे का है। यह भली प्रकार से साबित होता है। इसलिये तुम को लिखते हैं कि यहां आकर आप भी देखें और "बखतावरसिंह" को भी बुला लें। और एक रजिस्टरी चिट्ठी बखतावरसिंह के पास भेज दो कि इस चिट्ठी के देखते ही आगरे में स्वामी जी के पास आकर हिसाब समझा दो। और हम भी वहीं होंगे। और –) है। रजिष्टरी में अधिक देवें कि उस के हस्ताक्षर भी आ जावें॥ और आप को यहां अवश्य आना उचित है। और जिस दिन आप आवें उससे पहिले हम को लिख भेजें कि हम फलाने दिन आवेंगे॥

हमने आप को लिखा था कि १००) पण्डितों की बाबत के हमारे पास भेज दो। सो अब तक नहीं पहुंचे। इसका क्या कारण है। और हमने नारायणदास मुखतार से कहा था कि एक मोतबिर खजानची काशी में रखवा दो और उस की जमानत भी ले लो। इसका भी हाल लिखो॥ सब सभासदों को नमस्ते॥

आगरा
बेलनगंज लाला गिरिधरलाल वकील का बागीचा

हस्ताक्षर
१० जन० १८८१[2]।   (दयानन्द सरस्वती)

—:०:—

[पूर्ण संख्या ५२९]   पत्र

लाला मूलराजजी एम० ए० आनन्दित रहो[3]!

---

१. मूल पत्र आर्यसमाज फर्रुखाबाद में है। उसकी प्रतिलिपि सन् १९२७ में म० मामराज जी ने की। फर्रुखाबाद का इतिहास पृ० १८८ पर भी छपा है। वहां कई पाठ त्रुटित हैं।

२. पौष शुक्ल १०, सं० सोम, १९३७।

३. यह पत्र वैदिक मैगजीन गुरुकुल गुजरांवाला सन् १९०७ अंग्रेजी से अनूदित है।

आप को लिखा जाता है। कि जब बाबू शिवदयाल जी यहां थे, तो उन्होंने पण्डित विहारीलाल को हमारे यन्त्रालय में काम करने को भेजने और श्रीराम को विलायत भेजने की हम से प्रतिज्ञा की थी। क्या आप हमें लिखेंगे कि इस विषय में अन्तिम ५ निर्णय क्या हुआ है? यहां एक गोरक्षिणी सभा स्थापन की गई है और इसके नियमोपनियम भी बना दिये गये हैं, जब छपेंगे तो आपको सूचना के लिये भेज देंगे। आज इसी विषय पर एक और सभा की जायगी।

मुन्शी बखतावरसिंह ने यन्त्रालय की बड़ी हानि की है आज-१० कल हम यन्त्रालय के हिसाब की जांच कर रहे हैं। जो आगे होगा सो लिखूंगा। सबसे मेरा नमस्ते कहना।

१२ जनवरी १८८१[1] ह० दयानन्द सरस्वती

आगरा।

—:o:—

[पूर्ण संख्या ५३०] **पत्र-सारांश**

१५ [लाला रामशरणदास जी, मेरठ]

मुंशी इन्द्रमणि का हिसाब लिख कर मेरे पास यहां भेज दीजिये।[2]

—:o:—

[पूर्ण संख्या ५३१] **पत्र**

पंडित ज्वालादत्त जी आनन्दित रहो।[3]

२० विदित हो कि तुमने जो यजुर्वेद अष्टमाध्याय के पत्र भेजे सो

---

१. पौष शुक्ल १२, बुध, सं० १९३७।

२. इस पत्र की सूचना पौष शु० १ सं० १९३९ के **'उचित वक्ता'** नाम से सम्पादक देश हितैषी अजमेर को लिखे गये पत्र में मिलती है। इसे यथास्थान आगे देखें।

२५ ३. दयानन्द ग्रन्थमाला, शताब्दी संस्करण, प्रथमावृत्ति, संवत् १९८१, सन् १९२५, पृ० १६, १७ पर खण्डश: मुद्रित। सम्पूर्ण पत्र Works of Maharshi Dayanand by Shri Harbilas Sarda, Ajmer 1952 पृ० १२७ पर मुद्रित। हम ने दोनों की तुलना करके तथा मूल पत्र की एक नई प्रतिलिपि से मिला कर सारा पत्र छापा है।

पहुंचे।[1] परन्तु वे किसी काम के नहीं। क्यों, उनमें भाषा बहुत काट फांट रक्खी है। और तुम्हारे संकेत हैं। यह उत्तर तो सहज है कि अवकाश नहीं मिला। और नामिक जैसा है वैसा शुद्ध और दिव्य छपवाओ। सन्धिविषय की तरह अशुद्ध[2] न होने पावे। अब हमने सन्धिविषय का शुद्धिपत्रमात्र देखा तो विदित हुआ कि जो कम विद्यावाला भी ध्यान देकर शोधे तो भी ऐसी अशुद्धि कभी न रह सके। अब हम यह उपदेश करते हैं। तुम लोगों को इसका गुण मानना उचित है न कि चिड़ जाना। भीमसेन ने जो कि ४० पृष्ठ सन्धिविषय के शोध कर छपवाए हैं उसमें अशुद्धि कम है। और इन अशुद्धियों में भी संस्कृत की अशुद्धि बहुत ही कम हैं। देखो तुम्हारे शुद्धिपत्र के अनुसार ४० पृष्ठों में ५१ अशुद्धि हैं। और तुम ने शुद्ध का अशुद्ध किया। और तुम्हारे २४ पृष्ठ में ५९ अशुद्धियां हैं। और इन अशुद्धियों में भाषा की कम और संस्कृत की अधिक हैं। और जब हम सन्धिविषय का पाठ करें[गे][3] तब तुम्हारी और भी० से० की न जाने कितनी निकलेंगी। अब ऐसा हुआ सो हुआ, परन्तु आगे कभी ऐसा न करो। आगे से हम सब पुस्तक देखा करेंगे और अपना लिखाया और तुम्हारा शोधा पुस्तक भी मंगा लिया करेंगे। और आज से हम वेदभाष्य भी देखेंगे कि कितनी अशुद्धि हैं। बड़े आश्चर्य की बात है कि जब लाजरस और मुम्बई से छपता था, कभी ऐसी अशुद्धि न होती थी जैसे कि अब घर के छापेखाने में होती हैं। जो ऐसी अशुद्धि हुआ करेंगी, तो सब पुस्तक में अशुद्धिपत्र ही भरा करेंगे। और छपवाने वालों और प्रेस की भी बदनामी होगी। जो छप गया सो खैर, परन्तु आगे कभी ऐसा न होगा[4]।

---

१. द्र०—ज्वालादत्त के पौष सुदि १ [सं० १९३७]=१० जनवरी १८८१ के पत्र के अन्त में अष्टमाध्याय के पत्र भेजने का उल्लेख है। यह पत्र तीसरे भाग में देखें।

२. शताब्दी सं० में यह शब्द नहीं है।

३. Works of M. Dayanand में "देखेंगे" पाठ है।

४. ऋ० द० के इस पत्र का उत्तर पं० ज्वालादत्त ने १९ जनवरी १८८१ को दिया था। पं० ज्वालादत्त का पत्र तीसरे भाग में देखें।

आगरा
१७ जन० १८८१[1] दयानन्द सरस्वती

—:o:—

[पूर्ण संख्या ५३२] पारसल-सूचना

[यजुर्वेदभाष्य के पृष्ठ भेजे][2]

—:o:—

५ [पूर्ण संख्या ५३३] पत्र

लाला कालीचरण रामचरण जी आनन्दित रहो![3]

विदित हो कि आपने जो पण्डितों के खर्च में १००) की हुंडी भेजी, सो पहुंची। आप खातिर जमा रक्खें॥

हस्ताक्षर

१० आगरा १८ जन० १८८१[4] दयानन्द सरस्वती

—:o:—

[पूर्ण संख्या ५३४] पत्रांश

[मुन्शी बखतावरसिंह, शाहजहांपुर]

तुम एक सप्ताह के अन्दर यहां आकर हिसाब समझा दो, नहीं तो कार्यवाही जाबते की की जावेगी।[5]

---

१५ १. माघ कृष्ण २, सोम, सं० १९३७। शताब्दी संस्करण और works of M Dayanand में इसकी तिथि १७ जून दी है। वह बात ठीक नहीं, १७ जनवरी चाहिये। मूल में १७ जन० ही होगा। श्री हरबिलास जी के नकल करने वाले ने उसे जून बनाने में भूल की है। मूल पत्र उन्हीं के पास है।

२० २. द्र०—१९ जनवरी १८८१ का पं० ज्वालादत्त का पत्र। यजुर्वेद के पृष्ठ ७ अ० आरम्भ से ५० तक आये। यह पत्र तीसरे भाग में देखें।

३. मूल पत्र आर्यसमाज फर्रुखाबाद में था। वहीं से म० मामराज जी ने फरवरी सन् १९२७ में इसकी प्रतिलिपि की। फर्रुखाबाद का इतिहास पृ० १८८ पर भी छपा है।

२५ ४. माघ कृष्ण ३, मङ्गल, सं० १९३७।

५. यह पत्रांश और तारीख ९ फरवरी १८८१ के पत्र (पूर्ण संख्या ५५१) में उद्धृत है, तथा अगले पूर्ण संख्या ५३५ के पत्र में भी इसका

१६ जनवरी १८८१।[1]

—:o:—

[पूर्ण संख्या ५३५]   उर्दू पत्र

नं० १०

मुन्शी नारायण किशनजीव आनन्द रहो[2]।

वाजे हो कि तुम्हारा खत आया हाल मालूम हुआ। एक चिट्ठी व खत नागरी बनाम आत्माराम आपके पास रवाना की जाती है[3]। सो आप उनको दे दीजिये। और जो अब वे वहां न हों तो जहां वे गये हों पहुंचा दीजिये। और रसीद से मतलअ कीजिये। और लाला मूलराज जीव से कह दीजिये कि मुन्शी वखतावरसिंह के सब कागजात देखे गये। उनसे बखूबी उस का फरेब जाहिर हुआ। और जाए गौर है कि सिर्फ कागज ही में से उसने १७० का गवन किया। और रकम इलावा रहीं। और उस के पास ठाकुर मुकन्दसिंह के भेजे दो खत रवाना कराये कि जल्दी आकर हिसाब समझा दो। मगर वह नहीं आया। क्योंकि उसने काम नहीं किया जो रोबरू आने के लायक रहा हो। अब हमने भी एक खत रजिस्टरी उसके पास [रवाना] किया है कि एक हफता के अन्दर आकर हिसाब समझा दो सो अगर वह आ गया तो ठीक है वरना यह मुआमला बजरिआ अदालत ही तय होगा। इस लिये लाला मूलराज जी को भी लाजिम है कि ठाकुर मुकन्दसिंह के (को) जाबिता की काररवाई करने के लिये एक खत रवाना कर दें। और जो चिट्ठी आत्माराम के नाम नत्थी खत हज़ा है[3] उसकी नकल रख लो और छपवा दो। और वहां लाला शिवदयाल जीव पहुंचे या नहीं। और आपके खत से ठाकुरदास के अफआल मालूम हुए।

निर्देश है। उक्त पत्र रजिस्ट्री से भेजा गया था।

१ माघ कृष्ण ४, बुध, सं० १६३७।

२. मूल पत्र हमारे संग्रह में सुरक्षित है। मुंशी नारायण किशन आर्य-समाज गुजरांवाला के मन्त्री थे।

३. द्र०—अगली पूर्ण संख्या ५३६।

आगरा २१ जनवरी सन् १८८१[1] स्वामी दयानन्द सरस्वती
दयानन्द सरस्वती

—:o:—

[पूर्ण संख्या ५३६] पत्र

आनन्दविजय आत्माराम जी (नमस्ते)[2]।

५ आप का पत्र ८ माघ का लिखा हुआ मेरे पास पहुंचा। उस में लिखित वृत्त विदित हुआ। मेरे प्रश्नों के उत्तर में जो आपने लिखा कि "बौद्ध और जैन को एक ही मत के नाम मानने से हमारी कुछ मानहानि नहीं" इसको पढ़ कर अत्यन्त प्रसन्नता हुई। यही सज्जनों का काम है कि सत्य को मानें और असत्य को न १० मानें, परन्तु यह बात जो आप ने लिखी है कि 'योगाचार आदि चार सम्प्रदाय जैन बौद्ध मत के हैं सो वह बौद्ध मत जैन मत से एक पृथक् शास्त्र का है।" इसका उत्तर मैं आपके पास भेज चुका हूं कि मत में शाखा प्रशाखा का भेद थोड़ी बातें पृथक् होने से होता है, परन्तु मत के रूप में शाखायें एक ही मत की होती १५ हैं। देखिये कि उन्हीं नास्तिकों में चारवाक आदि नास्तिक हैं और जो आप उनका इतिहास और जीवन चरित्र पूछते हैं सो इस का उत्तर भी मैं दे चुका हूं अर्थात् इतिहासतिमिरनाशक के तीसरे अध्याय में देख लीजिये।

और आप जिन बौद्धों को अपने मत से पृथक् कहते हैं, वे आप २० के सम्प्रदाय से चाहे पृथक् हों, मत के रूप से कदापि पृथक् नहीं हो सकते जैसे कई जैनी उदाहरणतया श्वेताम्बर दूसरे जैनों उदाहरणतया समवेगी साधुओं पर आक्षेप करके उन्हें पृथक् और नया मानते हैं। यह स्पष्ट हुवेक (?) नामक पुस्तक में लिखा है, इत्यादि आप लोगों ने उन पर बहुत से आक्षेप करके उनके मत में २५ सम्यक्त्व निर्णय पुस्तक लिखी है, तो भी इससे वे और आप बौद्ध

---

१. माघ कृष्ण ६, शुक्र, सं० १९३७ का पत्र।

२. दयानन्द दिग्विजयार्क प्रथम खण्ड पृ० ५२ से ५४ तक संक्षिप्त रूप से, तथा आर्य समाचार (उर्दू) मेरठ मिति माघ सवत् १९३७ विक्रमी, पृ० ३२५-३३१ तक उद्धृत है। पं० लेखरामकृत उर्दू जीवन च० पृष्ठ ३० ६९५-६९८ (हिन्दी सं० पृष्ठ ७१६-७१९) तक भी छपा है।

या जैन मत से पृथक् नहीं हो सकते और न कोई विद्वान् उनके मत के सिद्धान्तों के आधार पर उन्हें पृथक् मान सकता है, उन के सिद्धान्तों में भेद तो अवश्य होगा।

आप के इस वचन से कि "इस में क्या आश्चर्य है कि महावीर तीर्थङ्कर के समय में चारवाक मत था और उनसे पीछे नहीं हुआ" ५
इससे मुझको आश्चर्य हुआ, क्या जो महावीर तीर्थङ्कर से पहले २३ तीर्थङ्कर हुए उन सबसे पहले चारवाक मत को आप सिद्ध नहीं कर सकते। यदि किसी प्रकार का कथन का स्थान आप के लिये हो तो आप पर प्रश्न हो सकता है कि ऋषभदेव भी चारवाक मत से चले हैं, फिर आप इस के उत्तर में क्या कह सकते हैं। १०
चारवाक १५ प्रकार में से एक प्रकार का भी नहीं है, और उसमें एक सिद्ध और मुक्त नहीं हुआ? क्या वे आपके सिद्धान्तों और पुस्तकों से पृथक् हो सकते हैं?

इसके अतिरिक्त आपने भी अपने लेख में बुद्ध मत को अपने मत में स्वीकार कर लिया है क्योंकि करकण्डा आदि को आपने १५
बौद्ध माना है और मैंने भी अपने पहले पत्र में जैन और बौद्ध के एक मत होने का लिखित प्रमाण दे दिया है फिर आप का दूसरी वार पूछना व्यर्थ और निष्प्रयोजन है। जहां स्वयं वादी के साक्षी से मुकदमा सिद्ध हो जाए तो फिर हाकिम को अन्य पुरुषों की साक्षी लेने की आवश्यकता नहीं होती। भला जिसकी कई पीढ़ियां २०
जैन मत में चली आई हों अर्थात् राजा शिवप्रसाद की साक्षी को और आजकल जो यूरोपियन लोग बड़े परिश्रम से इतिहास बनाते हैं उनकी साक्षी आप अशुद्ध कह सकते हैं, जिन्होंने अपने इतिहास में बौद्ध और जैन को एक ही लिखा है और यह भी लिखा है कि कुछ बातें आर्यों की और कुछ बौद्धों की लेकर जैन मत बना है। २५

[1]प्रश्न २ के उत्तर में जो आपने लिखा है वह नमुचि नास्तिक जैनमत का द्वेषी साधुओं को निकालने और कष्ट देने वाला था और उसको मार कर सातवें नरक में भेजा गया। यह लेख आपने सत्यार्थप्रकाश के लेख के उत्तर में नहीं समझा। विचार कीजिये कि वह नमुचि जैन मत का शत्रु था इसलिये मारा गया। तो क्या ३०

१. इन प्रश्नों का सम्बन्ध पूर्ण संख्या ४९२ पृष्ठ ५४३-५४७ पर मुद्रित पत्र से है।

उसने जान बूझ कर पाप नहीं किया था। कितने शोक की बात है कि आप सीधी बात को भी उल्टा समझ गये।

प्रश्न ३ के उत्तर में जो आपने प्राकृत भाषा का एक श्लोक लिखा है, परन्तु उसके अर्थ स्वयं नहीं लिखे, केवल मुझ पर उसका
५ समझना छोड़ दिया। इसका यह अभिप्राय होगा कि मैं उसके अर्थ और तात्पर्य तक नहीं पहुंच सकूंगा। हां मैं कुछ सब देशों की भाषा नहीं जानता हूं, केवल कुछ देशों की भाषा और संस्कृत जानता हूं, परन्तु मतमतान्तरों की शाखा प्रशाखा और सम्प्रदायों के सिद्धान्तों को अपनी विद्या और बुद्धि और
१० विद्वानों के संग प्रभाव से जानता हूं। आप और आप लोगों के आचार्यों ने ऐसी अपभ्रंश भाषा, अपनी भाषा बना ली है, जैसे धर्म के स्थान पर धम्म इत्यादि, जैसे जिन का मत युक्ति और प्रमाणों से सिद्ध नहीं हो सकता है वे ऐसे-ऐसे अप्रसिद्ध शब्द बना लेते हैं, ताकि कोई दूसरा ठीक प्रकार से समझ न सके। जैसे मद्य
१५ का नाम तीर्थ, मांस का नाम पुष्प आदि बना लिया है ताकि उन के सिवाय कोई दूसरा न जान ले। जो राजा लोग न्यायप्रिय होते हैं वे तो मार्ग ऐसे सीधे बना लेते हैं कि अन्धा भी प्राप्य स्थान को पहुंच जाए, परन्तु उनके विरोधी मार्गों को इस प्रकार से बिगाड़ते हैं कि कोई परिश्रम और कष्ट से भी चल न सके। आप रत्नसार
२० भाग नामक पुस्तक को प्रामाणिक नहीं समझते तो क्या हुआ, बहुत से श्रावक और जैन लोग उसको सच्चा मानते हैं।

देखिये, आप ऐसे विद्वान् होकर मूर्ख को मूर्ष लिखते हैं और पत्र में लिखे शब्दों को शुद्ध करने में बहुत सी हड़ताल भी लपेटते हैं। कितने शोक की बात है कि संस्कृत तो दूर रही, देसी भाषा
२५ भी आपलोग नहीं जानते, परन्तु इस लेख के स्थान में यह लिखना उचित था कि आप की भूल का कुछ नहीं, क्योंकि मनुष्य प्रायः भूल किया ही करता है।

प्रश्न ४ के उत्तर में जो कुछ आपने लिखा है वह बहुत आश्चर्य में डालने वाला है। विद्या की प्राप्ति की इच्छा मनुष्य वहां प्रकट
३० कर सकता है, जहां अपने से अधिक किसी विद्वान् को देखता है। मैंने भी उन्हीं विद्वानों और आचार्यों से विद्या प्राप्त की है जो मुझसे अधिक बुद्धिमान् और विद्वान् थे आप भी शायद इसको स्वीकार करते होंगे। क्या आप लोग दूसरे मत के विद्वानों को गुरु

न समझ कर शिष्य के विचार से और मुक्ति के फल का ध्यान न रख कर किसी विरुद्ध अभिप्राय की प्राप्ति की इच्छा से दान करते हो और क्या यह बातें अविद्वानों की नहीं हैं कि अपने मत और उसके साधुओं की बड़ाई का ध्यान रखना और अन्य मत के विद्वानों के विषय में इसके विरुद्ध। यह अच्छे लोगों की बातें नहीं ५ है। वस्तुत: मनुष्यमात्र में से अच्छे को अच्छा और बुरे को बुरा मानना जिज्ञासुओं और धर्मात्माओं और महात्माओं का काम है और उसको ही हम जानते हैं और उचित है कि आप भी उस को स्वीकार करें। मेरे लेख का यथार्थ अभिप्राय आप उस समय समझेंगे जब कि मैं और आप सन्मुख होंगे। मेरी पुस्तक सत्यार्थप्रकाश १० के लेख से कोई मनुष्य यह अभिप्राय नहीं निकाल सकता कि जैन मत के लोगों को चिरकाल तक पीड़ा देना और दान न देना और जैन मत बेइमानी का मूल है, अपितु यह सिद्ध है कि अच्छे और ईमानदार लोगों और अनाथों की सहायता करना और बुरे लोगों को समझाना। १५

परन्तु यह छ: निषेधों का कलङ्क आप को ऐसा लिपट गया है कि जब ईश्वर की दया हो और आप लोग पक्षपात को छोड़कर यत्न करें तब धोया जा सकता है अन्यथा सर्वथा नहीं। भला जब यह स्पष्ट लिखा है कि अन्य मत की प्रशंसा न करना और अन्यों को भोजन और जल न देना तो फिर आप इसको अशुद्ध क्यों कर २० सकते हैं। यह बातें आपके सहस्रों ग्रन्थों में लिखी हुई हैं और आप लोग इसको समझ लें कि मुझे ऐसा स्वप्न में नहीं आया है, हां जो आप लोग कुछ भी विचार कर देखें तो उनको छोड़ देना ही धर्म है, आगे आप की इच्छा।

पांचवें प्रश्न का उत्तर, उसके विषय में जो आपने लिखा है २५ उस से मेरे उत्तर का खण्डन नहीं हो सकता, क्योंकि जब बालों के नोचने का प्रमाण आपकी पुस्तकों में लिखा है और मैंने उस के प्रमाण से सिद्ध कर दिया, फर भला कहीं युक्ति का आश्रय लेने से उस बात से नकार हो सकता है? सर्वथा नहीं।

छठे प्रश्न के उत्तर में, जब यह सिद्ध कर चुका हूं कि जैन और ३० बौद्ध जिन मत का नाम है उस की शाखा चारवाक आदि हैं, फिर यह कैसे अशुद्ध हो सकता हैं।

जो आप जैन लोगों के ग्रन्थों में हमारे मत के विषय में लिखा है और जिस का हमारी धार्मिक पुस्तकों में कहीं उल्लेख नहीं, इससे हमारी धार्मिक मानहानि होती है। इसलिए आप जैन जोगों से पूछा जाता है। कि लौटती डाक शीघ्र उत्तर दें कि वे बातें ५ हमारी किन धार्मिक पुस्तकों में लिखी हैं। ध्यान रहे कि जिस भाष्य [में है उस का नाम] और ठीक-ठीक पता दें, उन के साथ पृष्ठ और पंक्ति आदि के प्रमाण से जैसा मैंने आपके प्रश्नों का उत्तर दिया है उसी प्रकार से आप भी उत्तर दें, नहीं तो आप सज्जनों की बहुत हानि होगी। इस विषय को आप केवल साधारण १० दृष्टि से न देखें, परन्तु एक प्रकार का पूरा ध्यान रखें ताकि यह लम्बा न हो जाए। उत्तर देने में शीघ्रता करें तो अच्छा है।

जैनों के विवेकसार ग्रन्थ के लेख पर कुछ आक्षेप—

आक्षेप १—विवेकसार पृष्ठ १० पंक्ति १ में लिखा है कि श्रीकृष्ण तीसरे नरक को गया।

१५ आक्षेप २—विवेकसार पृ० ४० पं० ८ से १० तक लिखा है कि हरिहर ब्रह्मा, महादेव, रामकृष्ण आदि कामी, क्रोधी, अज्ञानी, स्त्रियों के दूषी, पाषाण की नौका के समान आप डूबते और सब को डुबाने वाले हैं।

आक्षेप ३—विवेकसार पृ० २२४ पं० ६ से पृ० २२५ पं० १५ २० तक लिखा है कि ब्रह्मा, विष्णु महादेव सब अदेवता और अपूज्य।

आक्षेप ४—विवेकसार पृ० ५५ पं० १२ में लिखा है कि गङ्गा आदि तीर्थों और काशी आदि क्षेत्रों से कुछ परमार्थ सिद्ध नहीं होता।

आक्षेप ५—विवेकसार पृ० १३८ पं० ३० में लिखा है कि जैन २५ का साधु भ्रष्ट भी हो तो भी अन्य मत के साधुओं से उत्तम है।

आक्षेप ६—विवेकसार पृ० १ पं० १ से लेकर लिखा है कि जैनों में बौद्ध आदि शाखायें हैं। इस से सिद्ध हुआ कि जैन के अन्तर्गत बौद्ध आदि सब शाखायें हैं।

मिति माघ वदी ६ शुक्रवार, सं० १९३७।

आगरा तारीख २१ जनवरी सन् १८८१[1]　　हस्ताक्षर
स्वामी दयानन्द सरस्वती

—:o:—

[पूर्ण संख्या ५३७]　　पत्र-सारांश

[मुंशी बखतावरसिंह, शाहजहांपुर]

हमने तुम्हारे सब कागजात काशी से १० जनवरी ही को मंगा लिये, तुम अवश्य २८ जनवरी को चले आओ[2]।　५

२४ जनवरी १८८१[3]

—:o:—

[पूर्ण संख्या ५३८]　　पत्र-सारांश

[लाला रामशरण दास जी, मेरठ]

२५० दो सौ पचास रुपये लाला बल्लभदास गोरखपुर के भेजे आपने जमा क्यों नहीं किये।[4]　१०

—:o:—

[पूर्ण संख्या ५३९]　　पारसल-सूचना

[लाला शादीराम, काशी]

हिसाब के रजिस्टर भेजे गये।[5]

—:o:—

[पूर्ण संख्या ५४०]　　उर्दू पत्र　　१५

शादीराम [प्रबन्धकर्त्ता वैदिक यंत्रालय बनारस]

---

१. माघ कृष्ण ६, शुक्र, सं० १९३७।

२. यह पत्र-सारांश ९ फरवरी १८८१ (पूर्ण संख्या ५५१) के पत्र में उद्धृत है। उपर्युक्त पत्र रजिस्ट्री से भेजा गया था।

३. माघ कृष्ण ९, सोम, सं० १९३७।　२०

४. इस पत्र की सूचना ऋ० द० के पौष शुक्ल १ सं० १९३७ को **'उचित-वक्ता'** के नाम से सम्पादक देशहितैषी को लिखे पत्र से मिलती है। वहां लिखा है—स्वामी जी ने उसी दिन लाला रामशरणदास को पत्र लिखकर उत्तर मंगवाया।' 'उचित वक्ता' के नाम से लिखा पत्र आगे यथास्थान छपा है।　२५

५. इसकी सूचना पूर्ण संख्या ५४० पत्र के आरम्भ में है।

रजिस्टर मैंने रवाना किया। जो गलती हैं, ठीक है। अब तुम तकाजा करो और चिट्ठी छपवा लो बिल के तौर पर। और वेद-भाष्य के साथ रवाना करो। और दो चार दिन में पुस्तकों के रजिस्टर सब रवाना कर देंगे। और सेठ भवानीराम मारवाड़ी
५ मिरजापुर का जिसका रिशता लाला निर्भयराम फरुखाबाद वालों से है, उसको पूछकर पण्डित सुन्दरलाल के हुक्म से उनसे रुपया लेलो। पण्डित भागराम[1] लाला प्रसादीलाल वहां आते हैं, वे आप से मिलेंगे[2]।

—:o:—

[पूर्ण संख्या ५४१] पत्र

१० सेवक लाल कृष्णदास [मंत्री आर्यसमाज मुम्बई]

आपने जो पत्र[3] और जैनों [के ग्रन्थों] की सूची [भेजी][4] सो

---

१. ये पण्डित भागराम अजमेर में जज थे। और ऋ० द० के अनन्य भक्त थे।

२. लगभग २४ जनवरी १८८१ [माघ कृष्ण ९ सं० १९३७] की लिख-
१५ वाया गया। (द्र० - पूर्ण संख्या ५४१ टि० ३)। यह पत्र एक पीले मटियाले बड़े कागज पर इस और अगले तीन पत्रों पूर्ण संख्या ५४१ से ५४३ का पूर्वरूप उर्दू में लिखवाया गया है। प्रतीत होता है कि श्री स्वामीजी के पास आगरा में कोई उर्दू पढ़ा पुरुष बैठा था। स्वामीजी का लेखक किसी काम में लगा होगा। उससे ये पत्र शीघ्रता में लिखवाए गए।
२० पत्रों में कई शब्द छुटे हुए हैं। उन्हें पत्र लिखते समय लेखक ने पूरा किया होगा। उनकी पूर्ति हमने कोष्ठों में की है। मुम्बई के तीनों पत्र पुन: देव-नागरी में इसी लेखक ने श्री स्वामी जी के भाषा-लेखक को लिखवाए होंगे। मूल कागज म० मामराज जी अक्टूबर सन् १९२६ में ला० रामशरणदास जी मेरठ वालों के यहां से लाये थे। अब वह हमारे संग्रह में सुरक्षित हैं।

२५ ३. देखो सेवकलाल कृष्णदास का १५ जनवरी १८८१ का पत्र। इसे तीसरे भाग में देखें।

४. १८ जनवरी १८८१ (१८८० अशुद्ध है) के पत्र में सेवकलाल कृष्णदास ने 'इन पुरुषों को धन-सहित श्री स्वामी जी के पास निमन्त्रणार्थ भेजने' का उल्लेख किया है। इसी पत्र में राणाजालमसिंह जी का निर्देश
३० है। अत: पूर्ण संख्या ५४०, ५४१, ५४२, ५४३ के चारों पत्र २४ जनवरी १८८१ के लगभग लिखे गये होंगे।

देखो। जब तक देखो सो देखो और जो सूचीपत्र बने बनालो। जब पत्र भेजें, भेज देना हम को देखने का अवकाश कम है। तुम देखो। हम खण्डन-मण्डन और सिद्धान्त के जानने [को देखेंगे।]

जो आप लोगों की ओर से पण्डित गिरजाशंकर दुबे जी, रतनसी श्याम जी हमारे पास आए। उनसे सब हाल मालूम ५ हुआ। मगर मैं उन के साथ जल्दी नहीं आ सकता, क्योंकि यहां आर्यसमाज नया हुआ है। और मुन्शी बखतावरसिंह ने प्रेस में गड़बड़ [की है।] २८ को मेरे व्याख्यान होना है आर्यसमाज में है। जो कहीं मैं राजपूताना की ओर चला उदयपुर तक [तो] मैं नहीं आऊंगा तो एक मास पर विदित करूंगा। सब से नमस्ते कह १० देना। यहां से जिस ...... उनके आने पर ही मालूम [होगा] भुज को छोड़कर बड़ा[1] देश में [जाना है] और यह दोनों आप के पास एक दिन ठहरेंगे। यहां का वर्तमान उन से विदित होगा। और यहां एक गोरक्षणी [सभा] के नियम छपा। और जो मुझे जा[नते] हैं, उन से नमस्ते कह देना। १५

— :०:—

[पूर्ण संख्या ५४२] पत्र

राणा जालमसिंह [कच्छ-दरबार]

जो आपने मेरे बुलाने के लिये दोनों कवि [रतनसी श्याम जी और पं० गिरजाशङ्कर दुबे जी को] उस को मैं इस समय आप के अनुकूल न कर सका। इस समय विशेष बात सब उन से विदित २० होगी। आपत्ति में धैर्य से बुद्धिमत्ता के साथ आपत्ति का निवारण करना आप्तों का काम है।

जो आपने विदेश जाने का विचार किया, वह यहीं हो सकता है। वहां कुछ प्रयोजन नहीं।

—:०:—

[पूर्ण संख्या ५४३] पत्र २५

राव बहादुर गोपालराव हरि देशमुख[2]

---

१. 'विदेश' चाहिये। देखो पत्र पूर्ण संख्या ५४२ का पत्र।

२. यह पत्र सेवकलाल कृष्णदास के पत्र में ही मुम्बई भेजा गया होगा।

महादेव गोविन्द रानडे

आप देश के परम हितैषी हैं। हिन्दी जैसे सब देश पर दृष्टि रखते हैं। विशेष कृपादृष्टि कच्छ भुज देश पर भी कीजिये।

जिसे यथोचित सुशिक्षा हो, सत्य सत्य करेंगे यह भी आशा है ५ क्योंकि इस समय रावसाहब[1] नाबालग हैं।

जो मैं कहीं इस समय आता तो आप सब मिलते। परन्तु फिर मुझ को यह विदित न था। यहाँ व्याख्यान [होते हैं] और और भी कुछ काम है। [अतः] कैसे आ सकता हूं। जो मैं राजपूताना की ओर आया और समय देखा जब आना होगा। आप को सूचना हो १० जावेगी। मैं जदीद (=नवीन) स्थान पर जाऊं तो ठीक है। उस अहाता का भी याद करोगे।

—:o:—

[पूर्ण संख्या ५४४] पत्र-सारांश

[मुंशी बख्तावरसिंह शाहजहांपुर]

जो अपना कल्याण चाहते हो तो अब भी आकर हिसाब १५ समझा दो[2]।

[गिरधरलाल वकील आगरा]

—:o:—

[पूर्ण संख्या ५४५] उर्दू पत्र

लाला शादीराम जी—आनन्दित रहो

वाजे हो कि आज तुम्हारे पास ऋग्वेद के वरक १२३० सफ २० से १५२१ तक यानि ८६ सूक्त के ६ मन्त्र से १११ [सूक्त के ……] मन्त्र तक रवाने करते हैं, रसीद रवाने कर देना और ज्वालादत्त ने जो लघुकौमुदी खरीदी है वह हमारे काम की नहीं, उस को अखतियार है कि वह चाहे अपने खर्च में रखे चाहे फरोख्त करे।

---

१. इन का नाम खेंगारजी था। इस समय इन की आयु लगभग १३, २५ १४ वर्ष की थी। ये कच्छ के राजा स्वर्गीय श्री प्रागमल के उत्तराधिकारी थे। देखो कच्छ कलाधर भाग २ पृष्ठ ४६४।

२. यह पत्र स्वामीजी महाराज ने वकील के द्वारा लिखवाया था। देखो ६ फरवरी १८८१ का पूर्ण संख्या ५५१ (पृष्ठ ५८६) तथा ५५२ (पृ० ५६२) का पत्र। यह लगभग ३० जनवरी को लिखा गया होगा।

हमारी सिद्धान्तकौमुदी मौजूद है। आज तुम्हारा वेदभाष्य पहुंचा, मालूम हुआ कि तुम्हारे पास रुपया बहुत कम आया है। अब तकाजा करके खरीदारों से रुपया वसूल करो और सब तरह आनन्द है।

आगरा ३ फरवरी ८०।[1] दयानन्द सरस्वती ५
३-२-८०

:o:

[पूर्ण संख्या ५४६] पारसल-सूचना

[लाला शादीराम जी, काशी]
ऋग्वेदभाष्य के वरक १२३० सफे से १५२१ तक भेजे।[2]

—:o:—

[पूर्ण संख्या ५४७] पारसल-सूचना १०

[सेठ निर्भयराम जी फर्रुखाबाद]
१½ तोला सुरमा भेजा।[3]
३ फरवरी १८८१

—:o:—

[पूर्ण संख्या ५४८] पत्रांश

[मुंशी बखतावरसिंह शाहजहांपुर] १५
तुम अपने पत्रों को आगरे में लाओ वा आगरे में और किसी को पंच बध दो और स्टाम्प के कागज पर पञ्चायत का इकरार नामा लिख कर जल्दी भेज दो।[4]

—:o:—

१. सन् ८० नहीं, १८८१ चाहिए [माघ शुक्ल ५ सं० १९३७]। मूलपत्र परोपकारिणी सभा, अजमेर में सुरक्षित है। २०

२. इस पारसल को भेजने की सूचना पूर्ण संख्या ५४५ के पत्र से मिलती है।

३. इस की सूचना पत्र सं० ५५१ के अन्त में तथा ५५६ के आरम्भ में है। पूर्ण सं० ५५६ से जाना जाता है कि यह पारसल ३ फरवरी १८८१ (माघ शु० ५ सं० १९३७) को भेजा था। २५

४. यह पत्रांश पूर्ण संख्या ५५१ (पृष्ठ ५८९) में उद्धृत है। लगभग

[पूर्ण संख्या ५४६] उर्दू पत्र

ओ३म्[1]

लाला शादीराम जी आनन्दित रहो—

वाजह हो कि खत तुम्हारा आया। हाल मालूम हुआ। और
५ तुमने जो टिकट १०॥) के और तीन फर्मे नामिक के भेजे सो पहुंचे
खातिर जमा रक्खो हमने इस माह का ऋग्वेद का भी अङ्क देखा।
उसमें भी गलती बरआमद होती हैं। मगर हां फर्मे अखीर में
बेशक गलतियां कम हैं। अगर इसी तरह ज्वालादत्त ख्याल करेगा
और काम में दिल लगावेगा तो आइन्दह गलती बिलकुल न
१० रहेगी। उसको ताकीद कर दो कि प्रूफ को चार पांच दफे देखा
करे, और एक मात्रा की भी गलती न रहा करे, तब छापने का
हुक्म दिया करे। प्रूफ हमारे ग्रन्थ माफिक दुरुस्त हो जाना
चाहिये। अगर वह जियादह शुद्ध न करे तो अशुद्ध भी न करना
चाहिए। उसकी नजर शोधन में बहुत मोटी है। देखो, नामिक के
१५ नोट में "छन्दस्युभयथा" ऐसा लिखना चाहिये था कि उसने बजाय
इसके "छन्दस्युथा" छपवा दिया है। ऐसा गाफिल होना उसको
लाजिम नहीं। अगर वह कहे और पसंद करे कि मैं भाषा नहीं बना
सकता सिर्फ शोधा करूंगा तो हमको कबूल है। हम भाषा का
बनाना उस पर से मौकूफ कर देंगे, और सिर्फ शोधने ही पर रख
२० लेंगे। और जो तनख्वाह भीमसेन को देते थे यानी ५) उसको भी
बल्कि दो जियादह यानी ७) माहवारी देवेंगे, क्योंकि हम खूब
जानते हैं कि वह बजुज लिखने और श्लोक बनाने के और कुछ
नहीं कर सकता। बस अब उसको तुम बखूबी ताकीद कर दो कि
कोई एक भी गलती न रहने पावे। अगर अबकी मर्तबा एक गलती
२५ रही तो हम उस पर बेशक व शुबहा दण्ड करेंगे। और यह भी तह-
रीर करो कि बनारस में आज कल सब-जज यानी जजमातहत या
सदरआला कौन है, जनाब रामकाली चौधरी साहब हैं या और

---

६ या ७ फरवरी सन् १८८१ [माघ शुक्ल ८ या ९ सं० १९३७] को लिखा
गया होगा।

३० १. आर्य धर्मेन्द्रजीवन तीसरा संस्करण पृ० ३६८, पर मुद्रित। मूल पत्र
परोपकारिणी सभा, अजमेर में सुरक्षित होगा।

कोई साहब हैं, और हम सब तरह आनन्द में हैं।

मुकर्रिर यह है कि तुम्हारे पास ऋग्वेद व नामिक की शुद्धि अशुद्धि नमूने के तौर पर लिखकर रवाने करते हैं, ज्वालादत्त को देदेना और तुम भी देखना कि किस कदर गलती निकलती है।

आगरा ७ फरवरी ८१ ई०[1]		दयानन्द सरस्वती	५

—:o:—

## [पूर्ण संख्या ५५०]	पारसल-सूचना

[लाला शादीराम, काशी]

ऋग्वेदभाष्य वा नामिक की शुद्धि अशुद्धि नमूने के तौर पर भेजी।[2]

—:o:—

## [पूर्ण संख्या ५५१]	पत्र	१०

नं० ६२

सेठ कालीचरण रामचरण जी आनन्दित रहो[3]!

विदित हो कि अब हमने मुंशी बखतावरसिंह के समय से सब कागजात काशी से मंगवा कर देखे और हिसाब की जांच पड़ताल की। और कई योग्य पुरुषों, जैसे बाबू पन्नालाल के गुमाशते जमना- १५ दास हिसाबदां, लाला गिरधरलाल वकील जो यहां इस समय वकीलों में गणनीय हैं, मास्टर लक्ष्मणप्रसाद और लाला हरिप्रसाद आदि को भी दिखाकर जांच पड़ताल कराई। जो भली प्रकार प्रत्यक्ष और सिद्ध हो गया कि बखतावरसिंह ने टाइप, कागजादि प्रेस की वस्तुओं और बाहर की छपाई में से हजारों रूपयों का २० गबन किया। जो भद्र पुरुष उसके कागजात को देखता है दांतों नीचे अंगुली दबा शोक से कहता है कि उसने यह ऐसा बुरा काम क्यों किया। जिस किसी साहब को इस में सन्देह हो वह उसके कागजात अपनी आंख से देख लेवे। जब हम पर उस की चोरी

---

१. माघ शुक्ल ९, सं० १९३७।	२५

२. इस की सूचना पूर्ण सं० ५४९ के पत्र के अन्त में मिलती है।

३. मूल पत्र आर्यसमाज फर्रुखाबाद में था। उसी से १६ दिसम्बर १९२६ को म० मामराज जी ने इस की प्रतिलिपि की [पत्र पर तिथि या तारीख नहीं है]।

सिद्ध हो गई तो हम ने नालिश करने से पहिले चाहा कि उससे हिसाब समझ लेना अवश्य उचित है। इस प्रयोजन से हम ने अलीगढ़ पहुंच कर अपने आम मुखतार ठाकुर मुकुन्दसिंह और भूपालसिंह की मार्फत उस के पास २२ नवम्बर १८८०[1] को रजि-
५ ष्टरी चिट्ठी इस विषय की भिजवाई कि तुम आगरे में आकर स्वामी जी को हिसाब समझादो, कि उसकी रसीद भी हमारे पास **मौजूद है।** जब वह न आया तब बहुत बाट देखने के पश्चात् हमने उसके समय के सब रजिस्टरादि कागज यहां काशी से मंगाकर देखे। और उसको एक रजिस्टरी चिट्ठी इस विषय की १९ जन० १८८१[2]
१० को लिखी कि तुम एक सप्ताह **के अन्दर यहां आकर हिसाब समझा दो नहीं तो कारवाई जाबते की की जावेगी।** जिस का उत्तर २१ जन० का लिखा २४ जन०[3] को हमारे पास इस मजमून का आया कि आप मेरे रजिस्टर आदि सब कागजात काशी से मंगा लें तो मैं २९ जन० को आकर २ दिन में सब हिसाब समझा दूं। उसका
१५ उत्तर हमने २४ जन० को रजिस्टरी कराकर यह लिख भेजा कि **हम ने तुम्हारे सब कागजात काशी से १० जन० ही को मंगा लिये। तुम अवश्य २८ जन० को चले आओ।** उसका उत्तर नहीं भेजा। किन्तु गुम शुम लिखता है कि मुझको छुट्टी नहीं मिलती। शिवरात्री वा मई मास की छुट्टी में आकर हिसाब समझा दूंगा।
२० सो वह केवल दिन टला रहा है। उसके आने की आशा नहीं॥ उस के लिखने का विश्वास और ठीक ठिकाना नहीं है। अब हमने सब कागजात ला० गिरधरलाल वकील को सौंप दिये हैं। फिर हम ने उन से भी एक रजिष्टरी चिट्ठी उस के पास भिजवाई कि **जो अपना कल्याण चाहते हो तो अब भी आकर हिसाब समझा**
२५ **दो।** उसने उत्तर लिखा कि मैं बहुत चाहता हूं कि स्वामी जी से हिसाब का फैसला हो जावे, परन्तु छुट्टी न मिलने से मजबूर हूं। जो आप पञ्चायत करलें मुझे स्वीकार है। और लाला राम-शरणदास मेरठ वाले तथा मुंशी इन्द्रमणि साहब मुरादाबाद वाले मेरे पंच रहे। उसको फिर उत्तर लिखा कि **तुम अपने पंचों को**

---

३० १. मार्गशीर्ष कृष्ण ५, सोम०, १९३७।

२. माघ कृष्ण ४, बुध, सं० १९३७।

३. माघ कृष्ण ९, सोम०, सं० १९३७।

आगरे में लाओ वा आगरे में और किसी को पंच बध दो और स्टाम्प के कागज पर पंचायत का इकरार नामा लिखकर जल्दी भेज दो। अब देखिये कि क्या उत्तर लिखता है। जो वह यहां आ गया और पञ्चायत करके हिसाब का फैसला कर दिया तो अच्छा है, नहीं तो यह मामला अदालत में अवश्य जावेगा। आप फिर हम को कोई दोष न देना, क्योंकि **हम ने केवल परमार्थ और स्वदेशोन्नति के कारण अपने समाधि और ब्रह्मानन्द को छोड़ कर यह कार्य ग्रहण किया है।** और निम्नलिखित सज्जन पुरुषों ने इस प्रेस के लिये रुपया दिया है कि जिसकी बेबाकी भी अब तक नहीं हुई। जो बखतावरसिंह ऐसा अनिष्ट काम न करता तो देश की हानि न होती। जो सत्य पूछते हो तो यह वैदिक प्रेस इन्हीं योग्य पुरुषों की सहाय के वसीले से हुआ है कि जिनका विवेचन यह है।

आर्य्यसमाज फर्रुखाबाद	१८००)
,, मेरठ	४२८)
,, लाहौर	३५०)
,, देहरादून	२५)
,, दानापुर	१४)
राजा जयकृष्णदास जी	६००)
लाला ईश्वरदास स्यालकोट	२५)
लाला चूड़ामणि लुधियाना	५)
चौधरी जालिमसिंह रूपधनी	५०)
पं० सुन्दरलाल साहब इत्यादि	३००)

इन्हीं में से कई मनुष्यों के नाम वसीयतनामा भी है। **जो यह केवल हमारा ही धन होता तो कुछ पर्वाह न थी। परन्तु यह सब संसार का धन है।** फिर भी चोरी से लेना, सो यह कैसे पच सकता है। आप भी इस का उत्तर शीघ्र लिख भेजिये। और सेठ निर्भयराम जी से कह देना कि जब हम जयपुर जावेंगे तब आप को अवश्यमेव लिख भेजेंगे। **और हमने डेढ़ तोला सुर्मा पारसल कर के भेजा है। उसकी रसीद भेज दीजिये।** हम सब प्रकार से आनन्द में हैं। सब सभासदों को नमस्ते। और हमारा हिसाब भी उन से भिजवा देना।

[९ फरवरी १८८१][1] दयानन्द सरस्वती

—:०:—

[पूर्ण संख्या ५५२] **पत्र**

नं० ७०

लाला कालीचरण रामचरण जी आनन्दित रहो।[2]

विदित हो कि आप की चिट्ठी ९ ता० फ० १८८१ की लिखी नम्बरी ४०१ आज हमारे पास पहुंची। समाचार विदित हुआ। पण्डित सुन्दरलाल जी प्रयाग वालों ने खजानची होना और ऊपर की दृष्टि से सब यन्त्रालय का प्रबन्ध करना स्वीकार कर लिया है। और अनुमान है कि वे प्रेस को भी प्रयाग ही में अपने पास उठा मंगावेंगे। इसलिये अब वहां किसी खजानची की आवश्यकता नहीं है। सब प्रबन्ध वे ही स्वत: एव कर लेवेंगे। इस बात का निश्चय अब हुआ है। इसलिये खजानची के विषय में कुछ उत्तर नहीं लिखा था। और पण्डित प्रागदत्त के लिये भी अभी कुछ नहीं लिख सकते। यदि वे ज्वालादत्त की तरह शीघ्र लिखते होते तो हम उनको अपने पास रख लेते। और उन्होंने जो 'बालविवाह-खण्डन बनाया' सो बहुत उत्तम बात है॥

और जो पं० सुन्दरलाल जी खजानची के लिये लिखेंगे तो राधाकृष्ण के लिये लिखा जावेगा और परसों बखतावरसिंह के विषय में एक पत्र आपके पास भेजा गया है, पहुंचा होगा।[3] 'वह धूर्त्तता कर रहा है। और अब यह भी सिद्ध हो गया कि उस ने चोरी से अधिक पुस्तकें छपा कर बेच दीं। अब लाला गिरिधर-लाल जी वकील ने उसको नोटिस दिया है। देखिये वह आता है

---

१. पत्र पर तिथि नहीं दी गई। अगले [पूर्ण सं० ५५२ के] पत्र के अन्तिम भाग से निश्चय होता है कि यह पत्र ९ फरवरी सन् १८८१ (माघ शुक्ल १० सं० १९३७) को लिखा गया था।

२. मूल पत्र आर्यसमाज फर्रुखाबाद में था। उसी से दिसम्बर सन् १९२९ को म० मामराज जी ने इस की प्रतिलिपि की।

३. पूर्ण संख्या ५५१ पर छपा पत्र।

४. यहां से आगे का पाठ फर्रुखाबाद के इतिहास (पृ० १८९) में नहीं है।

लेखक का जीवन-परिचय

नाम– म० म० पण्डित युधिष्ठिर मीमांसक।

जन्म– २२ सितम्बर, सन् १९०९ ई०।

जन्मस्थान– विरकच्यावास (विरञ्च्यावास), अजमेर (राजस्थान)।

शिक्षा– प्रारम्भिक शिक्षा पाँचवीं तक जन्मस्थान पर, तत्पश्चात् 'विरजानन्द आश्रम' हरदुआ गंज, अलीगढ़ आदि स्थानों पर पण्डित ब्रह्मदत्त जी जिज्ञासु आदि विद्वानों के सान्निध्य से सम्पूर्ण वैदिक वाङ्मय का गम्भीर अध्ययन।

अध्यापन– विरजानन्द आश्रम (लाहौर, वाराणसी, बहालगढ़), महर्षि दयानन्द स्मारक महाविद्यालय (टंकारा), पाणिनीय संस्कृत सान्ध्य महाविद्यालय (भुवनेश्वर, उड़ीसा) तथा अन्य अनेक स्थलों पर भी स्वतन्त्र रूप से अध्यापन कार्य एवं रामलाल कपूर ट्रस्ट के प्रधान पद पर रहते हुए आजीवन कुशल सञ्चालन किया।

लिखित ग्रन्थ– संस्कृत व्याकरण शास्त्र का इतिहास (दो भाग), वैदिक-स्वरमीमांसा, वैदिक-छन्दोमीमांसा, वैदिक-सिद्धान्तमीमांसा, श्रौत-यज्ञ-मीमांसा आदि अनेक महत्त्वपूर्ण ग्रन्थों का लेखन।

सम्पादित ग्रन्थ– निरुक्त-समुच्चयः, भागवृत्ति-संकलनम्, दशपाद्युणादिवृत्तिः (दो भाग), शिक्षा-सूत्राणि, क्षीरतरंगिणी, दैवम् (पुरुषकार-वार्त्तिकोपेतम्), काशकृत्स्न-धातुव्याख्यानम्, माध्यन्दिन-पदपाठः, महाभाष्यम् (हिन्दी-व्याख्या दो अध्याय पर्यन्त), ऋषि दयानन्द के पत्र और विज्ञापन (चार भाग) आदि अनेक महत्त्वपूर्ण ग्रन्थों का सम्पादन।

विशिष्ट सम्मान एवं पुरस्कार– सन् १९७७ ई० में भारत के राष्ट्रपति द्वारा 'राष्ट्रिय पण्डित', आर्यसमाज सान्ताक्रुज (मुम्बई) द्वारा सन् १९८५ ई० में ७५ सहस्र रुपये से सम्मानित, सन् १९९४ ई० में उत्तर प्रदेश संस्कृत अकादमी द्वारा एक लाख का 'विश्वभारती' पुरस्कार, स० सं० विश्वविद्यालय वाराणसी द्वारा 'महामहोपाध्याय' की उपाधि दी गई।

निधन– २८ जून सन् १९९४ ई०।